

पढ़ना है समझना

पढ़ने की प्रक्रिया से
संबंधित लेखों का संकलन

पढ़ना अनिवार्यतः अर्थ-निर्माण या समझ की प्रक्रिया है। पढ़ना अनिवार्यतः एक प्रकार की अंतःक्रिया है जो पाठ्य-वस्तु और पाठक के बीच होती है और संदर्भ से अपना आकार पाती है। ये संदर्भ हैं— पाठक का पूर्वज्ञान, अनुभव, अभिवृत्ति और समुदाय की भाषा जो सांस्कृतिक और सामाजिक रूप से अवस्थित है। पढ़ने की प्रक्रिया निरंतर अभ्यास, विकास और पैनेपन की माँग करती है। साथ ही, ‘पढ़ना’ सृजनात्मकता और आलोचनात्मक विश्लेषण की भी माँग करता है।

समझ के साथ पढ़ने और उद्देश्य के साथ लिखने के महत्वपूर्ण कौशलों के विकास की दृष्टि से कक्षा 1 और 2 महत्वपूर्ण चरण हैं। इसके लिए यह जरूरी है कि पढ़ने-लिखने के लिए अवसर जुटाए जाएँ और एक सक्षम माहौल बनाया जाए।

पढ़े भारत बढ़े भारत (2014)

मानव संसाधन विकास मंत्रालय

शिक्षा मंत्रालय (अब)

भारत सरकार

पढ़ना है समझना

पढ़ने की प्रक्रिया से संबंधित लेखों का संकलन

विद्यया ऽ मृतमश्नुते



एन सी ई आर टी
NCERT

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

13174 – पढ़ना है समझना

पढ़ने की प्रक्रिया से संबंधित लेखों का संकलन

ISBN 978-93-5292-081-5

प्रथम संस्करण

दिसंबर 2021 आग्रहायण 1943

PD 5T RPS

© राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और
प्रशिक्षण परिषद्, 2021

₹ 70.00

80 जी.एस.एम. पेपर पर मुद्रित।

सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण
परिषद्, श्री अरविंद मार्ग, नयी दिल्ली 110 016 से
प्रकाशित तथा जगदंबा ऑफ़सेट, 374, नांगली
शकरावती इंडस्ट्रियल एरिया, नजफगढ़, नयी
दिल्ली- 110 043 द्वारा मुद्रित।

सर्वाधिकार सुरक्षित

- प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना इस प्रकाशन के किसी भाग को छापना तथा इलेक्ट्रॉनिकी, मशीनी, फोटोप्रतिलिपि, रिकॉर्डिंग अथवा किसी अन्य विधि से पुनः प्रयोग पद्धति द्वारा उसका संग्रहण अथवा प्रचारण वर्जित है।
- इस पुस्तक की बिक्री इस शर्त के साथ की गई है कि प्रकाशन की पूर्व अनुमति के बिना यह पुस्तक अपने मूल आवरण अथवा जिल्द के अलावा किसी अन्य प्रकार से व्यापार द्वारा उधारी पर, पुनर्विक्रय या किराए पर न दी जाएगी, न बेची जाएगी।
- इस प्रकाशन का सही मूल्य इस पृष्ठ पर मुद्रित है। खड़ की मुहर अथवा चिपकाई गई पर्ची (स्टिकर) या किसी अन्य विधि द्वारा अंकित कोई भी संशोधित मूल्य गलत है तथा मान्य नहीं होगा।

एन. सी. ई. आर. टी. के प्रकाशन प्रभाग के कार्यालय

एन.सी.ई.आर.टी. कैम्पस

श्री अरविंद मार्ग

नयी दिल्ली 110 016

फ़ोन : 011-26562708

108 ए 100 फीट रोड

हेली एक्सप्रेसवे, होम्डेकेरे

बनाशंकरा III इस्टेज

बेंगलुरु 560 085

फ़ोन : 080-26725740

नवजीवन ट्रस्ट भवन

डाकघर नवजीवन

अहमदाबाद 380 014

फ़ोन : 079-27541446

सी.डब्ल्यू.सी. कैम्पस

निकट धनकल बस स्टॉप पिनहटी

कोलकाता 700 114

फ़ोन : 033-25530454

सी.डब्ल्यू.सी. कॉम्प्लेक्स

मालीगाँव

गुवाहाटी 781021

फ़ोन : 0361-2676869

प्रकाशन सहयोग

अध्यक्ष, प्रकाशन प्रभाग : अनूप कुमार राजपूत

मुख्य संपादक : श्वेता उप्पल

मुख्य उत्पादन अधिकारी : अरुण चितकारा

मुख्य व्यापार प्रबंधक : विपिन दिवान

संपादन सहायक : ऋषि पाल सिंह

उत्पादन अधिकारी : अब्दुल नईम

आवरण सज्जा

ब्लू फ़िनिश डिजाइन्स

प्रस्तावना

पढ़ना शैक्षणिक अध्ययन, व्यावसायिक सफलता और व्यक्तिगत विकास का अभिन्न अंग है। शिक्षाशास्त्रीय साहित्य में पढ़ना को स्कूली शिक्षा के शुरुआती वर्षों के दौरान एक विशिष्ट विकासात्मक क्षेत्र के रूप में पहचाना जाता है। अभी तक आनंद के लिए पढ़ना वास्तविक शैक्षिक लक्ष्य की तुलना में एक सैद्धांतिक अवधारणा के रूप में अधिक रहा है। लाखों बच्चे हर साल पढ़ना सीखते हैं, लेकिन उनमें से बड़ी संख्या में स्थायी पठन कौशल हासिल करने में असफल रहते हैं। आनंद के लिए पढ़ना स्कूली पाठ्यचर्या में निष्क्रिय रूप में ज्यों का त्यों बना हुआ है।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा- 2005 इस बात पर जोर देती है कि प्राथमिक विद्यालयी वर्षों के दौरान पढ़ने के कौशल पर ध्यान केंद्रित किया जाए, जिससे एक प्रिंट-समृद्ध वातावरण का निर्माण किया जा सके। साथ ही पढ़ने को जीवनपर्यंत आदत के रूप में प्रोत्साहित करने के लिए प्रेरित किया जाए।

मानव संसाधन विकास मंत्रालय के एक प्रमुख कार्यक्रम *सर्व शिक्षा अभियान* के तत्वावधान में वर्ष 2007 में एनसीईआरटी में *रीडिंग डेवलपमेंट सेल* (आरडीसी) की स्थापना की गई थी। इस सेल की स्थापना के साथ-साथ राष्ट्रीय स्तर पर पिछले कई वर्षों में विशेष रूप से प्रारंभिक वर्षों में पढ़ना सीखने पर संवाद को अधिक प्रोत्साहन मिला है। शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा इस क्षेत्र को निरंतर मुख्य सरोकार के रूप में महत्त्व प्राप्त हुआ है। प्रकोष्ठ का निर्माण, देश भर से नीति निर्माताओं और पाठ्यक्रम डिजाइनरों का प्रारंभिक वर्षों में पढ़ने की शिक्षणशास्त्रीय तरीकों की ओर ध्यान आकर्षित करने के लिए एक महत्वपूर्ण प्रयास की शुरुआत का प्रतीक है।

प्रकोष्ठ द्वारा अनेक क्रियाकलाप संपादित किए गए हैं। पायलट परियोजना के एक भाग के रूप में मथुरा जिले में कक्षा 3 के बच्चों की पढ़ने की क्षमता का आकलन करने के लिए, आधारभूत सर्वेक्षण किया गया। परियोजना के एक भाग के रूप में प्रकोष्ठ, मथुरा में शिक्षकों को प्रशिक्षण दे रहा है और उन्हें पठन की प्रगतिशील शिक्षा से समृद्ध कर रहा है। पायलट प्रोजेक्ट में शामिल स्कूलों को कक्षा 1 और 2 को हिंदी में चयनित बाल साहित्य के दो सेट उपलब्ध कराए गए हैं। यह बाल साहित्य विद्यालयों के कक्षा 1 और 2 में विकसित किए जा रहे, 'पठन-कोना' का एक हिस्सा बन गया है। इसी तरह चयनित बाल साहित्य की सूची अंग्रेजी में भी विकसित की जा रही है। कक्षा 1 और 2 के बच्चों को स्वतंत्र एवं प्रेरक पाठक बनाने के लिए *कलर कोडेड* और *ग्रेडेड रीडिंग सीरीज बरखा* भी विकसित की गई है। शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों को बेहतर बनाने के लिए पठन पर *शिक्षक संदर्शिका* और *प्रशिक्षण संदर्शिका* का विकास किया गया है।

निर्मित सामग्री और संदर्भ क्षेत्र से प्राप्त अनुभवों को राज्यों के साथ साझा किया जा रहा है, ताकि उन्हें अपने राज्य में *रीडिंग सेल* शुरू करने में मदद मिल सके। बहुत जल्द इस विकास को सुगम बनाने के लिए, *रीडिंग डेवलपमेंट सेल* (आरडीसी) छोटे बच्चों के लिए, *फिरकी बच्चों* की शीर्षक नामक पत्रिका प्रकाशित कर रहा है।

रीडिंग फॉर मीनिंग पुस्तक में पढ़ना विषय पर आधारित शोधपरक लेख सम्मिलित हैं, जो पढ़ने की प्रक्रिया को अलग-अलग दृष्टिकोणों से देखते हैं, परंतु एक मूल बिंदु पर केंद्रित हैं और यह केंद्र बिंदु है— अवबोधन अथवा समझ। चयनित लेखों में उन शास्त्रीय लेखों को शामिल किया गया है, जो अपने-अपने समय में पढ़ने की सोच और समझ में क्रांति लाने में सक्षम रहे। शोधपरक लेखों ने पढ़ने की सोच और समझ में मूलभूत परिवर्तन को उजागर किया है।

परिषद्, केनेथ गुडमैन, पी. डेविड पियर्सन, शोभा सिन्हा, जूडिथ न्यूमैन, पीटर रसेल, एल्फ्रिडा एच. हाइवर्ट, लैन एजी विल्किंसन, फ्रैंक स्मिथ, जूडिथ स्कॉट, जी. ब्रायन थॉम्पसन को उनके लेख और शोध-पत्र प्रकाशित करने की अनुमति देने के लिए आभारी है।

परिषद्, कृष्ण कुमार प्रोफेसर एवं निदेशक, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान प्रशिक्षण परिषद् का विशेष आभार व्यक्त करती है। जिन्होंने इस संकलन के प्रकाशन के लिए विभिन्न चरणों पर अपना मार्गदर्शन प्रदान किया। इस संकलन के प्रकाशन के समन्वय का कार्य संध्या पेडनेकर, वरिष्ठ परामर्शदाता, रीडिंग डेवलपमेंट सेल ने किया। परिषद्, मीनाक्षी खार प्रोफेसर, भाषा विभाग द्वारा दिए गए सहयोग के लिए आभार व्यक्त करती है। साथ ही पुस्तक निर्माण कार्य में कंचन सेठी, देवी दयाल गौतम और अरीबाम अबेम देवी, प्रूफ सुधार के लिए *जूनियर प्रोजेक्ट फेलो*, नीलम चौधरी और अंशुल गुप्ता, *डीटीपी ऑपरेटर्स* और *ग्राफिक डिजाइन* के लिए मानसी सिन्हा से प्राप्त सहयोग के लिए आभार व्यक्त करती है। इस संकलन को ध्यानपूर्वक पढ़ने के लिए परिषद्, श्री गोबिंदराम, परामर्शदाता, *तकनीकी अनुभाग*, प्रकाशन विभाग का हार्दिक आभार व्यक्त करती है।

यह संकलन पढ़ने की प्रक्रिया की गहराई और पेचीदगियों को समझने में रुचि रखने वाले माता-पिता, शिक्षकों, शिक्षक प्रशिक्षकों— सभी के लिए है।

मंजुला माथुर
प्रोफेसर एवं अध्यक्ष
रीडिंग डेवलपमेंट सेल

पुस्तक के बारे में

रीडिंग फॉर मीनिंग को प्रकाशित हुए लगभग एक दशक हो चुका है। पिछले दस वर्षों में भारत में पढ़ने के संबंध में जिस तरह के बदलाव आए हैं, वे अपने आप में बहुत ही महत्वपूर्ण साक्ष्य हैं। सबसे महत्वपूर्ण बदलाव यह है कि पढ़ना के संबंधित मुद्दे, विशेष रूप से स्कूलों में पढ़ने की जो स्थिति है, उसे बहुत जल्दी ही संबोधित कर सुधार करने की आवश्यकता को पहचाना गया है।

यह अपने आप में एक महत्वपूर्ण तथ्य है कि पढ़ने का केंद्र बिंदु तुरंत ही शिक्षकों और शिक्षक-प्रशिक्षकों पर स्थानांतरित हो गया है। स्कूलों में पढ़ना सीखने को संबोधित करने के संदर्भ में शिक्षकों और शिक्षक-प्रशिक्षकों की भूमिका निःसंदेह महत्वपूर्ण है।

स्कूल में लाखों शिक्षक इस चुनौती का सामना करते हैं कि बच्चों को पढ़ना कैसे सिखाया जाए। चुनौती इस बात की भी है कि अपर्याप्त संसाधन सामग्री और सीखने की प्रक्रिया के बारे में अस्पष्ट और अधूरी समझ के साथ बच्चों को सार्थक तरीके से पढ़ना कैसे सिखाएँ।

इस पुस्तक में शोध-आधारित लेखों का संकलन है, जो पढ़ना के अर्थ, पढ़ने की प्रक्रिया और पढ़ना सीखने में सहायक सभी प्रयासों का लेखा-जोखा प्रस्तुत करते हैं, हालाँकि शोध-आधारित लेख भारतीय संदर्भ में नहीं हैं, फिर भी वे लेख पढ़ने के प्रति गहन विवेचनात्मक समझ बनाने में हमारी मदद करते हैं। शोभा सिन्हा और सोनिका कौशिक के लेख भारतीय संदर्भों में पढ़ना और पढ़ने की प्रक्रिया एवं सामग्री का पैना विश्लेषण करते हैं। शोध-आधारित लेखों की मुख्य बातों को व्यावहारिक कोण में इस्तेमाल करके देखा जा सकता है।

प्रारंभिक साक्षरता कार्यक्रम (पूर्व में रीडिंग डेवलपमेंट सेल) पिछले अनेक वर्षों से देशभर में शिक्षक-प्रशिक्षकों, शिक्षकों और सर्व शिक्षा अभियान के अधिकारियों के साथ पढ़ने की प्रक्रिया के बारे में एक सुविज्ञ समझ बनाने का प्रयास कर रहा है। शिक्षकों और शिक्षक-प्रशिक्षकों के साथ पढ़ने संबंधी स्पष्ट समझ को साझा करने के लिए दो महत्वपूर्ण ज़रिए हैं— एक, कार्यशालाओं के माध्यम से क्षमता-संवर्धन और दूसरा, रा.शै.अ.प्र.प. द्वारा प्रकाशित संसाधन सामग्री। पढ़ने की समझ, पढ़ने की दहलीज पर, पढ़ना सिखाने की शुरुआत, पढ़ना पर आधारित प्रमुख प्रकाशन हैं, इनमें अधिकतर शीर्षक, हिंदी और अंग्रेज़ी दोनों भाषाओं में उपलब्ध हैं। *रीडिंग फॉर मीनिंग* (जुलाई 2021) पुस्तक का हिंदी अनुवाद किया गया है, जिससे अधिक से अधिक पाठकों तक इसकी पहुँच संभव हो सके। पढ़ने से जुड़ी प्रकाशित सामग्री के अतिरिक्त शुरुआती वर्षों में लिखना के आधार पर एक पुस्तक का प्रकाशन किया गया है, जिसका शीर्षक है— *लिखने की शुरुआत— एक संवाद*। प्रारंभिक साक्षरता कार्यक्रम में पढ़ने का कोना, कक्षा में प्रिंट समृद्ध वातावरण, बरखा क्रमिक पुस्तकमाला और प्रारंभिक साक्षरता कार्यक्रम पर छोटी-छोटी पुस्तिकाओं और *विवरणिका* (ब्रोशर) का भी प्रकाशन किया गया है।

यह सामग्री प्रारंभिक साक्षरता को संक्षेप में समझने के लिए महत्वपूर्ण जानकारी देती है। शिक्षक एवं शिक्षक-प्रशिक्षकों के लिए प्रकाशित सामग्री के अतिरिक्त बच्चों के लिए सुंदर चित्रात्मक पोस्टर भी प्रकाशित किए गए हैं, जिन्हें कक्षा में प्रदर्शित किया जा सकता है। शुरुआती पाठकों के लिए हिंदी भाषा में प्रकाशित *बरखा* क्रमिक पुस्तकमाला का पंजाबी गुरुमुखी, कोंकणी, मराठी, उर्दू और संस्कृत में अनुवाद किया गया है। भारत की बहुभाषिकता को ध्यान में रखते हुए यह प्रयास किया गया है कि बच्चों के लिए उनकी भाषाओं में अधिक से अधिक रोचक और पढ़ने का आनंद देने वाली सामग्री का विकास किया जाए। परिषद् द्वारा छोटे बच्चों के लिए, विशेष रूप से कक्षा एक और दो के लिए एक द्विभाषिक पत्रिका का भी प्रकाशन किया जाता है, जिसका शीर्षक है— *फिरकी बच्चों की*। (इस पत्रिका) के अब तक के अंकों को आप पढ़कर प्रेषण का आनंद ले सकते हैं। साथ ही विशेष रूप से बच्चों के लिए कविताओं का एक चित्रात्मक संकलन भी प्रकाशित किया गया है, जिसका शीर्षक है— *अम्माँ हम भी साथ चलें*। बच्चे इन कविताओं को गाने-गुनगुनाने का आनंद ले सकते हैं। प्रारंभिक साक्षरता कार्यक्रम की अधिकतर संसाधन सामग्री रा.शै.अ.प्र.प. की वेबसाइट पर भी उपलब्ध है।

हम ऋषिकेश सेनापति, प्रोफेसर एवं पूर्व निदेशक, रा.शै.अ.प्र.प., का सहृदय से धन्यवाद ज्ञापित करते हैं, जिनके मार्गदर्शन में *रीडिंग फॉर मीनिंग* के संशोधित संस्करण का प्रकाशन संभव हो सका। हम अनूप कुमार राजपूत, प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष, प्रकाशन प्रभाग एवं पूर्व विभागाध्यक्ष, प्रारंभिक शिक्षा विभाग का भी आभार व्यक्त करते हैं, जिन्होंने संशोधित संस्करण के प्रकाशन में अपना पूर्ण सहयोग दिया। आशा है कि यह पुस्तक बच्चों के पढ़ना-लिखना सीखने में एक सही और बेहतर समझ बनाने में मदद करेगी। पुस्तक के प्रथम संस्करण के अवलोकन में प्राप्त सहयोग के लिए दीप्ति चावला का भी आभार व्यक्त करते हैं।

रीडिंग फॉर मीनिंग के प्रथम और संशोधित संस्करण के संपादन के लिए सोनिका कौशिक, वरिष्ठ परामर्शदाता, प्रारंभिक साक्षरता कार्यक्रम, रा.शै.अ.प्र.प. का विशेष रूप से धन्यवाद ज्ञापित करते हैं। पढ़ना और पढ़ना से जुड़े अनेक महत्वपूर्ण मुद्दों के बारे में सोनिका कौशिक की जो शोध-आधारित स्पष्ट गहन समझ है, उसका लाभ देश भर के शिक्षकों और प्रशिक्षकों को पहुँचाने में प्रस्तुत पुस्तक मदद करेगी।

उषा शर्मा,
प्रोफेसर एवं कार्यक्रम समन्वयक
प्रारंभिक साक्षरता कार्यक्रम
प्रारंभिक शिक्षा विभाग

आभार

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, पढ़ना है समझना के (रीडिंग फॉर मीनिंग के) अनूदित रूप एवं समीक्षा के लिए— मंजूला माथुर, प्रोफेसर, सेवानिवृत्त रा.शै.अ.प्र.प.नयी दिल्ली; माधवी कुमार, प्रोफेसर, सेवानिवृत्त रा.शै.अ.प्र.प. नयी दिल्ली; पूर्वा भारद्वाज, स्वतंत्र अनुवादक, नयी दिल्ली; गणेश दास, स्वतंत्र अनुवादक, नयी दिल्ली; सावन, शोधार्थी, शिक्षा विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली; सुनीता मिश्रा, असिस्टेंट प्रोफेसर, इंस्टीट्यूट ऑफ होम इकनॉमिक्स, हौज़ खास, नयी दिल्ली; सारिका वशिष्ठ, स्वतंत्र अनुवादक, मंडावली, दिल्ली; प्राची अग्रवाल, व्याख्याता (अंग्रेज़ी) सर्वोदय कन्या विद्यालय, गाज़ीपुर, दिल्ली; ज्योति कोहली, असिस्टेंट प्रोफेसर, महर्षि वाल्मीकि कॉलेज ऑफ़ एजुकेशन दिल्ली, अरशद इकराम अहमद, असिस्टेंट प्रोफेसर, जामिया मिलिया इस्लामिया, दिल्ली; तान्या सूरी, वरिष्ठ परामर्शदाता, प्रारंभिक साक्षरता कार्यक्रम, रा.शै.अ.प्र.प., नयी दिल्ली; विनीता अरोड़ा, वरिष्ठ परामर्शदाता, प्रारंभिक साक्षरता कार्यक्रम, रा.शै.अ.प्र.प., नयी दिल्ली; श्रुति पाल; शोधार्थी, दिल्ली विश्वविद्यालय; शर्चेन्द्र आर्य, शोधार्थी, दिल्ली विश्वविद्यालय; शर्मिला यादव, असिस्टेंट प्रोफेसर, विश्वभारती, शांति निकेतन, पश्चिम बंगाल; अतुल शुक्ला, असिस्टेंट प्रोफेसर, जे.एन.पी.जी. कॉलेज, बांदा; प्रवीण कुमार, असिस्टेंट प्रोफेसर, स्कूल ऑफ़ एजुकेशन, मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, उत्तराखंड; अंचला पालीवाल, असिस्टेंट प्रोफेसर, विवेकानंद कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय; उत्कर्ष, शोधार्थी, दिल्ली विश्वविद्यालय; दीप्ति चावला, शिक्षिका, शिक्षा निदेशालय, दिल्ली; बीरेंद्र रावत, फ़िल्ड वर्कर, शिक्षाशास्त्र विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय का आभार व्यक्त करती है।

परिषद्, एन. एस. यादव, संपादक (सेवानिवृत्त) रा.शै.अ.प्र.प.; भाषा संपादन के लिए, ममता गौड़ संपादक (संविदा) एवं संपादन कार्य में सहयोग के लिए, अतुल गुप्ता, संपादकीय सहायक (संविदा), व रवि रंजन, प्रूफरीडर (संविदा) प्रूफरीडिंग के लिए, प्रकाशन प्रभाग, रा.शै.अ.प्र.प. का इस पुस्तक के निर्माण में दिए महत्वपूर्ण योगदान के लिए, आभार व्यक्त करती है। परिषद्, निशु जायसवाल, जूनियर प्रोजेक्ट फ़ेलो, प्रारंभिक साक्षरता कार्यक्रम और हरिदर्शन लोधी, गीतांजलि सागर, गीता एवं मसीहुद्दीन डी. टी. पी. ऑपरेटर, (संविदा), प्रारंभिक साक्षरता कार्यक्रम के प्रति भी विशेष आभार व्यक्त करती है।

शिक्षित बालिका
समाज की रचयिता



विषय-सूची

प्रस्तावना

iii

पुस्तक के बारे में

v

1. पठन— मनोभाषिक अनुमान लगाने का खेल —कैनेथ एस. गुडमैन 1

गुडमैन का यह उत्कृष्ट लेख, पढ़ने के दौरान की गई 'गलतियों' के संबंध में परिवर्तनकारी बात करता है। इसमें वह इस बिंदु पर बल देते हैं कि ये कथित 'गलतियाँ' पाठक के मस्तिष्क की कार्य-प्रणाली और उसके द्वारा पाठ को समझने के लिए प्रयोग किए जा रहे संकेत-तंत्रों को समझने के लिए झरोखे हैं।

2. स्कीमा सिद्धांत के लिए प्रवेशिका —पी. डेविड पियरसन 17

यह लेख, 'पढ़ने' के संदर्भ में 'स्कीमा' की अवधारणा को समझाता है। इस लेख में सिलसिलेवार तरीके से दृश्यात्मक सूचना से गैर-दृश्यात्मक सूचना, पाठ्यवस्तु से अर्थ तक पहुँचने की प्रक्रिया को स्पष्ट किया गया है।

3. अर्थ की पहचान —फ्रैंक स्मिथ 33

यह लेख, 'पठन' में अर्थ की भूमिका को रेखांकित करता है। यहाँ दृश्यात्मक सूचना से गैर-दृश्यात्मक सूचना तक और पाठ से अर्थ तक की यात्रा को क्रमबद्ध तरीके से बताया गया है।

4. स्कूलों में साक्षर बनना सीखना —शोभा सिन्हा 67

यह लेख, भारतीय प्राथमिक विद्यालयों में साक्षरता निर्देशों के प्रयोगों की समझ तक पहुँचने में सहायक, हिंदी प्रवेशिका का व्यवस्थित और सावधानीपूर्वक विश्लेषण प्रस्तुत करता है।

5. पढ़ने के बारे में —जूडिथ एम. न्यूमैन 78

इस लेख में उदाहरणों की सहायता से 'पठन' में गैर-दृश्यात्मक सूचना, पूर्वज्ञान, भाषिक संकेत-तंत्र आदि की भूमिका का वर्णन किया गया है।

6. पढ़ना कैसे सिखाया जाए —जी. ब्रायन थॉम्पसन 96

यह लेख, 'पठन' क्षेत्र के प्रमुख विकास की रूपरेखा को प्रस्तुत करता है। इस लेख में 'पठन' में स्पष्ट रूप से, क्या पढ़ाया जाए? इस बिंदु पर चर्चा की गई है।

7. पठन —सी. पीटर रस्सेल 108

यह लेख, पढ़ने की प्रक्रिया में शामिल पहलुओं पर विस्तार से चर्चा करता है। इस लेख के माध्यम से आँखों की क्रिया और पढ़ने के दौरान मस्तिष्क में दृश्यात्मक सूचना को संगृहीत करने के तरीके की जानकारी प्राप्त होती है।

8. पढ़ना किसे कहते हैं? —रिचर्ड सी. एंडरसन, एलफ्रीडा एच. हीबर्ट, 136
जूडिथ ए. स्कॉट, ए. जी. विल्किंसन

यह लेख, बहुत ही सरल एवं बोधगम्य तरीके से यह बताता है कि एक कुशल पठन क्या होता है। (पठन पर गठित आयोग के अन्य सदस्यों के सहयोग के साथ तैयार किया गया प्रतिवेदन)

9. पठन— संकेतों का सामंजस्य —सोनिका कौशिक 151

यह लेख, पठन के विश्लेषण में संकेतों के विश्लेषण की चर्चा करता है। संकेतों के विश्लेषण को अंग्रेजी में 'मिसक्यू एनेलिसिस' कहते हैं। 'मिसक्यू' शब्द का प्रयोग उन चूकों के लिए किया गया है, जिन्हें आमतौर पर पठन में की जाने वाली गलतियाँ मान लिया जाता है। यह लेख, कक्षा 3 के एक बेहतर और एक कमजोर पाठक के पठन को जाँचता है, इस बात का भी विश्लेषण करता है कि वे किन अलग-अलग तरीकों से पाठ को विकसित करते हैं और वे किस प्रकार पढ़ने के दौरान आने वाली चुनौतियों का सामना करते हैं।

1. पठन — मनोभाषिक अनुमान लगाने का खेल

—कैनेथ एस. गुडमैन*

अध्ययन के किसी भी क्षेत्र में पहले से मौजूद आम और सहज-सादी मान्यताओं को, विकसित होती वैज्ञानिक मान्यताओं के लिए रास्ता छोड़ना होगा। ऐसे पुराने विश्वास पढ़ने की प्रक्रिया से संबंध रखने वाले साहित्य को उलझा देते हैं। ये मान्यताएँ, पढ़ने से संबंधित शोध में भाषा की आधुनिक अवधारणाओं और विचारों का प्रयोग करने से रोकती हैं। वे पढ़ना सिखाने से जुड़ी समस्याओं का हल निकालने में ऐसी अवधारणाओं का प्रयोग करने की कोशिशों को भटका देती हैं। असल में ऐसे सीधे-सादे विश्वास सहज समझ पर आधारित होते हैं और यही तथ्य उनके निरंतर बने रहने की प्रकृति की व्याख्या करता है। एक अनौपचारिक प्रेक्षक के लिए ये मान्यताएँ पढ़ने से संबंधित तथ्यों की व्याख्या करने या पूर्वानुमान लगाने में मदद करती हुई दिखाई देती हैं। यह लेख ऐसी ही एक मूल भ्रांति से संबद्ध है और एक बेहतर वैज्ञानिक विकल्प प्रस्तुत करता है।

इस लेख में, मैं इस आम मान्यता का खंडन करूँगा— *पढ़ना एक सुस्पष्ट प्रक्रिया है, इसमें अक्षरों, शब्दों, वर्तनी संरचना और भाषा की बड़ी इकाइयों का कुछ विस्तृत, अनुक्रमिक ज्ञान और पहचान सम्मिलित है।*

पढ़ने की स्वनिक (Phonic) केंद्रित पद्धतियों में अक्षर विशेष की पहचान करना प्रमुख होता है। शब्द केंद्रित पद्धतियों में शब्द की पहचान पर ध्यान जाता है। परिचित शब्द, ऐसे देखे-समझे शब्द (Sight words) हैं, जिन्हें किसी भी संदर्भ में पहचाना जा सकता है।

इसका मतलब यह नहीं है कि जिन लोगों ने 'पठन' के क्षेत्र में गहनता से कार्य किया है, वे इस बात से अवगत नहीं हैं कि 'पढ़ना' वास्तविक व अनुक्रमिक पहचान से कहीं अधिक है, लेकिन 'पढ़ने' को लेकर यह सामान्य धारणा उपयुक्त न होते हुए भी 'पढ़ने' की समझ को लेकर हो रहे विचार-विमर्श को लगातार प्रभावित करती रही है।

स्पाशे, 1964; इस सामान्य समझ का शाब्दिक रूप प्रस्तुत करते हुए कहते हैं कि 'अपने सरलतम रूप में, 'पढ़ने' को शब्द-प्रत्यक्षण अनुभूति की शृंखला के रूप में समझा जा सकता है। लिपिनकॉट (Lippincott) की शिक्षक संदर्शिका बेसिक रीडिंग में क्रेकन और वॉल्कट, 1063; में अक्षर-प्रति-अक्षर भेद करके पढ़ने की प्रक्रिया का समर्थन करते

*डिपार्टमेंट ऑफ़ लैंग्वेज, रीडिंग एंड कल्चर कॉलेज ऑफ़ एजुकेशन, यूनिवर्सिटी ऑफ़ ऐरिज़ोना, टक्सन, ऐरिज़ोना 852721

हुए कहा गया है— ‘संक्षेप में, उपर्युक्त तरीके को अपनाकर बच्चा आरंभ से ही शब्दों को उसी तरह देखना सीख जाता है, जिस प्रकार एक कुशल पाठक एक शब्द को सभी अक्षरों के साथ संपूर्णता में पढ़ता है।’

इस भ्रांति के स्थान पर मेरे अनुसार— ‘पढ़ना’ एक चयनात्मक प्रक्रिया है, जिसमें पाठक की अपेक्षाओं के आधार पर प्रत्यक्ष सामग्री से चुने हुए थोड़े बहुत उपलब्ध भाषा-संकेत शामिल होते हैं। पढ़ने की प्रक्रिया में जैसे-जैसे यह आंशिक जानकारी बढ़ती है, पढ़ने में ऐसे अस्थायी निर्णय भी लिए जाते हैं, जो उन्हें प्रमाणित भी करते हैं; नकारते भी हैं या परिवर्तित भी करते हैं।

बड़े सरल ढंग से कहें तो ‘पठन’ एक मनोभाषिक अनुमान लगाने का ‘खेल’ है, जिसमें विचार और भाषा की अंतःक्रिया शामिल है। कुशल पठन सही समझ और सभी अवयवों की पहचान के परिणामस्वरूप नहीं होता, बल्कि यह एक कौशल है, जिसके अंतर्गत पाठक सबसे उपयुक्त संकेतों को चुनता है और उनके आधार पर पहली ही बार में सटीक अनुमान लगाता है। निश्चय ही, पढ़ते समय जो देखा नहीं गया है, उसका पूर्वानुमान लगाने की योग्यता पढ़ने की प्रक्रिया में ठीक उसी तरह महत्वपूर्ण है, जैसे जो सुना नहीं गया है उसका पूर्वानुमान लगाने की योग्यता ‘सुनने’ में महत्वपूर्ण है।

मौखिक रूप से पढ़ रहे अपेक्षाकृत एक कुशल बाल पाठक का उदाहरण लें। पाठक चौथी कक्षा का विद्यार्थी है, जो छठी कक्षा की प्रारंभिक पाठ्यसामग्री हेयज, 1963; से ली गई एक कहानी का शुरुआती अनुच्छेद पढ़ रहा है—

hoped © a

So education it was! I ^{opened} the dictionary and picked out a word that sounded ^s good. ^{Ph} ‘Phil/oso/phi/cal!’ + ^{He} yelled. Might what it means 1.Phizo 2.Phiso/sophical as well study word meanings first. “^{Philosophical}: showing calmness his 1.fort 2. future 3. futshion and courage in the face of ill fortune”. I mean I really yelled it. I guess a fellow has to work off steam once in a while.

If it bothers you to think of it as baby sitting, my father said, 'then don't think of it as baby sitting. Think of it as homework. Part of your education. You just happen to do your studying in the room where the baby brother is sleeping, that's all. He helped my mother with her coat, and then they were gone.

उसने यह कहानी पहले नहीं पढ़ी थी। सोच-समझकर उसे कुछ कठिन कहानी पढ़ने को दी गई। उसकी पढ़ने की प्रक्रिया के बारे में हमारी समझ मुख्य रूप से उसके द्वारा की गई त्रुटियों से बनी है, जिन्हें मैं, मूल्य आँकने संबंधी निहितार्थों से बचने के क्रम में 'अपसंकेत या चूकें (Miscues), ऐसे संकेत जो वास्तविक अर्थ से अलग हों' कहना पसंद करूँगा। उसकी अपेक्षित प्रतिक्रियाएँ उसके सीखने की प्रक्रियाओं को छिपा देती हैं, लेकिन उसकी अनपेक्षित प्रतिक्रियाएँ भी उसी प्रक्रिया का परिणाम हैं, हालाँकि उन्हें सफलता से लागू नहीं किया गया। अपेक्षित प्रतिक्रिया से उनके भटकाव का ढंग ही इस बात को उजागर करता है।

मैं, सामान्य समझ के इस दृष्टिकोण को खारिज करता हूँ कि ऐसे सभी भटकावों को त्रुटियाँ भर मानना चाहिए। इससे भी अधिक इस दृष्टिकोण का मानना है कि एक त्रुटि या तो यह दर्शाती है कि पाठक को कहीं-कहीं कुछ मालूम नहीं है या फिर वह अपने ज्ञान का उपयोग करने में थोड़ा लापरवाह रहा है। उदाहरण के लिए, पहले अनुच्छेद में 'your' के स्थान पर 'The' लगाने का अर्थ होना चाहिए कि बच्चा लापरवाह था, क्योंकि उसने उसी वाक्य में पहले ही 'Your' और 'The' को सही-सही पढ़ लिया था। इसका यह निहितार्थ है कि हमें बच्चे से यह बात कहनी चाहिए कि उसे पढ़ते समय अधिक ध्यान देने की ज़रूरत है, यानी उसे प्रत्येक शब्द या अक्षर को अधिक स्पष्ट रूप से पहचानना सीखना चाहिए।

खैर, अब इसी उदाहरण को उस नज़रिए से देखते हैं जो मैंने सुझाया है कि किस प्रकार की सूचना, इस स्थिति में अस्थायी रूप से 'The' को चुनने के निर्णय की ओर ले जाती है, न कि उस निर्णय को खारिज करने या स्वीकार करने की ओर। स्वाभाविक है कि 'Your' और 'The' के बीच बनावट को लेकर कोई ग्राफ़िक (Graphic) संबंध नहीं है। शायद हो सकता है कि उसने 'The' को अपनी दृष्टि-सीमा के भीतर से ही चुना हो, लेकिन 'The' और 'your' के बीच बनावट को लेकर एक महत्वपूर्ण गैर-ग्राफ़िक संबंध है। दोनों का एक जैसा ही व्याकरणिक प्रकार्य है। मेरी शब्दावली में ये संज्ञासूचक 'चिह्न' हैं। या तो पाठक ने संज्ञासूचक चिह्न का पहले से ही अनुमान लगा लिया होगा और लिखित सूचना

को अनदेखा करते हुए किसी एक का प्रयोग किया होगा या उसने 'your' के लिखित रूप व आकार को अनदेखा कर, उसे उसके व्याकरण के संकेत के रूप में प्रयोग किया होगा, चूँकि अस्थायी विकल्प के रूप में 'The' न तो अनुच्छेद के अर्थ को और न ही उसके व्याकरण को भंग करता है, इसलिए उसे अस्वीकार करने और सुधारने का कोई कारण नहीं है। यह व्याख्या, अगले अनुच्छेद में दिए गए दो समान अपसंकेतों से प्रमाणित होती दिखती है। 'A' और 'His' दोनों का 'The' के विकल्प के रूप में प्रयोग किया गया है। दोनों को ही सुधारा नहीं गया, हालाँकि 'His' का विकल्प शब्दकोशीय परिभाषा में प्रयुक्त हुए विशिष्ट मुहावरे, 'इन द फ़ेस ऑफ़ इल फ़ॉरच्यून' के अर्थ को बदल देता है, जिसका पाठक के लिए वैसे भी प्रत्यक्ष रूप से कोई विशेष अर्थ नहीं बनता है।

फिलहाल इसका निष्कर्ष यह है कि बच्चा अपने अस्थायी निष्कर्षों तक पहुँचने के लिए संज्ञासूचक चिह्न का प्रयोग व्याकरणिक और दृश्यात्मक दोनों तरह की सूचनाओं के रूप में करता है। कुल मिलाकर दस पृष्ठों की इस कहानी (जिसके कुछ अंशों की चर्चा पीछे की गई है) को पढ़ने के दौरान, उसने संज्ञासूचक बीस चिह्न बदले, छह शब्द हटाए और दो नए शब्द शामिल किए। उसने अपने द्वारा बदले गए चार शब्दों को फिर से संशोधित किया और एक को हटा दिया। इसी प्रकार के अपसंकेतों में अन्य 'कार्यकारी शब्द', जैसे— सहायक क्रियाएँ और विभक्तियाँ भी शामिल थीं। वह जो पढ़ रहा है, उसके अर्थ पर ये अपसंकेत बहुत कम प्रभाव डालते दिखाई देते हैं। उनके बार-बार आने के बावजूद, उन्हें हटा देने से बच्चे के पढ़ने की प्रक्रिया में कोई उल्लेखनीय सुधार नहीं होगा। हर शब्द की ठीक-ठीक पहचान पर ज्यादा जोर देने से हो सकता है कि यह पाठक को व्याकरणिक जानकारी तलाशने से रोक दे और वह केवल ग्राफ़िक जानकारी का ही प्रयोग करे।

'Open' के स्थान पर 'Hoped' शब्द के प्रयोग को भी अक्षरों की पहचान में लापरवाही और अस्पष्टता के रूप में समझा जा सकता है, लेकिन यदि हम इस सामान्य समझ की व्याख्या से आगे थोड़ा गहराई में जाएँ तो हम पाते हैं कि— 1. दोनों ही क्रियाएँ हैं और 2. दोनों शब्दों में स्पष्ट ग्राफ़िक समानताएँ भी हैं। इसके अतिरिक्त इसमें पाठक की फ्रेंच-कैनेडियन द्विभाषिक पृष्ठभूमि के प्रमाण भी मिलते हैं, जैसा कि बाद के अपसंकेतों से स्पष्ट है ('Arms' की जगह 'Harms', 'Chuckled' के स्थान पर 'Shuckled', 'Choose' के लिए 'Shoose', 'Chair' के स्थान पर 'Shair')। इन अपसंकेतों के सुधारने के लिए या तो दिखाई दे रहे ग्राफ़िक संकेतक के आधार पर लिए गए अस्थायी चुनाव को तुरंत नकारा जा सकता है या यह पहचान करवाकर कि यह विकल्प शेष वाक्य

को अर्थ प्रदान नहीं कर रहा, उसे छोड़ा जा सकता है। 'I hoped a Dictionary...' इसका कुछ अर्थ नहीं बनता (यह अर्थ-निरूपण के लायक नहीं है)। यदि आप ठीक समझें तो हर हाल में, पाठक अपनी उस प्रक्रिया को प्रदर्शित करता है, जिसके द्वारा वह लगातार अपने अनुमानों या संभावित विकल्पों की जाँच करता है।

'Sounded' के स्थान पर 'Sounds' का प्रयोग किया गया, लेकिन दोनों शब्दों में अंतर शब्दों के केवल आखिरी हिस्से में ही आता है। हमारी सामान्य समझ इस निष्कर्ष पर पहुँच सकती है कि बच्चा शब्दों के अंत पर ध्यान नहीं देता, शब्दों के अंत का अस्पष्ट उच्चारण करता है या फिर वह लापरवाह है, लेकिन अन्य शब्दों के अंतिम हिस्से को लेकर ऐसी स्थिति नहीं है। वस्तुतः बच्चा एक विभक्ति प्रधान अंतिम अक्षर को दूसरे विभक्ति प्रधान अंतिम अक्षर से अदल-बदल लेता है। ऐसा करते हुए वह दो बातें प्रदर्शित करता है— 1. मूल एवं विभक्ति प्रधान प्रत्ययों को अलग-अलग करने की अपनी योग्यता और 2. व्याकरणिक संकेतकों या चिह्न के रूप में विभक्ति प्रधान अंतिम अक्षरों का उसके द्वारा प्रयोग। पुनश्च: उसने ऐसे अपसंकेतों में सुधार नहीं किया है, जो व्याकरणिक और अर्थ दोनों ही दृष्टि से स्वीकार्य हैं।

यहाँ 'I' के स्थान पर 'He' का प्रयोग सर्वनाम परिवर्तन के लिए सर्वनाम के रूप में अर्थ को बदलता है, हालाँकि पहला शब्द 'I' थोड़ा अस्पष्ट जरूर है, लेकिन अर्थ की विसंगति सरलता से दिखाई नहीं पड़ती है। जब हम इसकी जाँच करते हैं कि पाठक ने 'Might as well study word meaning first' वाक्य के साथ क्या किया, तो हम देखते हैं कि 'स्पष्ट क्रमिक पहचान का मॉडल' पढ़ने की प्रक्रिया के अनुकूल नहीं बैठता है। अनिवार्य रूप से इस पाठक ने 'अर्थ' के लिए ग्राफ़ीय सामग्री को अक्षरों की बनावट के आधार पर 'डिकोड' (Decode) किया और फिर रूपांतरित व्याकरण और परिवर्तित शब्दावली के साथ, मौलिक अर्थ को रखते हुए अर्थ के मौखिक रूप को 'एनकोड' (Encode) किया। संभवतः जब उसने शब्द के अर्थ को 'एनकोड' किया, तब वह पहले से ही सूची में दर्ज शब्दों पर काम कर रहा था, जहाँ अस्थायी चयन की अच्छी गुंजाइश थी पर उसमें कोई सुधार नहीं किया गया।

यहाँ ऐसे दो उदाहरण दिए गए हैं, जिसमें पाठक अपरिचित शब्दों पर काम कर रहा है। इन अपसंकेतों में वह अपनी रणनीतियों और योग्यताओं की एक स्पष्ट तसवीर प्रस्तुत करता है, हालाँकि दोनों में ही वह असफल रहा है। 'Philosophical' शब्द पढ़ने के लिए किए गए अपने कई प्रयासों में उसका सबसे पहला प्रयास अधिक उपयुक्त है। संयोग

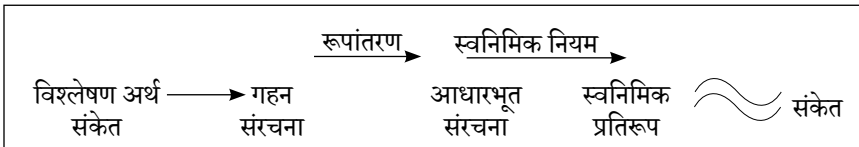
से, वह यहाँ दिखाता है कि वह जब चाहे स्वनिक अक्षर-ध्वनि संयोजनों का प्रयोग कर सकता है। बाद के प्रयासों में वह इस ध्वनि संयोजन से आगे जाकर अन्य संभावनाओं की तलाश करता है, जैसे कि ऐसा कुछ खोजने का प्रयास कर रहा हो, जो कम से कम मिलता-जुलता तो सुनाई दे। यह दिलचस्प है कि यहाँ उसके पास एक परिभाषा तो है, लेकिन साथ काम करने का कोई संदर्भ नहीं है। 'Philosophical' शब्द की रोचकता यह है कि वह कहानी में कई बार आता है। आगे के प्रयासों में बच्चे ने इस शब्द को इस प्रकार बोलने का प्रयास किया है— 'Physica', 'Physicacol', 'Physical', 'Philosovigul', 'Phizzlesovigul', 'Phizzo', 'Sorigul', 'Philazophgul'। उसके पास जो स्वनिम जानकारी है, उसी में कुछ फेरबदल करते हुए वह गोल-गोल घूमता दिखाई देता है। 'Fortune' शब्द को पढ़ने के लिए किए गए उसके तीन असफल प्रयास इसी प्रक्रिया को दर्शाते हैं। ज़ाहिर है कि दोनों शब्द पाठक के लिए अपरिचित हैं। वह वास्तव में ऐसे किसी शब्द को नहीं पहचान सकता जो उसने पहले न सुना हो। ऐसे मामलों में जब तक संदर्भ या संदर्भों में शब्दों के अर्थ को सीमित न किया जाए, पाठक शब्दों से उनके अर्थ निकाल नहीं पाता है। यह ज़रूर है कि कुछ मामलों में पाठक भले ही शब्द को ठीक-ठीक पहचान न पाए (यदि वह किसी परिचित शब्द के उच्चारण से मिलता-जुलता हो) या सही उच्चारण न कर पाए, मगर शब्द की सही-सी समझ तो बना ही लेता है। पाठक इसी प्रक्रिया का अनुसरण करते हुए कहानी में बार-बार आए शब्द 'Typical' को हर बार 'Topical' पढ़ता है। पूरा पाठ पढ़ लेने के बाद पाठ के बारे में उसकी समझ को जाँचने पर पता चला कि वह इस शब्द का अर्थ ठीक से जानता था। किसी भी वयस्क पाठक के साथ ऐसा होना जानी-पहचानी बात है। हममें से सभी के पास अपनी पठन शब्दावली में कई सुपरिभाषित शब्द होते हैं, जिनका उच्चारण या तो हम गलत ढंग से करते हैं या उनका प्रयोग मौखिक रूप से नहीं करते हैं।

मैंने इस पाठक के मौखिक पठन के उदाहरण का प्रयोग इसलिए नहीं किया है कि उसने जो किया वह सभी पाठकों या उसके हमउम्र पाठकों की भी खासियत है, बल्कि यह दर्शाने के लिए किया है कि वह किस प्रकार अपसंकेतों का इस्तेमाल करते हुए पढ़ने की प्रक्रिया में मनोभाषिक अनुमान लगाने के खेल खेलता है। अन्य पाठकों के अपसंकेत भी इसी प्रकार की समानताएँ और असमानताएँ दर्शाते हैं, लेकिन सभी एक चयनात्मक, अस्थायी, प्रत्याशित प्रक्रिया की ओर संकेत करते हैं, जो असल में सामान्य रूप से समझी जाने वाली सुनिश्चित और क्रमिक पहचान की प्रक्रिया से अलग है।

आइए, अब उन घटकों पर करीब से नज़र डालें, जिनका मनोभाषिक अनुमान लगाने के खेल में पाठक बड़ी चतुराई से प्रयोग करता है।

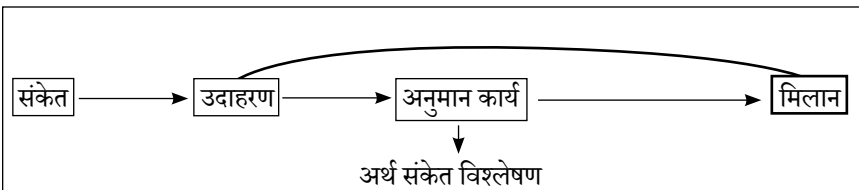
स्वाभाविक है कि पाठक के पास हमेशा अपने संपूर्ण अनुभव, अपनी भाषा और विकासशील विचार तो होते ही हैं और जिनका प्रयोग वह किसी भी समय पढ़ते हुए करता रहता है। इस स्व-प्रमाणित तथ्य को बताने की ज़रूरत इसलिए है, क्योंकि किसी भी प्रकार का अनुमान लगाते हुए जो स्वाभाविक दिखता है, वह वास्तव में इतनी अच्छी तरह सीखे गए ज्ञान का परिणाम होता है कि इसके उपयोग की प्रक्रिया में थोड़े ही सचेत प्रयत्न की ज़रूरत पड़ती है। बहुत से भाषा-प्रयोग इस स्वचालित व स्वाभाविक स्तर तक पहुँच चुके हैं। हम में से बहुत से लोग यह नहीं समझ पाते कि भाषा की ‘एनकोडिंग’ व ‘डिकोडिंग’ में व्याकरण का प्रयोग हम किस प्रकार करते हैं। फिर भी भाषा का प्रयोग करने वाले सभी लोग अपनी रोज़मर्रा की बोल-चाल में वाक्य-विन्यास में उच्च श्रेणी की कुशलता व प्रवीणता दर्शाते हैं।

चॉम्स्की, 1965; ने भाषा बोलने वालों द्वारा वाक्य-प्रस्तुति (Sentence Production model) का एक मॉडल सुझाया है—



आकृति 1.2

चॉम्स्की के अनुसार श्रोता का वाक्य-निवर्चन मॉडल (Sentence interpretation model) की संरचना इस प्रकार है—



आकृति 1.3

अतः चॉम्स्की के विचार में, भाषा में ‘एनकोडिंग’ कमोबेश कम या ज़्यादा एक सटीक स्तर तक पहुँच जाती है और इसके परिणामस्वरूप जो संकेत मिलता है वह अपने आप में पूरा होता है, लेकिन ‘डिकोडिंग’ में निदर्शन की प्रक्रिया का लक्ष्य, संदेश के लगभग समीप पहुँचना होता है, जिसके परिणामस्वरूप मिलने वाला कोई भी ‘कोडेड’ या मिलता-जुलता संकेत एक प्रकार का प्रति-उत्पाद होता है।

मुखर वाचन के समय पाठक को एक ही समय पर दो कार्य करने होते हैं। उसे पाठ को इस प्रकार मौखिक रूप से पढ़ना होता है कि वह पाठ के छपे हुए संस्करण के समतुल्य हो। जिसे 'पढ़ने' के संदर्भ में 'संकेत' कहेंगे और साथ ही वह जो कुछ भी पढ़ रहा है, उसके अर्थ का पुनर्निर्माण भी करे। मोटे तौर पर चॉम्स्की के निर्वचन मॉडल में मिलान की प्रक्रिया को मैं, 'रिकोडिंग संक्रिया' (Recoding operation) कहना चाहूँगा। पाठक 'कोडेड' ग्राफ़ीय निवेश को एक स्वनिमिक या मौखिक 'आउटपुट' के रूप में 'रिकोड' (Recode) करता है। इस प्रक्रिया में प्रायः अर्थ किसी सीमा तक शामिल नहीं होता। यह 'रिकोडिंग' (Recoding) किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा भी सीखी जा सकती है, जो उस भाषा विशेष को बिलकुल भी नहीं जानता हो। उदाहरण के लिए, एक बार—मिट्जवाह बालक यह समझने की क्षमता के बगैर कि वह क्या उच्चारित कर रहा है, 'हिब्रू लिपि' (Hebrew Script) का मौखिक उच्चारण तो कर सकता है, लेकिन हिब्रू लिपि को सीखने के लिए हिचकिचा सकता है, लेकिन जब पाठक, लेखक की रचना के अर्थ के पुनर्निर्माण के लिए अर्थसंगत विश्लेषण में जुट जाता है, तभी वह 'डिकोड' कर रहा होता है।

मुखर वाचन में इन दो संक्रियाओं के लिए तीन तार्किक व्यवस्थाएँ (Logical Possible arrangements) होती हैं। पाठक मौखिक भाषा के रूप में ग्राफ़िक निवेश (सूचनाओं) में 'रिकोड' कर सकता है और फिर 'डिकोड' भी। वह साथ-साथ 'रिकोड' और 'डिकोड' कर सकता है या फिर वह पहले 'डिकोड' कर, मौखिक 'आउटपुट' के रूप में अर्थ को 'एनकोड' कर सकता है।

मेरे, अभी तक के शोध के आधार पर ऐसा प्रतीत होता है कि ऐसे पाठक जो पढ़ने में कुछ सीमा तक निपुणता हासिल कर चुके हैं, वे चॉम्स्की के प्रतिदर्श मॉडल (देखें, आकृति 1.3) के समान ही सीधे ग्राफ़िक उद्दीपकों को 'डिकोड' करते हैं और फिर उसे आधारभूत संरचना की मदद से 'एनकोड' करते हैं, जैसा कि चॉम्स्की के वाक्य-प्रस्तुति के मॉडल (देखें आकृति 1.2) में दर्शाया गया है। उनकी मौखिक भाषा का रूप ग्राफ़िक उद्दीपनों से सीधे संबंधित नहीं होता तथा इसमें शब्दावली और वाक्य-विन्यास में रूपांतरण शामिल हो सकते हैं, चाहे अर्थ वही रहे। यदि उन्होंने अर्थ को ठीक से नहीं समझा है तो वे इस बदले हुए या अधूरे अर्थ को ही मौखिक 'आउटपुट' के रूप में समझकर 'डिकोड' कर लेंगे।

एक सामान्य भ्रांति यह है कि दिए गए ग्राफ़िक निवेश को स्वनिम निवेश के रूप में सटीक और क्रमिक ढंग से 'एनकोड' किया जाता है और फिर थोड़ा-थोड़ा करके 'डिकोड' किया जाता है। इस धारणा के अनुसार अर्थ की मूल प्रकृति संचयी है, जो

टुकड़ा-टुकड़ा जुड़कर आकार ग्रहण करती है। दृश्य प्रत्यक्षण (Visual perception) अध्ययन भी इसी विचार का समर्थन करता प्रतीत होता है कि पढ़ते समय हमारा ध्यान एक निश्चित बिंदु पर केंद्रित होता है, जिसका विस्तार दोनों तरफ़ बहुत संकीर्ण होता है, चूँकि इस धारणा का मानना है कि पढ़ते समय हम जो अर्थग्रहण करते हैं, वह वही होता है, जिस पर नाक की सीध में हमारी दृष्टि केंद्रित होती है, जिसे हम 'नाक की सीध' (End of the nose) वाला दृष्टिकोण कह सकते हैं। माना जाता है कि यदि हम नाक की सीध में अपनी नज़र का ओर-छोर बढ़ा दें तो हमारे पढ़ने की गति व कुशलता बढ़ जाती है। ज़ाहिर है, यदि हम जल्दी-जल्दी नाक को आगे-पीछे करेंगे या नाक और आँखों को बार-बार पीछे पढ़े हुए पाठ पर ले जाएँगे तो उससे हमारी पढ़ने की कुशलता कम हो जाएगी।

यह दृष्टिकोण उस गति की, जिससे कोई औसत वयस्क पढ़ता है या उन असंख्य घटनाओं की जो उसके पढ़ने के दौरान घटित होती हैं, की कोई संभावित व्याख्या नहीं कर सकता है। उदाहरण के लिए यह दृष्टिकोण भला इस बात की व्याख्या कैसे कर सकता है कि एक प्रवीण वयस्क पाठक पढ़ते समय, बल्कि स्वयं के लिखे हुए को ही पढ़ते समय लिखित सामग्री की अशुद्धियों पर ध्यान नहीं देता या यह कैसे इसकी व्याख्या कर सकता है कि हमारा चौथी कक्षा का विद्यार्थी देख तो रहा है— 'Study word meanings first,' और कह रहा है—'Study what it means?'

पढ़ने के संदर्भ में 'नाक की सीध' वाला दृष्टिकोण बिल्कुल मान्य नहीं होगा। पाठक आधे इंच में छपे अक्षर पर ही केंद्रित होकर प्राप्त होने वाली जानकारी तक ही सीमित नहीं रहता है। वस्तुतः कई शोध कार्यों द्वारा यह दर्शाया गया है कि गहन रूप से दृष्टिबाधित बच्चे भी दूसरे सामान्य बच्चों की तरह पढ़ना सीखने में सक्षम होते हैं। पढ़ने की प्रक्रिया में पाठक एक नहीं, बल्कि एक साथ तीन तरह की जानकारियों का इस्तेमाल करते हैं। निश्चित ही ग्राफ़िक निवेश के बिना पठन नहीं हो सकता, लेकिन पाठक वाक्य-विन्यास (Syntactic) और अर्थविज्ञान (Semantic) की जानकारी का प्रयोग भी करता है। इस जानकारी के आधार पर पाठक लिखित प्रिंट में 'क्या आने वाला है?' इसका अनुमान तथा पूर्वानुमान लगाता है। फिर लगाए गए अपने अनुमान की पुष्टि वह अर्थविज्ञान और व्याकरण संबंधी जानकारी के आधार पर करता है। भाषा में शब्दाडंबर तथा क्रमिक रुकावटें, जिसे लेकर पाठक जो प्रतिक्रिया करता है, वह इस पूर्वानुमान को संभव बनाते हैं। यहाँ तक कि पाठक के दृष्टि-क्षेत्र के दायरे में आने वाली धुंधली एवं अस्पष्ट छवियाँ भी अनुमान को बढ़ावा देने या उनकी पुष्टि करने में सहायता कर सकती हैं।

पठन-कुशलता के अंतर्गत बहुत अधिक परिशुद्धता तो नहीं, लेकिन नमूने लेने की बेहतर तकनीकें, भाषा के ढाँचे पर अधिक नियंत्रण, विस्तृत होते अनुभवों और बढ़ती हुई अवधारणात्मक समझ पर आधारित सटीक प्रारंभिक अनुमान शामिल होता है। जैसे-जैसे बच्चे के पढ़ने का कौशल और पढ़ने की गति बढ़ती है, वैसे-वैसे वह कम से कमतर ग्राफ़िक संकेतों का प्रयोग करने लगता है। ऐसे में मौन पठन, मुखर पठन की तुलना में दो कारणों से अधिक तीव्र और कुशल प्रक्रिया बन जाती है— 1. पाठक का ध्यान मौखिक रूप से 'डिकोडिंग' और 'रिकोडिंग' या 'एनकोड' करने में नहीं बँटता और 2. उसकी पढ़ने की गति उच्चारण की गति से बाधित नहीं होती है, तब वास्तव में सुनने की तुलना में 'पठन' एक अधिक कुशल और तेज़ प्रक्रिया बन जाती है, क्योंकि सुनना सामान्यतः श्रोता के बोलने की गति तक ही सीमित रहता है।

हाल में किए गए अध्ययनों से, जिनमें तान (Pitch) की विकृति मुक्त तीव्र इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्डिंगों का प्रयोग किया गया है, यह स्पष्ट हुआ कि समझ को बाधित किए बिना ही सुनने की प्रक्रिया को अधिक तीव्र बनाया जा सकता है, हालाँकि शुरुआती पाठक को स्वाभाविक रूप से 'डिकोड' करने के लिए अधिक ग्राफ़िक जानकारी की आवश्यकता होती है और इसलिए उन्हें कुशल पाठकों की तुलना में अधिक सजग होने की ज़रूरत है। गुडमैन, 1967; द्वारा कक्षा एक के पाठकों पर किए गए परीक्षणों के साक्ष्य दर्शाते हैं कि यदि उनके द्वारा पढ़ी जाने वाली पठन सामग्री, जिसकी भाषा पूर्ण रूप से गठित है तो वे शुरुआत से ही पठन सामग्री से वाक्य-विन्यास और अर्थ-संकेतों की जानकारी निकालने लगते हैं।

RIDE IN

Run

Ride in, Sue.

Run

Ride in here.

Come here.

Here I Come, Jimmy.

Can come

And here I (Stop).

STOP AND GO

Jimmy said, Come here, Sue,

too

Look at my toy

(train)

See it go.

toy

Look at my lit/tle train go.

toy

Sue said, 'Stop the train'

Come
Stop it here, ~~Jimmy~~.
toy
Jimmy said, 'I can stop the ~~train~~
toy
See the train ~~stop~~'
too
Sue said, 'Look at my ~~toy~~.
toy
It is in the ~~train~~.
too
See my little red toy, Jimmy.
toy
It can ride in the ~~train~~.
toy
Jimmy said, 'see the ~~train~~ go.
Look at it go.'
Suzie too
Sue said, 'look at my little red ~~toy~~.
toy
See it go for a ~~train~~ ride.'
Suzie too
Sue said, 'My little red ~~toy~~!
too
Jimmy said, my © toy is not here.
too
It is not in the ~~train~~.
toy
Stop the train Jimmy.
too
Stop it and look for my toy.

आकृति 1.4 में दो प्राइमर (प्रवेशिका) कहानियों बैट्स, 1963 और बैट्स और वेल्च, 1963 के उदाहरण वैसे ही दिए गए हैं जैसा कि उन्हें पहली कक्षा की एक बच्ची द्वारा एक ही सत्र में पढ़ा गया था। प्रकट रूप से (जैसे लेखकों का भी आशय था) प्राइमर की पहली कहानी, तीसरे प्री-प्राइमर की दूसरी कहानी की तुलना में ज्यादा आसान होनी चाहिए थी। फिर भी उस बच्ची ने पहली कहानी पढ़ते हुए चकरा देने वाली समस्याओं का सामना किया, लेकिन दूसरी कहानी पढ़ते हुए उन्हीं समस्याओं को बखूबी संभाल लिया।

उदाहरण के लिए, 'Ride' में 'Come' और 'Here' में भ्रम को नोट करें। यह भ्रम पहली कहानी को पढ़ने में साक्ष्य के रूप में बच्ची के आदतन जुड़ाव का प्रतिनिधित्व करता है। 'Come' और 'Here' दोनों ही ग्राफ़िक आकृति के आधार पर 'Come' या 'Here' के रूप में पहचाने जाते हैं। 'Stop and Go' कहानी में जब ये शब्द क्रमिक रूप में आते हैं, तब यह कठिनाई नहीं आती। वह पहली कहानी में भी 'And' के स्थान पर 'Can' का प्रयोग करती है, दूसरी कहानी पढ़ते समय ऐसी कोई समस्या उसके सामने नहीं आती। 'Ride In' पाठ में वह 'Stop' शब्द को नहीं पढ़ पाती पर कुछ ही क्षणों बाद पढ़े गए 'Stop and Go' कहानी में वह इसी शब्द को आसानी से पढ़ लेती है। इसी तरह वह पहली कहानी में 'Ride' को 'Run' कहती है, लेकिन बाद वाली कहानी में इसे ठीक कर लेती है, हालाँकि दूसरी कहानी में अनेक अपसंकेत या चूकें (Miscues) हैं, फिर भी यहाँ एक महत्वपूर्ण अंतर दिखाई देता है। पहली कहानी में वह शब्द का नाम बताने वाला खेल-खेलती प्रतीत होती है। वह ग्राफ़िक आकृतियों (Graphic Shapes) को स्वनिमिक संकेतों (Phonological) की भाँति 'रिकोड' कर रही है। उसके लिए प्रत्येक शब्द प्रत्यक्ष रूप से एक अलग चुनौती है, लेकिन 'Stop and Go' कहानी में अपसंकेतों सहित वह जो भी कहती है, लगभग सभी स्थितियों में वह अर्थपूर्ण है और व्याकरण की दृष्टि से भी स्वीकार्य है। ध्यान दें कि जैसे-जैसे 'Sue' शब्द को वह अच्छी तरह जानने लगती, वैसे-वैसे यह शब्द हमारे इस आत्मविश्वासी पाठक के लिए 'Suzie' बन जाता है।

'Train' और 'Toy' के बीच एक अर्थसंगत (Semantic) संबंध है, हालाँकि बच्ची यह फेरबदल कई बार करती है, लेकिन कुछ भी उसे अपने अनुमानों को नकार देने के लिए प्रेरित नहीं करता और हर बार यह अनुमान सही काम करता है। 'Train' को 'Toy' कहने के बाद; एक बार नहीं, बल्कि पूरी कहानी के दौरान वह लगातार 'Toy' को 'Too' कहती है (जबकि वास्तव में चित्रों में एक हवाईजहाज़ है।) इसका कुछ अर्थ

बनता नहीं दिखता। शोधकर्ता ने भी तब तक यही सोचा, जब तक कि बच्ची ने बाद में दोबारा कहानी सुनाते हुए 'Little' Red 'Too', नहीं बोला। तब शोधकर्ता ने पूछा 'यह 'Little' Red 'Too' क्या होता है?' 'एक एयरप्लेन', उसने सहजता से उत्तर दिया। इस बच्ची के अनुसार 'Train' 'Toy' है और 'Plane' 'Too' है। ऐसा क्यों नहीं मान सकते? लेकिन ध्यान दें, कि जब 'Toy' शब्द 'Train' शब्द से पहले आता है तो यह बच्ची 'Train' शब्द को नहीं बोलती। पहली कक्षा के बच्चों के साथ ऐसी समस्या तब दिखाई पड़ती है, जब पाठ में संज्ञाओं को विशेषणों की तरह प्रयुक्त किया गया हो।

सामान्य समझ कहती है कि उसे फिर 'Come', 'Here', 'Can', 'Stop', 'Ride' जैसे शब्दों का अभ्यास करवाया जाए और उसे अगली पुस्तक पढ़ने न दी जाए, क्योंकि स्वाभाविक रूप से वह उसे पढ़ने के लिए तैयार नहीं है, लेकिन अधिक ऊँचे स्तर की कहानी, अपनी जटिल वाक्य-संरचना, अधिक परिष्कृत भाषा व अर्थ के विस्तार के कारण बच्ची को अपने ग्राफ़िक संकेतों को, अर्थगत और वाक्यगत जानकारी को पूरक रूप से इस्तेमाल करते हुए अधिक प्रभावशाली रूप में प्रयोग करने में मदद करती है।

बड़ी नियंत्रित समझ के साथ शब्द-सूची और वर्णमाला चार्ट से पढ़ाना, वास्तव में इस बच्ची के पढ़ने के विकास में बाधा डाल सकता है। इस अनुच्छेद के समाप्त होने से पहले, कृपया अनुमान लगाने पर तात्कालिक अनुभवों के प्रभावों पर ध्यान दें। दिए गए उदाहरणों में हर अनुच्छेद 'Jimmy said' अथवा 'Sue said' से आरंभ होता है। जब बच्ची 'Jimmy' से आरंभ होने वाली पंक्ति पर आती है तो वह पहले से मान लेती है कि इसके बाद 'said' आएगा और जब तक आगे का पाठ पढ़ने से उसका अनुमान खारिज नहीं होता, तब तक वह पाठ दोबारा पढ़कर अपने अपसंकेत ठीक नहीं करती।

जहाँ तक हो सके, पठन की योग्यता के विकास में उन्हें मनोभाषिक अनुमान लगाने वाला खेल-खेलना-सीखना ही चाहिए। इस खेल के नियमों को समझने वाले शिक्षकों को कारगर तरीकों तथा प्रभावी सामग्री का प्रयोग करना चाहिए, जिससे विद्यार्थी अर्थ को प्रकट करने वाले संकेतों को चुनने, भाषा-संरचना संबंधी अपने ज्ञान का इस्तेमाल करने व अपने अनुभवों और संकल्पनाओं का प्रयोग करने में सक्षम हो सकें। उपलब्ध सूचनाओं में से कम और ज़्यादा उपयोगी सूचनाओं में भेद करने के लिए उनकी मदद करनी होगी। सौभाग्यवश यह उसी प्रक्रिया के समानांतर है, जिसका प्रयोग उन्होंने मौखिक भाषा को समझने के लिए किया है। जॉर्ज मिलर, 1965; ने सुझाया है, 'मनोभाषाविदों को ध्यानपूर्वक निष्पादन मॉडल (Performance Model) के निर्माण का प्रयास करना चाहिए, जिसमें

सूचना का परिकल्पित संग्रहण और सूचना-प्रणाली के ऐसे घटक सम्मिलित हों, जो भाषा का प्रयोग करने वालों के वास्तविक व्यवहार को उद्दीप्त कर सकें।’

अब मैं, इस मनोभाषिक अनुमान लगाने वाली प्रक्रिया के लिए अपना मॉडल प्रस्तुत करना चाहता हूँ, जिसे हम अंग्रेजी पढ़ना कहते हैं। कृपया यह समझ लें कि यह जरूरी नहीं है कि ये बिंदु क्रमिक ढंग से ऐसे ही संपन्न होंगे, जैसा कि यहाँ बताया गया है। इसमें फेरबदल संभव हैं—

1. पाठक प्रिंट को बाएँ-से-दाएँ सरसरी नज़र दौड़ाता हुआ पंक्ति-दर-पंक्ति नीचे की ओर आता है।
2. वह अपनी आँखें एक स्थान पर केंद्रित करता है। कुछ प्रिंट तो आँखों की सीध में केंद्रित होंगे, कुछ उसके आस-पास एक दायरे में होंगे शायद उसका अवधारणात्मक दायरा भी थोड़ा सँकरा है।
3. अब चयन की प्रक्रिया आरंभ होती है। वह अपने पहले के चयन, भाषा संबंधी अपने ज्ञान, अपनी संज्ञानात्मक शैलियों और अपनी सीखने की युक्तियों की बाध्यताओं से मार्गदर्शन लेता हुआ ग्राफ़िक संकेतों का चयन करता है।
4. वह इन संकेतों और अनुमानित संकेतों का प्रयोग करते हुए एक प्रत्यक्ष-बोधात्मक चित्र बनाता है। कुछ हद तक ये चित्र, जो कुछ उसने देखा या जो वह देखने की आशा कर रहा है, उसी पर आधारित होते हैं।
5. अब वह संबंधित वाक्यविन्यास, अर्थसंकेतों और स्वनिम विज्ञान संबंधी संकेतों के लिए अपनी स्मृति को टटोलता है। यह उसे कुछ और ग्राफ़िक संकेतों का चयन करने और बोधात्मक चित्रों को पुनर्निर्मित करने की ओर ले जाता है।
6. इस बिंदु पर वह ग्राफ़िक संकेतों से सामंजस्य रखने वाले अनुमान या अस्थायी चयन कर पाता है। अर्थगत विश्लेषण जहाँ तक संभव हो आंशिक ‘डिकोडिंग’ में मदद करता है। जैसे-जैसे वह आगे बढ़ता है, यह अर्थ उसकी अल्पकालिक स्मृति में जुड़ता चला जाता है।
7. यदि कोई अनुमान लगाना संभव नहीं है तो फिर वह अपनी स्मृति में इकट्ठे किए हुए शब्दों को परखकर फिर दोबारा प्रयास करेगा। यदि तब भी कोई अनुमान लगाना संभव नहीं होता तो अधिक ग्राफ़िक संकेतों की तलाश में वह पाठ्यसामग्री पर एक बार फिर नज़र डालता है।

8. यदि वह 'डिकोड' करने लायक चयन कर सकता है तो वह उसे अपने पूर्व चयनों और 'डिकोडिंग' द्वारा विकसित किए गए संदर्भ में अर्थगत और व्याकरणिक स्वीकृति के लिए जाँचता है।
9. यदि अस्थायी विकल्प अर्थविज्ञान या वाक्यविज्ञान के नियमों के अनुसार स्वीकार्य नहीं होते, तब वह पीछे लौटकर, पंक्ति पर दाएँ-से-बाएँ फिर से सरसरी नज़र डालता है और पूरे पृष्ठ पर अर्थगत या वाक्यविन्यास की असंगति के बिंदु को तलाशता है। जब ऐसा कोई बिंदु मिल जाता है तो वह उसी बिंदु से पढ़ना आरंभ करता है। यदि असंगति पहचानी नहीं जा सकी तो वह किसी ऐसे संकेत की तलाश में आगे पढ़ता जाता है, जो इस असंगति के समाधान को संभव बना सके।
10. यदि चयन स्वीकार्य होता है, तो 'डिकोडिंग' का विस्तार कर दिया जाता है, अर्थ को पहले वाले अर्थ के साथ जोड़ लिया जाता है और यदि आवश्यक हो तो पहले वाले अर्थ को समायोजित कर लिया जाता है। इसी तरह आगे आने वाले शब्दों और अर्थ की संभावनाएँ बना ली जाती हैं।
11. इसी प्रकार यह चक्र चलता रहता है।

इस पूरी प्रक्रिया के दौरान दीर्घ और अल्पकालिक स्मृति का निरंतर उपयोग किया जाता है।

मैं, इस प्रतिमान (मॉडल) की जटिलता के लिए कोई क्षमा याचना नहीं करूँगा। इसकी कमियाँ इसकी जटिलता में नहीं, बल्कि इस तथ्य में हैं कि यह पाठकों के वास्तविक व्यवहार के लिए ज़िम्मेदार जटिल परिघटना का पूर्ण विवरण देने के लिए अभी भी अपर्याप्त है। ज्ञान की खोज में मानव का भाग्य ऐसा ही है। जैसे-जैसे हमारा ज्ञान बढ़ता है, हमें सरलता के स्थान पर जटिलता को बढ़ाना होगा।

संदर्भ

- गुडमैन, येन्ना एम. 1967. *अनपब्लिशड डेज़र्टेशन, अ साइको लिंगुइस्टिक डिस्क्रिप्शन ऑफ़ आब्जर्व्ड ओरल रीडिंग फेनोमिना इन सिलेक्टेड बिगनिंग रीडर्स*. वेन स्टेट यूनिवर्सिटी.
- चॉमस्की, नॉम. 1965. *लेक्चर ऐट प्रोजेक्ट लिटरेसी*. कॉर्नेल यूनिवर्सिटी. जून 18.
- बेट्स, एमेट ए. 1963. *राइड इन. टाइम टू प्ले. सेकंड प्री-प्राइमर*. बेट्स बेसिक रीडर्स. थर्ड एडीशन. लैंग्वेज आर्ट सीरिज. अमेरिकन बुक. न्यूयॉर्क.
- . *एंड कैरोलिन एम. वेल्श, 1963. स्टॉप एंड गो. ऑल इन अ डे, थर्ड प्री-प्राइमर*. बेट्स बेसिक रीडर्स. अमेरिकन बुक. न्यूयॉर्क.
- मिलर, जार्ज ए. 1965. *सम प्रीलिमनरिज टू साइकोलिंगुइस्टिक्स*. अमेरिकन साइकोलॉजिस्ट. वॉल्यूम 20. पृष्ठ 18.
- मैक्कैकन, ग्लेन एंड चार्ल्स सी. वॉलकट. 1963. *बेसिक रीडिंग टीचर्स एडीशन फ़ार द प्री-प्राइमर एंड प्राइमर. बी. लिपिनकॉट, फिलाडेल्फ़िया*. पृष्ठ vii
- स्पेक, जार्ज. 1964. *रीडिंग इन द एलीमेंट्री स्कूल*. एलिन एंड बेकन. बॉस्टन. पृष्ठ 12.
- हेज़. विलियम डी. 1963. *माई ब्रदर इज़ ए जीनियस, एडवेंचर्स नाउ एंड देन*, बुक 6. बेट्स बेसिक रीडर्स. थर्ड एडीशन. एमेट ए. बेट्स एंड कैरोलिन एम. वेल्श, न्यूयॉर्क.

2. स्कीमा सिद्धांत के लिए प्रवेशिका

—पी. डेविड पियरसन*

एक मनोवैज्ञानिक प्रयोग में पाठकों से यह अपेक्षा की गई कि एक लिखित सामग्री के प्रत्येक खंड को पढ़ने के उपरांत जो विचार उनके मन में उभरते हैं, वे उसे मुखर रूप से प्रस्तुत करें। नीचे ऐसे ही प्रयोग की काल्पनिक प्रतिलिपि दी गई है, जिसमें सामग्री को इटैलिक्स में दिया गया है।

तेल संकट के बाद व्यापार धीमा हो गया है।

प्रतिभागी पाठक— “तेल संकट, यह निश्चित ही किसी तेल से जुड़े व्यापार का मामला होगा। देखते हैं— सर्विस स्टेशन? (नहीं वे तो संकट के दिनों में तेजी से बढ़ते हैं), कारें? (हाँ, कारें हो सकती हैं), ऐसी कोई भी चीज़ शामिल हो सकती है, जो मुद्रास्फीति से प्रभावित हो! देखते हैं क्या होता है।”

ऐसा प्रतीत होता है कि आजकल कोई परिष्कृत वस्तु चाहता ही नहीं!

प्रतिभागी पाठक— “अहा! महंगी मोटरगाड़ियाँ! ...या एक आरामदायक वाहन... शायद केडिलैक हो सकती है।”

अचानक दरवाज़ा धड़क से खुला और अच्छे खासे कपड़े पहना एक युवक शोरूम में आ पहुँचा।

प्रतिभागी पाठक— “शायद कोई सेल्समैन होगा? लेकिन हो सकता है कि संभावित ग्राहक भी हो? ...अभी पता चलेगा। देखते हैं क्या होता है।”

जॉन स्टीवन्स ने सुबह के अखबार के रिक्ति विज्ञापन कॉलम से नज़र ऊपर उठाते हुए अपने ढीले-ढाले कोट को ठीक किया, जिससे उसकी कमीज़ की धिसी हुई बाँह ढक जाए। फिर वह उस आदमी से मिलने के लिए खड़ा हुआ...

प्रतिभागी पाठक— “यह तो सेल्समैन ही है! लगता है इसका मुश्किल समय चल रहा है; इसीलिए वह रिक्तियाँ तलाश रहा है, उसकी शर्ट भी धिसी हुई है और वज़न भी कम हो चला है। इसका मतलब, वह दूसरा व्यक्ति जिसने अच्छे कपड़े पहने हुए है, ग्राहक ही हो सकता है।”

...उसकी हाथ से रंगी हुई टाई और राइनस्टोन वाली टाईपिन, उस गहरे स्लेटी और काले परिवेश के बीच कुछ अटपटी-सी लग रही थी...

*डीन ऑफ़ द ग्रेजुएट स्कूल ऑफ़ एजुकेशन, प्रोफ़ेसर ऑफ़ लैंग्वेज एंड लिटरेसी, ए सोसाइटी एंड कल्चर

[†]यह उदाहरण डी. ई. र्यूमेलहार्ट (1980) द्वारा किए गए व्यापक कार्यों के आधार पर दिया गया है।

प्रतिभागी पाठक— “मेरे खयाल से यह व्यक्ति निश्चित ही ग्राहक है और उन नवधनाढ्य लोगों में से है जो तेज़ी से अमीर हुए हैं। मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि वह या तो मर्सिडीज़ या रोल्स-रॉयस खरीदेगा, संभवतः मर्सिडीज़! और वह नकद पैसे ही देगा।”

...मर्सिडीज़ सिडान! “मुझे यही चाहिए और मैं नकद पैसे दूँगा।” उस शख्स ने वहाँ रखे गए सबसे महँगे मॉडल की ओर इशारा करते हुए कहा।

प्रतिभागी पाठक— “मैं जानता था, वह नवधनाढ्य है।”

बाद में बिल बनाते हुए जॉन बुदबुदाया, “गनीमत है कि यह सौदा हाथ से नहीं निकला”। बाद में वह बोला, “वह अच्छी चीज़ों के बारे में क्या जानता है? आखिर आजकल कौन शानदार परिष्कृत चीज़ों के बारे में क्या जानता है?” वह धीरे से मुस्कराया और अपने काम में लग गया।

प्रतिभागी पाठक— “हाँ! यह तो एक सनकी है। उसने शायद इससे बेहतर दिन देखे होंगे और निश्चित रूप से उसे बेहतर ग्राहक याद होंगे। ऐसा लगता है उसने अपनी किस्मत से समझौता कर लिया है।”

वैसे प्रस्तुत सामग्री के बारे में हर पाठक के मनोविचार (प्रोटोकॉल) इस काल्पनिक प्रतिलिपि से अलग होंगे, लेकिन इसके बावजूद सभी पाठकों के बीच कुछ समानताएँ देखी जा सकती हैं। उदाहरण के तौर पर, शायद किसी अन्य पाठक ने पहले हिस्से के बाद यह अनुमान नहीं लगाया होगा कि यह कार के व्यापार की बात है, बल्कि उसने किसी और संभावित व्यापार के लिए व्यक्तियों/चरित्रों के बारे में सोचा होगा, लेकिन दूसरे हिस्से के बाद (और निश्चित ही तीसरे हिस्से के बाद) इसकी अधिक संभावना है कि पाठक महँगी कारों के बारे में ही सोचेगा। प्रतिभागी पाठक की तरह अधिकतर पाठक कभी सीधे निष्कर्ष तक पहुँच सकते हैं या थोड़ा और इंतज़ार कर सकते हैं, ताकि पाठ्यसामग्री ही उनके अर्थ को निर्धारित करे। कभी पाठक सही अनुमान लगाएगा और कभी गलत भी हो सकता है।

किसी भी काल्पनिक पाठक की विचार-यात्रा यह दर्शाती है कि सहजबोध स्तर पर कई प्रक्रियाएँ कल्पित मानसिक ढाँचे (Hypothesised mental structures) बनाती हैं। संज्ञान मनोवैज्ञानिक (Cognitive psychologists) और पठन शोधकर्ता (Reading researchers) जैसे— कॉलिनस और क्वीलियन, 1969; कॉलिनस, ब्राउन और लारकिन, 1980; लिंडसे और नॉर्मन, 1972; रूमेलहार्ट, 1980; रूमेलहार्ट और ऑस्टोनी, 1977;

एंडरसन, 1977; पियरसन और स्पायरो, 1980; इस व्याख्या का दावा करते हुए समझाते हैं कि लोग पढ़ने की प्रक्रिया के दौरान जानकारी को कैसे क्रियान्वित, संगृहीत तथा पुनःप्राप्त (Retrieve) करते हैं। मानवीय स्मृति में सूचनाएँ किस तरह संगृहीत होती हैं। उनके बारे में शैंक्स के स्क्रिप्ट्स, 1972; मिन्स्की के फ्रेम्स, 1975; और रूमेलहार्ट के स्कीमाटा, 1980; रूमेलहार्ट और ऑरटोनी, 1977; में चर्चा की गई है, लेकिन वे यह दावा नहीं करते कि ये पठन के सिद्धांत भी हैं। एंडरसन, रेनॉल्ड्स, शालर्ट और गोएटज, 1977; पियरसन, हानसेन और गॉर्डन, 1978; पियरसन और स्पायरो, 1980; आदि पठन शोधकर्ताओं ने पाठकों के संज्ञान के इन सिद्धांतों को इस्तेमाल करते हुए यह समझाने की कोशिश की है कि लोग किस तरह पढ़ते हैं।

‘तेल के संकट’ पर केंद्रित सामग्री के बारे में कई प्रतिभागी पाठकों की प्रतिक्रियाओं का विश्लेषण करके, इस बात को दिखाया जा सकता है कि किस तरह प्रत्येक प्रतिक्रिया ‘स्कीमा सिद्धांत’ के एक पहलू को उजागर कर रही है। सबसे पहले तो प्रतिभागी पाठक पाठ को समझ ही नहीं पाता, अगर उसे व्यापार, तेल संकट, ऑटोमोबाइल्स, व्यापार में आदान-प्रदान जैसे विषयों और बुरा वक्त और सनक जैसे अनुभवों की पूर्व जानकारी नहीं होती। स्कीमा सिद्धांत की भाषा में कहें तो प्रतिभागी पाठक को पहले से मौजूद ज्ञान के ‘स्कीमाटा’ भंडार में से पाठ विशेष में दी गई जानकारी को चुनना होगा। ‘स्कीमा सलेक्शन’ यानी स्कीमा चयन, अर्थपूर्ण समझ विकसित करने के लिए एक अहम और अनिवार्य कदम होता है। चयन के बारे में दो प्रश्नों के जबाब दिए जाने जरूरी हैं—

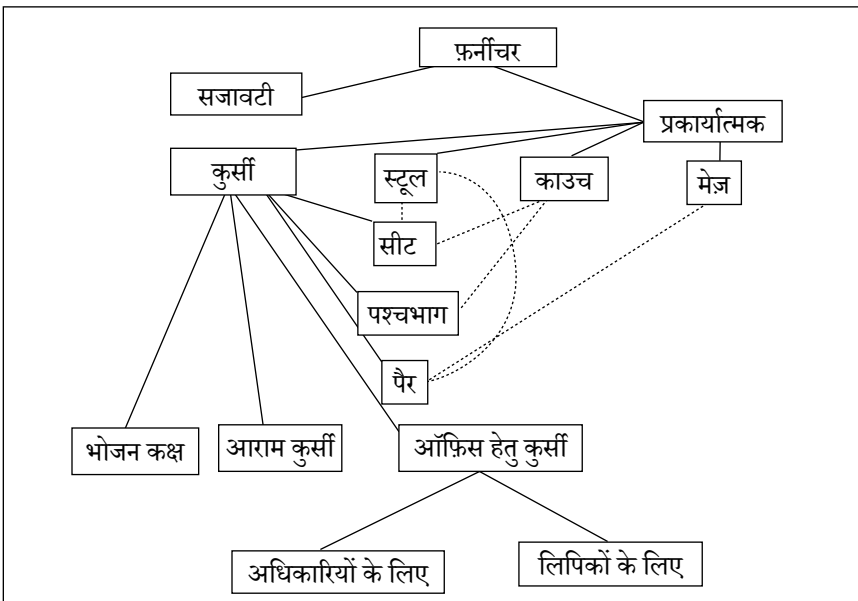
1. पाठक ‘स्कीमाटा’ के किस स्वरूप का चयन करते हैं?
2. वे उनका चयन किस तरह करते हैं?

स्कीमाटा का स्वरूप क्या है?

स्कीमाटा सिद्धांत का बुनियादी आधार है कि मानव स्मृति अर्थसंगत तरीके से (Semantically) संगठित होती है, न कि ध्वन्यात्मक या वर्णानुक्रम (Phonologically or Alphabetically) तरीके से। दूसरे शब्दों में कहें तो स्मृति एक शब्दकोश की बजाय एक समांतर कोश की तरह संगठित होती है। हम अंदाज़ा लगा सकते हैं कि सभी किस्म की चीज़ों के लिए हमारे पास ‘स्कीमाटा’ मौजूद हो सकता है, फिर चाहे वे साधारण वस्तुओं (कुर्सी, नाव) से लेकर अमूर्त धारणाओं (प्यार, उम्मीद, डर) तक हों। क्रियाओं

(खरीदना, कूदना, दौड़ना) से लेकर जटिल घटनाओं (एक सेमिनार में हिस्सेदारी से लेकर एक फुटबॉल मैच देखने तक) या कि जटिल विषयवस्तु (कहानी, उपन्यास, विश्व के मामले) के लिए भी यह संभव हो सकता है।

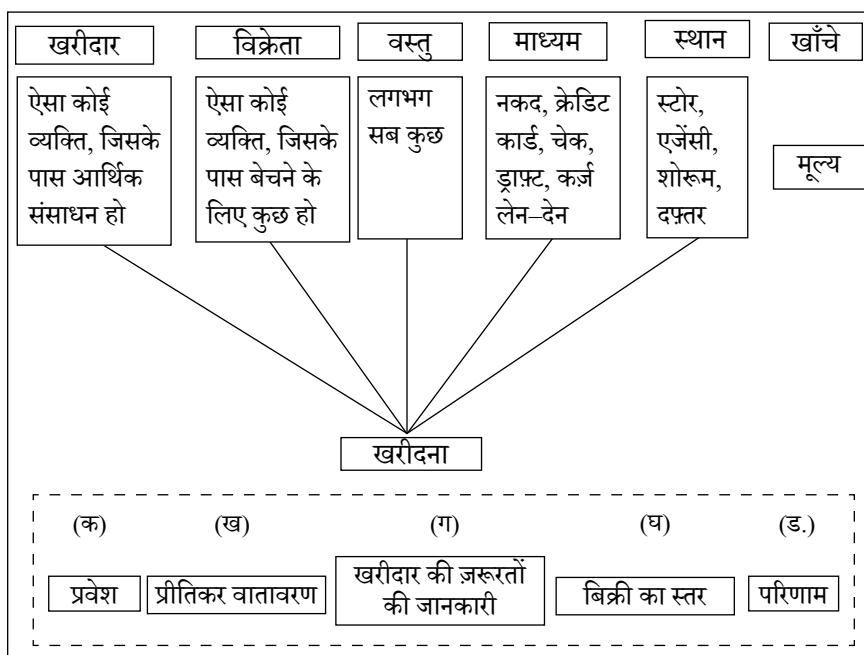
एक कुर्सी के लिए स्कीमा, आकृति 2.1 की तरह व्यवस्थित किया जा सकता है। यह रूपरेखा जिसे 'अर्थगत तंत्र' या 'स्कीमा' कहते हैं। कालिन्स और क्विलियन, 1969; विभिन्न 'स्कीमाटाओं' के बीच के अर्थगत अंतःसंबंधों को चित्रित करता है। उदाहरण के लिए, कुर्सी एक 'स्कीमा' है, लेकिन वह अन्य वर्गों से भी जुड़ी है (उदाहरण—प्रकार्यात्मक फ़र्नीचर) जो अपने स्तर पर खुद 'स्कीमाटा' है और 'स्कीमाटा' के अन्य वर्गीकरणों (उदाहरण—फ़र्नीचर) का हिस्सा है। कुर्सियों की भी अपनी विशिष्टताएँ (या खाँचे) हैं, जिनके होने पर ही उन्हें 'कुर्सी' के तौर पर पहचाना जा सकता है, अर्थात् एक कुर्सी में किस प्रकार की सीट होनी चाहिए, उसका पश्च भाग कैसा होना चाहिए और उसके किस किस्म के पाए होने चाहिए। ऊर्ध्वमुखी संगठन के अतिरिक्त (कुर्सी से प्रकार्यात्मक फ़र्नीचर) इस प्रणाली में एक अधोमुखी संगठन भी होता है, जैसे—भोजनकक्ष कुर्सी, आराम कुर्सी आदि परिभाषा के अनुसार देखें तो 'स्कीमाटा' दरअसल



आकृति 2.1 कुर्सी का आंशिक अर्थगत तंत्र

अमूर्त होते हैं और इस वजह से किसी खास कुर्सी से संबंधित नहीं होते हैं, बल्कि किसी तथा आदर्श कुर्सी से संबंधित होते हैं, जो शायद कहीं हो ही नहीं। (शोबेन, 1980)।

वस्तुओं के लिए और प्यार, घृणा या डर जैसी अमूर्त अवधारणाओं के लिए स्कीमा अक्सर 'संकल्पना' जैसा प्रतीत होता है, लेकिन कार्यों और घटनाओं का स्कीमा एक ऐसा आयाम होता है, जो आमतौर पर संकल्पनाओं से संबंधित नहीं होता, जिसे हम उपकथात्मक और अनुक्रमिक आयाम (Episodic or Sequential dimension) कह सकते हैं। आकृति 2.2 ऐसा ही एक स्कीमा प्रस्तुत करती है जो एक संकल्पना से अधिक एक नाटक की तरह प्रतीत होता है— इस सादृश्यता पर विस्तृत विचार के लिए देखें। रुमेलहार्ट, 1980; खाँचे (Slots) या परिवर्तनीय खाँचे (Variable slots) किसी नाटक की भूमिका के अनुरूप होते हैं, क्योंकि उन्हें विशेष किस्म के तत्वों से भरा जा सकता है।



आकृति 2.2 किसी व्यक्ति की खरीदारी की स्कीमा का संभावित आंशिक चित्रण

इन खाँचों के भरने के लिए जिन विशिष्ट चरित्रों का चयन किया जाता है, वे उन अभिनेताओं की तरह हैं, जिन्हें इन भूमिकाओं को अदा करने के लिए बुलाया गया हो। यह विशिष्ट वस्तु जो इन परिवर्तनीय खाँचों को भरती है, उसे 'मूल्य' कहते हैं।

पात्रों की भूमिका निर्धारण के अतिरिक्त, खरीदने के आरेख या स्कीमा में ऐसे प्रसंग और खाँचे होते हैं, जो खरीदने की गतिविधि के दौरान घटित होते हैं, जिस तरह आकृति 2.2 के डॉटेड बॉक्स में दिखाया गया है। वे किसी नाटक के दृश्य के अनुरूप हैं।

पदानुक्रमित संगठन (Hierarchical organisation) के अलावा, प्रस्तुत स्कीमा में काफ़ी हद तक प्रति-संदर्भित (Cross-referencing) चीज़ें भी दिखती हैं— पियरसन और स्पायरो, 1980; उदाहरण के लिए अगर 'खरीद' की 'स्कीमा' का चयन किया जाए और खरीदार कोई अपराधी हो, तो अपराधी के लिए अलग स्कीमा को लिया जाएगा और उसे खरीद की 'स्कीमा' के साथ जोड़ दिया जाएगा। मूल्य (अभिनेता), जो परिवर्तनीय खाँचों (भूमिकाओं) को एक स्कीमा में भरते हैं, वे व्यक्ति की संगत ढंग से संगठित स्मृति के दूसरे हिस्से में खुद 'स्कीमाटा' होते हैं।

स्कीमाटा का चयन कैसे होता है?

आखिर कोई पाठक कैसे तय करता है कि किसी विशिष्ट पाठ को समझने और याद करने के लिए किस 'स्कीमा' (या स्कीमाटा) का चयन करना है। कभी-कभी लेखक भी सूचनाप्रद हो सकता है, जैसे— 'यह कहानी एक ऐसे व्यक्ति की है, जो कार खरीदना चाहता था।' आमतौर पर एक पाठक को अधिक बारीक संकेतों पर निर्भर करना होता है और अपनी संकल्पनाएँ बनानी होती हैं।

किसी स्कीमा का चयन करने के लिए पाठक के पास एक सामान्य तरीका यह होता है कि वह एक विशिष्ट मूल्य (उदाहरण के लिए एक पात्र) को पहचाने, जो उस स्कीमा के एक विशिष्ट परिवर्तनीय खाँचे को भर सके। फिर वह अनुमान लगाता है कि वह स्कीमा उसके लिए उचित है या नहीं। दूसरे शब्दों में कहें तो पाठक की तरफ़ से निष्कर्षात्मक कदम अक्सर ज़रूरी हो जाते हैं, ताकि यह तय किया जा सके कि पाठ्यसामग्री किस बारे में है।

खाँचे या स्लॉट्स किस तरह भरे जाते हैं?

खाँचों को भरने की प्रक्रिया को दृष्टान्तीकरण (Instantiation) कहा जाता है, जिसका उद्गम दृष्टान्त (Instance) शब्द से होता है (अर्थात् एक विशिष्ट उदाहरण जो परिवर्तनीय खाँचे में सीमित होता है)। जब एक स्कीमा का चयन हो जाता है तो खाँचे को भरना आमतौर पर आसान हो जाता है। एक बार जब यह तय हो जाता है कि कहानी 'खरीदने' पर केंद्रित है तो फिर शुरुआती उदाहरण के प्रतिभागी के लिए यह चुनना बहुत आसान हो जाता है कि 'खरीदार', 'विक्रेता', 'वस्तु', 'माध्यम' और 'स्थान' जैसे खाँचों

में, किसे या क्या भरा जाएगा? लेकिन कई खाँचे, स्कीमाटा चयन से पहले भरे जाते हैं और स्कीमा का चयन खाँचे भरने के बाद होता है (दरअसल खाँचों का भरना, स्कीमा चयन को निर्धारित करता है)। खाँचे भरते हुए स्कीमा चयन की तरफ बढ़ते हैं।

संभावित पात्र के मिल जाने तक, पाठक खाँचों को अस्थायी रूप से भी भर सकते हैं। दिए हुए उदाहरण में सारी सूचनाएँ पढ़ने से पहले ही प्रतिभागी पाठक यह समझ लेता है कि खरीदार नकद देगा और कहानी के प्रारंभ में ही वह तय कर लेता है कि 'कैडिलेस' (कार की कंपनी का नाम) खरीदी जा सकने वाली संभावित वस्तु हो सकती है।

ज्यादातर खाँचे अनुमान द्वारा ही भरे जाते हैं। वास्तव में पाठक लगातार उन खाँचों को भरते रहते हैं, जिनके लिए लेखक ने कोई 'मूल्य' (Value) नहीं दिया होता। खाँचे भरने के लिए पाठक का 'बेहतरीन अनुमान' या 'संभावित पात्रों' का चयन, जिसके लिए लेखक ने कोई संकेत न दिया हो, उसे 'डिफ़ॉल्ट वैल्यू' (default value) कहते हैं।

अनुमान वहाँ पर भी ज़रूरी होते हैं, जहाँ पाठ्यसामग्री ऐसे परिवर्तनीय खाँचे की पूर्ति के लिए एक संभावित प्रत्याशी उपलब्ध करती है। जब पाठक ने कहा कि 'यही ग्राहक होगा' तब पाठ्यसामग्री में ऐसी कोई बात नहीं थी, जिससे 'पाठक' ऐसे निष्कर्ष तक पहुँचता। दरअसल किसी कार्यरत स्कीमा में कौन, किन खाँचों में किसे या क्या भरता है, यह तय करने के लिए अक्सर अनुमानों की आवश्यकता होती है। ऐसा इसलिए है, क्योंकि लेखक वहाँ पाठकों को प्रत्यक्ष सूचनाएँ प्रदान नहीं करते हैं, जहाँ पाठक आसानी से अनुमान लगा सकते हैं।

अनुमान के बारे में दो शब्द

स्कीमा सिद्धांत ने इस बात को उजागर किया है कि पठन का काम आकस्मिक रूप से ही शाब्दिक (Literal) हो सकता है। विशिष्ट रूप से प्रस्तुत सूचना को उत्पाद के अनुमानों द्वारा पहचाना और याद किया जा सकता है, हालाँकि किसी पाठ्यसामग्री के अर्थ को समझने की प्रक्रिया में दसियों या सैकड़ों अनुमान लगाने पड़ते हैं। स्कीमा चयन और दृष्टांतीकरण में अनुमान एक आवश्यक हिस्सा होता है (यह तय करने के लिए कि डिफ़ॉल्ट वैल्यू के साथ पाठ्यसामग्री का कौन-सा और क्या, किस खाँचे में सटीक बैठता है)।

अनुमान एक अलग ढंग से भी लगाया जा सकता है। एक मूल्य (Value) जो एक खाँचे की पूर्ति करता है, वह दूसरे खाँचे के लिए 'डिफ़ॉल्ट वैल्यू' के चयन को प्रभावित करता है। पिछले पृष्ठ पर दिए हुए उदाहरण में पात्र ने जब अनुमान लगाया कि खरीदार 'मर्सिडीज़' के लिए नकद राशि देगा, उसने मध्यम खाँचे के लिए एक विशिष्ट

डिफॉल्ट वैल्यू 'नकद' तय किया, क्योंकि खरीदार का खाँचा 'नवधनाढ्य' ने भर दिया था, दरअसल अन्य किसी भी किस्म के व्यक्तित्व के लिए उसकी 'डिफॉल्ट वैल्यू' 'बैंक का कर्जा' होती है। उसी तरह, एक महिला की कहानी के संदर्भ में, जो अपने अठारह दोस्तों को भोजन के लिए ले जाती है और बिल का भुगतान करती है, उस मामले में माध्यम के लिए 'डिफॉल्ट वैल्यू' 'नकद' या 'चेक' नहीं, बल्कि 'क्रेडिट कार्ड' होगी। खाँचे को भरना एक किस्म की अंतः क्रियात्मक (Interactive) प्रक्रिया है। खाँचे को भरने का तरीका दूसरे अन्य खाँचों के भरने को प्रभावित करता है।

लोग अपने स्कीमाटा को कैसे बदलते हैं?

दुर्भाग्य से, स्कीमा सिद्धांत 'सीखने की प्रक्रिया' को समझने में अधिक मददगार होने के बजाय 'बोध' को समझने में अधिक सहायक साबित हुआ है। विस्तार से चर्चा के लिए रूमेलहार्ट, 1980; अथवा पियरसन और स्पायरो, 1980; देखें, हालाँकि रूमेलहार्ट के अनुसार स्कीमा सिद्धांत में सीखने की प्रणाली शामिल होती है। स्कीमा सिद्धांत में सबसे साधारण किस्म के सीखने के तरीके को अभिवृद्धि (Accretion) कहते हैं। अभिवृद्धि की धारणा पियाजे, 1952; की 'आत्मसातीकरण' (Assimilation) की धारणा और स्मिथ, 1975; की 'बोध' (Comprehension) की धारणा से काफ़ी मिलती है। जब भी कोई व्यक्ति किसी वस्तु के स्कीमा का अनुभव करता है और वह उस स्कीमा से जुड़े दृष्टान्तीकरण को अपनी दीर्घकालीन स्मृति में सम्मिलित कर लेता है, तब-तब अभिवृद्धि होती है। अभिवृद्धि व्यक्ति को विशिष्ट परिस्थितियों को याद रखने में सहायता करती है। उदाहरण के लिए, किसी रेस्तराँ में जाने का अनुभव सीखने के अन्य रूपों के विपरीत, अभिवृद्धि स्कीमा की संरचना में तब्दीली नहीं लाती है।

एक दूसरे किस्म की सीखने की प्रक्रिया है— 'फ़ाइन ट्यूनिंग' (अर्थात सामंजस्य या तालमेल कायम करना), हालाँकि 'फ़ाइन ट्यूनिंग' का पियाजे या स्मिथ के सूचना प्रक्रियायन (Information processing) के सिद्धांतों में कोई समरूप नहीं मिलता, लेकिन इसे पियाजे के समायोजन (Accommodation) और स्मिथ के 'अधिगम' (Learning) में शामिल कर सकते हैं। सामंजस्य के ज़रिए स्कीमाटा के घटकों को विशेष रूप से संशोधित किया जाता है। नए परिवर्तनीय रिक्त स्थानों/खाँचों को जोड़ा जाता है, परिवर्तनीय खाँचों का रूपांतरण किया जाता है या डिफॉल्ट वैल्यू में बदला जाता है। उदाहरण के लिए एक ऐसा व्यक्ति जिसका ऑटोमोबाइल विक्रेता के रूप में सिर्फ़ पुरुषों

से ही मिलना हुआ हो, उसका परिवर्तनीय खाँचा पुरुषों को ही ऑटोमोबाइल विक्रेता के रूप में देखने या समझने तक सीमित होगा। जब ऐसा व्यक्ति किसी महिला विक्रेता के समक्ष आएगा, तो उसे अपने परिवर्तनीय खाँचे में संशोधन करना पड़ेगा, जिससे उसमें महिलाओं को भी सम्मिलित किया जा सके।

तीसरे किस्म की सीखने की प्रक्रिया है— पुनर्गठन (Restructuring)। यह तब होता है, जब व्यक्ति नए स्कीमाटा के गठन के लिए पुराने स्कीमाटा को छोड़कर उपलब्ध जानकारी और नयी प्राप्त सूचना को नए स्कीमाटा में समायोजित करे। पुराने सिद्धांतों या प्रतिमानों को नए से प्रतिस्थापित किया जाता है। कोपर्निकस क्रांति, न्यूटन की भौतिकी का आगमन और सापेक्षता के आइंस्टाइन के सिद्धांत आदि ऐसे पुनर्गठन के उत्तम उदाहरण कहे जा सकते हैं— कुहन, 1962; दैनिक जीवन में पुनर्गठन अधिक संयत स्तर पर होता रहता है— एक चार साल का बच्चा सीखता है कि चार पैरों के सभी जानवर, ‘बिल्ली’ नहीं होते और उसे घोड़ों, बिल्लियों, गायों और बकरियों के लिए विशेष स्कीमाटा बनाना पड़ता है। एक अध्यापक का बोध होता है कि अलग-अलग किस्म की क्षमताओं के बच्चों के लिए अलग-अलग किस्म की अध्यापन-शैली अपनानी होगी, या एक विद्यार्थी यह समझ जाता है कि ‘विमेयमता’ (Commutativity) सिखाता है कि नियम जोड़ से गुणा तक सामान्यीकृत होते हैं, लेकिन घटा या भाग में ऐसा संभव नहीं होता है।

पुनर्गठन के दो पहलू हैं। ‘स्कीमा विशिष्टीकरण’ तब होता है जब किसी एक स्कीमा को प्रतिस्थापित करने के लिए कई नयी स्कीमाओं की ज़रूरत पड़ती है। उदाहरण के लिए, जहाँ कुत्ते की मात्र एक श्रेणी पर्याप्त थी, उसकी जगह अब चार-चार उपश्रेणियों की बात करनी पड़ती है। ‘स्कीमा सामान्यीकरण’ तब होता है, जब कई उप-स्कीमाटा में कुछ परिवर्तनीय खाँचों के तत्वों का साझे रूप में प्रयोग करें और सीखने वालों को इस बात का अहसास हो कि उन्हें एक ही विषय के भिन्न रूपों के तौर पर देखा जा सकता है। उदाहरण के तौर पर मिथक और नीति कथाएँ दोनों ही कहानियाँ होती हैं।

पठन के दौरान स्कीमा को कैसे नियंत्रित किया जाता है?

कई बार पाठक एक ऐसी पद्धति से जुड़ते हैं, जिसे ‘Top down’ या स्कीमा-आधारित ‘Inside-out’, या पाठक-आधारित या अवधारणा-संचालित प्रक्रिया कह सकते हैं। यह एक बहुत ही सक्रिय प्रक्रमण पद्धति है, जिसमें पाठक पाठ से संबंधित अपने स्कीमा के भंडार का प्रयोग करते हुए परिकल्पना बनाता रहता है। ये परिकल्पनाएँ आगे आने वाले

पाठ व अन्य सूचनाओं को समझने में मदद करती हैं। इन परिकल्पनाओं को कभी पुष्ट किया जाता है, तो कभी खारिज होने की स्थिति में उन्हें संशोधित किया जाता है। अध्याय के आरंभ में दिए हुए उदाहरण में प्रतिभागी पाठक ने ऐसे कई दृष्टांत रखे, जिसमें वह इसी किस्म के प्रक्रियायन में शामिल था।

कई बार, जो पाठक निष्क्रिय होते हैं वे ऐसी प्रक्रिया का प्रयोग करते हैं, जिसे 'Bottom-up', या नीचे से ऊपर प्रक्रियायन, बाहर से अंदर प्रक्रियायन, पाठ-आधारित या आँकड़े-आधारित प्रक्रियायन कहते हैं। इस विशिष्ट प्रणाली में पाठक अपनी राय को स्थगित करता है और किसी निष्कर्ष पर पहुँचने से पहले पाठ्यसामग्री से अधिक सूचना हासिल करने की कोशिश करता है। इस प्रकार का प्रक्रियायन अक्सर तब होता है, जब पाठक किसी पाठ्यसामग्री को पहली बार पढ़ता है या जब एक परिकल्पना को नकार देता है अथवा घटनाओं के क्रम को समझ नहीं पाता है। प्रतिभागी पाठक ने ऐसे कई उदाहरण पेश किए हैं।

इन दो नियंत्रक प्रणालियों के बारे में सोचने का एक दिलचस्प तरीका है कि 'ऊपर से नीचे' या 'Top down' वाले प्रक्रियायन में पाठक अपनी स्कीमा के अंतर्गत ही कार्य करता है, जबकि 'नीचे से ऊपर' या 'Bottom-Up' वाले प्रक्रियायन में पाठक लेखक की स्कीमा के दायरे में कार्य करने की कोशिश करता है और कोई सक्षम पाठक, लेखक की समझ से अपनी समझ के साथ बराबर संवाद करने की प्रक्रिया में दोनों तरह से आगे-पीछे जाता रहता है।

स्कीमा सिद्धांत का संभावित फ़ायदा क्या है?

सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि अध्यापक और परीक्षणकर्ता किस तरह स्कीमा सिद्धांत का इस्तेमाल करते हुए विद्यार्थियों के बारे में बेहतर जाँच-पड़ताल और निर्देशात्मक निर्णय ले सकते हैं? पियरसन और स्पायरो, 1980; के लेख के मुताबिक विद्यार्थियों को जिन पाँच प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ता है, उन्हें स्कीमा सिद्धांत के ढाँचे से समझाया जा सकता है। इसमें जाँच और निर्देश के संदर्भ में कुछ निहितार्थ शामिल हैं। इन्हें हम विद्यार्थियों के पाठ पढ़कर समझने में असफलता के पाँच कारण मान सकते हैं। इस निर्देशात्मक निर्णय-प्रक्रिया संरचना (Instructional decision making framework) का सारांश आगे प्रस्तुत किया गया है—

1. स्कीमा की उपलब्धता— सरल ढंग से कहें तो अगर विद्यार्थियों के पास किसी विषय से संबंधित स्कीमाटा नहीं है, तो वे उस विषय-विशेष के बारे में किए गए चयनों को समझ नहीं पाएंगे। इस परिघटना को काफ़ी हद तक स्पष्ट रूप से दिखाया गया है। [उदाहरण— एंडरसन, स्पायरो और एंडरसन, 1978; पियरसन, हानसेन और गोर्डन, 1978; जॉन्सटन और पियरसन, 1982 और जॉन्सटन, 1981; ने पाया कि पढ़ने की सीमित योग्यता के बजाय विषय का पूर्व ज्ञान पाठ को समझने में अधिक सहायता करता है। पूर्व ज्ञान के आकलन के संबंध में लैंगर, 1980 और पियरसन और जॉन्सटन, 1978; ने पाया है कि सामान्य सहमुक्ति तकनीक ‘Simple free-association’ (अनुच्छेद की मुख्य संकल्पनाओं के साथ) विद्यार्थी की स्थिति का एक निदानात्मक चित्र प्रस्तुत करती है। हागेन, 1979 और थॉम्स, 1982; ने सुधार के संदर्भ में पाया कि पियरसन एवं जॉन्सटन, 1978; के अर्थगत मानचित्रण प्रतिमान (Semantic mapping paradigm) ऐसे विद्यार्थियों के लिए अधिक उपयोगी हो सकते हैं, जो कमजोर पृष्ठभूमि से आते हैं।

2. स्कीमा चयन— कुछ विद्यार्थियों के पास विषय का पूर्वज्ञान तो होता है, लेकिन ज़रूरत के समय वे ध्यान नहीं दे पाते हैं। ऐसे विद्यार्थी अक्सर नीचे से ऊपर ‘Bottom-up’ प्रक्रियायन पर अधिक निर्भर रहते हैं और इस बात को समझ नहीं पाते हैं कि उनका कौन-सा स्कीमा पाठ्यसामग्री को समझने एवं उसकी व्याख्या करने के लिए उपयोगी होगा। इस संदर्भ में सुधार कार्य अपेक्षाकृत सरल और सीधा होता है। ऐसी कोई भी पूर्वपठन शिक्षण-रणनीति जो उचित स्कीमा को केंद्र में लाती है, वह इसमें सहायक हो सकती है। विशेष तौर पर इस संदर्भ में हानसेन, 1981; और हानसेन तथा पियरसन, 1982; तथा स्टॉफ़र, 1969; जैसे विद्वानों की सलाह कारगर हो सकती है। पियरसन और जॉन्सटन, 1978, हर्बर, 1970; और हांफ, 1971; आदि की रचनाओं में वह तकनीक समाहित है, जो विद्यार्थियों को पाठ्यसामग्री के अधिक सक्रिय प्रक्रियायन में समर्थ बनाने में सहायक हो।

3. स्कीमा का अनुरक्षण— केवल इस कारण कि किसी पाठक के पास स्कीमा उपलब्ध है और वह अनुच्छेद को समझने के लिए उसका चयन करता है, यह ज़रूरी नहीं कि पठन की संपूर्ण प्रक्रिया के दौरान वह उस स्कीमा को बनाए रखेगा। कई विद्यार्थी इस बात को भी भूल सकते हैं कि वे किस बारे में पढ़ रहे हैं। यह ‘स्कीमा अनुरक्षण’ की समस्या होती

है। इस समस्या का एक कारण यह हो सकता है कि पाठक 'Bottom-up' या 'नीचे से ऊपर' प्रक्रियायन पर अधिक निर्भर करता है और अपना समूचा ध्यान आरंभिक पाठ्य-इकाइयों (अक्षर, स्वर, शब्द) पर अधिक केंद्रित करता है, जिससे पाठ के समग्र अर्थ को समझने के लिए ज़रूरी एकाग्र चिंतन के लिए संज्ञानात्मक क्षमता नहीं बचती। दूसरा कारण— 'अविवेकी पाठ्यसामग्री' (Inconsiderate text) है। एंडरसन, आर्मब्रस्टर और कैटोर, 1980; ऐसी सामग्री जो यह स्पष्ट नहीं करती कि पाठ में शामिल विभिन्न विचार आपस में किस तरह जुड़ सकते हैं। मार्शल और ग्लॉक 1978-1979; और इरविन, 1980; आदि ने यह पाया कि यह समस्या कुशल पाठकों की बजाय कमजोर पाठकों से संबंधित होती है, जो लेखक द्वारा आपस में जुड़ने वाले सूत्रों के न देने से चीजों को जोड़ नहीं पाते हैं।

इस समस्या के बारे में किसी अनुदेशात्मक सलाह का परीक्षण नहीं किया गया है, हालाँकि परीक्षात्मक अनुभव एवं कुछ प्रयोगात्मक अध्ययन, उदाहरण के लिए— गार्डन, 1980; सिंगर एवं डोनलान, 1982; बार्टलेट, 1978; ने कहानियों एवं व्याख्यात्मक पठन सामग्री के संगठन के संबंध में विद्यार्थियों में स्कीमा के विकास के महत्त्व को उजागर करते हैं। इसे या तो सुनियोजित प्रश्न तकनीकों के ज़रिए या फिर पठन सामग्री में सचित्र प्रस्तुति के उपयोग द्वारा निष्पादित कर सकते हैं।

4. नीचे से ऊपर के प्रक्रियायन पर अत्यधिक निर्भरता— 'नीचे से ऊपर' प्रक्रियायन पद्धति पर अत्यधिक निर्भर करना जंगल में रहते हुए पेड़ों को न देख पाना है। ऐसे पाठक मौखिक पठन में गलतियाँ कर सकते हैं, क्योंकि उनका ध्यान अर्थ से अधिक ग्राफ़िक लक्षणों (Graphic features) पर होता है। साथ ही वे पूर्व ज्ञान पर आधारित उत्तर देने की बजाय सिर्फ़ पाठ में से शाब्दिक उत्तर ही दे पाते हैं। जिन विद्यार्थियों की ऐसी आदत ही बन गई है, उनकी सहायता करना आसान नहीं होता है। बुनियादी तौर पर उन्हें दो चीज़ों को सीखने की आवश्यकता होती है। पहला, पठन से भी वही अर्थ ध्वनित होना चाहिए, जो सुनने से होता है। दूसरा, पाठ की सही समझ के लिए कभी-कभी पाठ से बाहर के ज्ञान पर भी निर्भर होना पड़ता है। 'विसंगति खोजने की तकनीक' के ज़रिए, उन्हें पहला बिंदु सिखाने की दिशा में कुछ प्रगति हुई है। विद्यार्थियों को ऐसी पाठ्यसामग्री दी जाती है, जिसमें असंगत शब्द, वाक्यांश या वाक्य होते हैं और उन्हें उन शब्दों को हटाने के लिए कहा जाता है, जो अनुच्छेद के अनुकूल न हों।

ज़ाहिर-सी बात है कि वे इस काम को तब तक नहीं कर सकेंगे, जब तक कि वे नहीं जानेंगे कि पाठ्यसामग्री का संदर्भ क्या है। अर्थात् जब तक वे ऊपर से नीचे या 'Top-down' प्रक्रियायन से संचालित न हों। दूसरे बिंदु के लिए विद्यार्थियों को ऐसे प्रश्न दिए जाते हैं, जिनके उत्तर के रूप में विकल्प दिए गए हों। फिर उनसे पूछा जाता है कि कौन-सा जवाब पाठ्यसामग्री से निकला है और कौन-सा नहीं। अंततः उन्हें यह आँकने के लिए कहा जाता है कि कौन-से उत्तर उचित हैं, ताकि यह दर्शाया जा सके कि कभी-कभी पाठक द्वारा अपनी समझ से दिए गए उत्तर, पाठ्यसामग्री में दिए गए उत्तरों की तरह ही उपयुक्त होते हैं।

5. ऊपर से नीचे प्रक्रियायन पर अत्यधिक निर्भरता— यह संभव है कि विद्यार्थी स्कीमा पर आधारित ऊपर से नीचे या 'Top-down' प्रक्रियायन पर अत्यधिक निर्भर हों। ऐसे विद्यार्थी मौखिक तौर पर पठन में गलतियाँ तो करते हैं, लेकिन उससे अर्थ प्रभावित नहीं होता है। उनके जवाब, भले ही ठीक लगते हों पर उन जवाबों से यह पता चल जाता है कि पठन सतही तौर पर या लापरवाही से हुआ है या पाठ्यसामग्री को बिना पढ़े ही जवाब दिए गए हैं। भले ही विद्यार्थी द्वारा निकाला गया 'सारांश' हर परिस्थिति में सहायता कर सकता है, लेकिन इसका एक गंभीर नुकसान तब होता है, जब पाठ को ध्यानपूर्वक पढ़ने की आवश्यकता होती है (उदाहरण के लिए, प्रयोग करने, निर्देशों को समझने, कविता, मूल्यांकन के लिए पठन आदि के दौरान)। कभी-कभी लेखक का स्कीमा के दायरे में काम करना आवश्यक होता है।

ऐसी प्रवृत्तियों का मुकाबला करने के लिए कई तरीके अपनाए जाते हैं। विद्यार्थियों की प्रश्नोत्तर प्रवृत्ति में सहयोग करने के लिए, उन्हें उन्हीं कार्यों में लगाया जाता है। (पाठ की सहायता से और बिना सहायता से सही उत्तर को खोजना) जो 'Bottom-up approach' पर अतिनिर्भर रहने वाले विद्यार्थी करते हैं, लेकिन इस अभ्यास का लक्ष्य भिन्न होता है। इन विद्यार्थियों के लिए यह समझना आवश्यक होता है कि पाठ्यसामग्री में से जवाब देना कोई गलत कार्य नहीं है। जहाँ ठीक से न पढ़ पाने की समस्या होती है, वहाँ पर विद्यार्थियों को जटिल निर्देश दिए जाते हैं और रिक्त स्थान भरने जैसे अभ्यास दिए जाते हैं, जिनमें प्रस्तुत उत्तर अर्थसंगत तरीके से दिए गए प्रत्युत्तर को चिह्नित करते हैं (जैसे— चलना, उछलते हुए लाँघना, पैर घसीट कर चलना), लेकिन उनमें सिर्फ़ एक ही सही अर्थवाहक होता है। (उदाहरण— सूज़न इतनी खुश हुई कि वह पार्क में से _____ चली गई।)

निष्कर्ष के तौर पर यह कहा जा सकता है कि 'स्कीमा सिद्धांत' विद्यार्थियों की पठन संबंधी समस्याओं से जूझने के लिए उपयोगी उपकरण है। विद्यार्थी किस तरह समझते हैं या किन परिस्थितियों में नहीं समझ पाते, इनकी रूपरेखा बनाकर शिक्षक विभिन्न पद्धतियों का विकास कर सकते हैं, जो उपर्युक्त पठन संबंधी समस्याओं का निदान कर सकें।

संदर्भ

- इरविन, जे. 1980. 'द इफेक्ट्स ऑफ़ एक्सप्लिसिटनेस एंड क्लॉज आर्डर ऑन द काम्प्रिहेन्सन ऑफ़ रिवर्सिबल कॉजल रिलेशनशिप्स'. *रीडिंग रिसर्च क्वार्टर्ली*. वॉल्यूम 15(4).
- एंडरसन, आर. 1977. *द नोशन ऑफ़ स्कीमाटा एंड द एजुकेशनल इंटैराइज*. इन आर.सी. एंडरसन, आर.जे. स्पैरो एंड डब्ल्यू.ई. मोन्टाज (एडि.) *स्कूलिंग एंड द एक्विजिशन ऑफ़ नॉलेज*, हिल्सडेल. एन.जे. एर्लबाम.
- सी., आर.ई. रेनॉल्ड्स, डी.एल. शैलर एंड ई.टी. गोएट्ज. 1977. *फ्रेमवर्क फ़ॉर कॉम्प्रिहेंडिंग डिस्कोर्स*. *अमेरिकन एजुकेशनल रिसर्च जर्नल*. वॉल्यूम 14, पृष्ठ 367–382.
- , आर.जे. स्पैरो एंड एम.सी. एंडरसन. 1978. *स्कीमाटा ऐज स्कैफ़ोल्डिंग फ़ॉर द रिप्रजेंटेशन ऑफ़ इन्फ़ॉर्मेशन इन कनेक्टेड डिस्कोर्स*. *अमेरिकन एजुकेशनल रिसर्च जर्नल*. वॉल्यूम 15(3). पृष्ठ 433–440.
- , बी.बी. आर्मब्रस्टर एंड आर.एन.केंटर. 1980. *हाऊ क्लियरली रिटेन आर चिल्ड्रन्स टेक्स्टबुक्स? ऑर, ऑफ़ ब्लेडरवर्त्स एंड अल्फ़ा*. अगस्त. (एरिक डॉक्यूमेंट रिप्रोडक्शन सर्विस न. ईडी. पृष्ठ 192–275).
- कुन, टी.एस. 1962. *द स्ट्रक्चर ऑफ़ साइंटिफ़िक रिवाल्यूशन्स*. यूनिवर्सिटी ऑफ़ शिकागो प्रेस. शिकागो.
- कोलिंस, ए., जे.एस. ब्राउन एंड के. लार्किन. 1980. *इन्फ़ेरेन्स इन टेक्स्ट अंडरस्टैंडिंग*. इन आर.जे. स्पैरो, बी.सी. ब्रूस एंड डब्ल्यू.एफ़. ब्रूअर (एडि.). *थ्योरिटिकल इश्यूज इन रीडिंग काम्प्रिहेंशन*, हिल्सडेल एन.जे. एर्लबाम.
- कोलिंस, ए.एम. एंड एम. आर. किलन 1969. *रिट्रीवल टाइम फ़्रॉम सीमेंटिक मेमरी*. *जर्नल ऑफ़ वर्बल लर्निंग एंड वर्बल बिहेवियर*. वॉल्यूम 8, पृष्ठ 240–247.
- गार्डन, सी.जे. 1980. *द इफेक्ट्स ऑफ़ इन्स्ट्रक्शन इन मेटाकाम्प्रिहेंशन एंड इन्फ़ेरेन्सिंग ऑन चिल्ड्रन्स काम्प्रिहेंशन एबिलिटीज*. अनपब्लिशड डॉक्टरल डिजर्टेशन यूनिवर्सिटी ऑफ़ मिनेसोटा.
- जॉन्स्टन. पी. 1981. *बैकग्राउंड नॉलेज, रीडिंग काम्प्रिहेंशन एंड टेस्ट बायस*. अनपब्लिशड डॉक्टरल डिजर्टेशन. यूनिवर्सिटी ऑफ़ इलिनोइस.
- एंड पी.डी. पियरसन. 1982. *प्रायर नॉलेज, कनेक्टिविटी एंड द एसेसमेंट ऑफ़ रीडिंग काम्प्रिहेंशन*. अर्बाना शैम्पेन— यूनिवर्सिटी ऑफ़ इलिनोइस. सेंटर फ़ॉर द स्टडी ऑफ़ रीडिंग (टेक रिपो.)
- थामस, एस. 1982. *अ कम्पेरिजन ऑफ़ डिफ़्रेंट एप्रोचेस टू वॉक्यूबुलरी इन्स्ट्रक्शन*. अनपब्लिशड डॉक्टरल डिजर्टेशन. यूनिवर्सिटी ऑफ़ विंसेकोसिन.

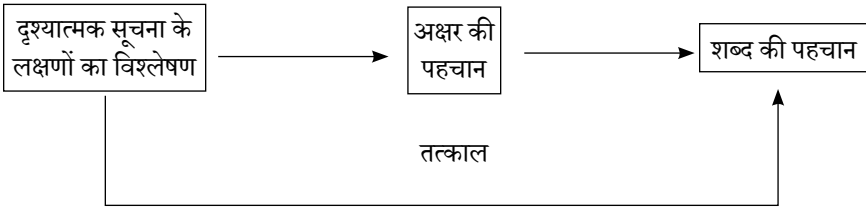
- पियाजे, जे. 1952. *द ओरिजिन्स ऑफ़ इन्टेलीजेन्स इन चिल्ड्रेन* (2 एडि.) इन्टरनेशनल यूनिवर्सिटीज़ प्रेस. न्यूयॉर्क.
- पियर्सन, पी.डी.एंड डी.डी. जॉन्स्टन. 1978. *टीचिंग-रीडिंग काम्प्रिहेन्सन*. हॉल्ट, राइनहार्ट एंड विंस्टन. न्यूयॉर्क.
- , जे. हैन्सन. एंड सी. गॉर्डन. 1978. *द इफ़ेक्ट ऑफ़ बैकग्राउंड नॉलेज आन यंग चिल्ड्रेन्स काम्प्रिहेन्सन ऑफ़ एक्सप्लिसिट एंड इम्प्लिसिट इन्फॉर्मेशन*. जर्नल ऑफ़ रीडिंग बिहेवियर. वॉल्यूम 11 (3), पृष्ठ 201–209.
- एंड आर. स्पाइरो. 1980. *टुवार्ड ए थियोरी ऑफ़ काम्प्रिहेन्सन इन्स्ट्रक्शन*. टॉपिक्स इन लैंग्वेज डिस्आर्डर्स. वॉल्यूम 1, पृष्ठ 71–88.
- बार्टलेट, बी.जे. 1978. *टॉप लेवल स्ट्रक्चर ऐज ऐन आर्गनाइजेशनल स्ट्रैटजी फ़ॉर रिकॉल ऑफ़ क्लासरूम टेक्स्ट*. अनपब्लिशड डॉक्टोरल डिजर्टेशन. एरिजोना स्टेट यूनिवर्सिटी.
- मार्शल, एम. एंड. एम.डी. ग्लॉक. 1979. *काम्प्रिहेन्सन ऑफ़ कनेक्टेड डिस्कॉर्स; अ स्टडी इन टू द रिलेशनशिप्स बिटविन द स्ट्रक्चर ऑफ़ टेक्स्ट एंड इन्फॉर्मेशन रिकॉलड*. रीडिंग रिसर्च क्वार्टर्ली वॉल्यूम 14 (1), पृष्ठ 10–56.
- मिन्सकी, एम. 1975. *ए. फ़्रेमवर्क फ़ॉर रिप्रेजेंटिंग नॉलेज*. इन पी.एच. विन्सटन (एडि.) . *द साइकोलॉजी ऑफ़ कंप्यूटर विज़न*. मैकग्राहिल्स न्यूयॉर्क.
- रूमेलहार्ट, डी.ई. 1980. *स्कीमाटा, द बिल्डिंग ब्लॉक्स ऑफ़ कामिनिशन*. इन आर. जे. स्पाइरो, बी.सी. ब्रूस एंड डब्ल्यू.एफ. ब्रेवर (एडि.) *थ्योरिटिकल इश्यूज इन रीडिंग काम्प्रिहेन्सन*. एर्लबाम हिल्सडेल एन. जे.
- एंड ए. आरटोनी. 1977. *द रिप्रेजेन्टेशन ऑफ़ नॉलेज इन मेमरी इन आर.सी. एंडरसन आर. जे. स्पैरो एंड डब्ल्यू. एफ. मोन्टाज (एडि) स्कूलिंग एंड एक्विजिशन ऑफ़ नॉलेज*. एर्लबाम हिल्सडेल एनजे.
- लिनडसे, पी. एंड डी नार्मन. 1972. *ह्यूमैन इन्फॉर्मेशन प्रोसेसिंग*. एकेडमिक प्रेस, न्यूयॉर्क.
- लैंगर, जे. 1980. *रिलेशन बिटविन. लेबल्स ऑफ़ प्रायर नॉलेज एंड द ऑर्गनाइजेशन ऑफ़ रिकॉल*. इन एम.एल. कामिल एंड एजे. (एम.ओ.इ) (एडिटर्स) *पर्सपेक्टिव ऑन रीडिंग रिसर्च एंड इन्स्ट्रक्शन*. नेशनल रीडिंग कान्फ़्रेंस वाशिंगटन. डी.सी.
- शैंक, आर.सी. एंडरसन आर. जे. स्पाइरो एंड डब्ल्यू. एफ. मोन्टाज (एडि.) *स्कूलिंग एंड एक्विजिशन ऑफ़ नॉलेज*. एर्लबाम हिल्सडेल एनजे.
- एंडरसन, आर. जे. स्पाइरो एंड डब्ल्यू. एफ. मोन्टाज (एडि) *स्कूलिंग एंड एक्विजिशन ऑफ़ नॉलेज*. एर्लबाम, हिल्सडेल, एनजे.
- . 1972. *कान्सेप्चुअल डिपेन्डेन्सी. अ थ्योरी ऑफ़ नैचुरल लैंग्वेज अंडर स्टैंडिंग*. कामिनिटिव साइकोलॉजी. वॉल्यूम 3, पृष्ठ 552–631.
- शोबेन ई.जे. 1980. *थ्योरी ऑफ़ सीमेंटिक मेमरी. एप्रोच टू नालेज एंड सेन्टेन्स क्राम्पिहेन्सन*. इन आर. ज. स्पाइरो, बी.सी. ब्रूस एंड डब्ल्यू.एफ. ब्रूअर (एडि.) *थ्योरिटिकल इश्यूज इन रीडिंग काम्प्रिहेन्सन* *प्रॉब्लम साल्विंग स्कीमा विद क्वेश्चन जेनरेशन फ़ॉर काम्प्रिहेन्सन ऑफ़ कॉम्पलेक्स शॉर्ट स्टोरीज*. रीडिंग रिसर्च क्वार्टरली. वॉल्यूम 17(2). पृष्ठ 166–186.

- स्टाफर, आर. जी. 1969. *डाइरेक्टिंग रीडिंग मच्योरिटी ऐज अ कॉग्निटिव प्रोसेस*. हार्पर एंड रो, न्यूयॉर्क.
- स्मिथ, एफ. 1975. *काम्प्रिहेन्सन एंड लर्निंग*. हॉल्ट रिंकर्ट एंड विंस्टन, न्यूयॉर्क.
- सिंगर, एच., एंड डी. डॉन्लोन. 1982. *एक्टिव कॉम्प्रिहेन्सन. प्रॉब्लम सॉल्विंग स्कीमा विद क्वेश्चन जेनरेशन फॉर काम्प्रिहेन्सन ऑफ कॉम्प्लेक्स शॉर्ट स्टोरीज. रीडिंग रिसर्च क्वार्टर्ली*. वॉल्यूम 17 (2). पृष्ठ 166–186.
- हर्बर, एच.एच. 1970. *टीचिंग रीडिंग इन कंटेड एरियास*. एंजलवुड. क्लिफ्स. एन.जे. प्रेन्टिस हॉल.
- हांफ्र, एम.बी. 1971. मैपिंग— अ टेक्निक फॉर ट्रांसलेटिंग रीडिंग इनटू थिंकिंग. *जर्नल ऑफ रीडिंग*. वॉल्यूम 14 (4). पृष्ठ 225–230, 270.
- हेगन, जे. 1979. *सीमेंटिकली ओरिएंटेड अप्रोचेस टू प्री रीडिंग वॉक्यूबुलरी इन्सट्रक्शन*. *अन्यब्लिशड डॉक्टोरल डिजरटेशन*. यूनिवर्सिटी ऑफ विस्कॉन्सिन
- हेन्सन, जे. 1981. *द इफेक्ट्स ऑफ इन्फेरेन्स ट्रेनिंग एंड प्रैक्टिस ऑन यंग चिल्ड्रन्स काम्प्रिहेन्सन. रीडिंग रिसर्च क्वार्टर्ली*. वॉल्यूम 16, पृष्ठ 391–417.
- एंड पी.डी. पियर्सन. 1982. *ऐन इन्सट्रक्शनल स्टडी— इम्प्रूविंग द इन्फेरेण्शियल काम्प्रिहेन्शन ऑफ फोर्थ ग्रेड गुड एंड पुअर रीडर्स*. अर्बाना शैम्पेन— यूनिवर्सिटी ऑफ इलिनोइस, सेंटर फॉर द स्टडी ऑफ रीडिंग (टेक.रि.)

3. अर्थ की पहचान

—फ्रैंक स्मिथ*

शब्दों की पहचान के लिए अक्षरों की पूर्व पहचान होना ज़रूरी नहीं है, खासतौर से उन शब्दों की तत्काल पहचान के लिए, जिनसे पाठक परिचित हैं और जो शब्द उनके परिचित शब्द भंडार (Sight vocabulary) का हिस्सा हैं। अक्षरों की पूर्व पहचान तभी प्रासंगिक होती है, जब शब्दों को तत्काल पहचानना न जा सके, वह भी कुछ हद तक ही। इस पहचान की प्रासंगिकता इस बात की संभावना पर निर्भर करती है कि पाठक के पास संदर्भ और अन्य चीज़ों की कितनी सूचना है। इन विकल्पों को आकृति 3.1 में इस प्रकार दिखाया गया है—



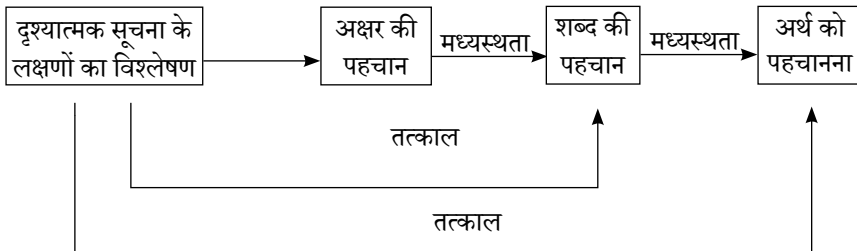
आकृति 3.1 तत्काल तथा मध्यस्थता, यानी बीच की कड़ी द्वारा शब्द की पहचान

अब मैं, यह दिखाना चाहता हूँ कि अर्थपूर्ण समझ के साथ पढ़ने के लिए (जिसे मैं पाठ में अर्थ की पहचान कहूँगा) शब्दों की पूर्व पहचान आवश्यक नहीं है। शब्दों व अक्षरों की पूर्व पहचान करने में जो लक्षणों के विश्लेषण की प्रक्रिया (Feature-analytic Process) होती है, वही दृश्यात्मक सूचना से तत्काल अर्थ समझने के लिए भी इस्तेमाल की जा सकती है। अर्थ की पहचान के लिए कभी-कभी मध्यस्थता, यानी बीच की कड़ी की भी ज़रूरत होती है, क्योंकि कुछ कारणों से पाठ्यसामग्री का अर्थ तुरंत निर्धारित नहीं किया जा सकता। फिर भी प्रत्येक शब्द की पूर्व पहचान के द्वारा संभावित अर्थों के बारे में निर्णय लेने का प्रयास करना काफ़ी हद तक व्यर्थ होगा और उसके सफल होने की गुंजाइश कम है।

दूसरे शब्दों में, जिस तरह शब्द की तुरंत पहचान करना, अकेले अक्षर को पहचानने पर निर्भर नहीं है, उसी तरह अर्थ को तत्काल पहचानना एक अकेले शब्द को पहचानने

*ए नॉन साइक्लॉजिस्ट फोर हिज रिसर्च इनटू एजुकेशनल सिस्टम्स एंड द नेचर ऑफ़ लर्निंग

पर निर्भर नहीं करता है। दूसरे तरीकों को आकृति 3.2 में इस प्रकार प्रदर्शित किया गया है। इसके तर्क को तीन चरणों में दिखाया गया है—



आकृति 3.2 तत्काल तथा मध्यस्थता द्वारा अर्थ को पहचानना

1. तत्काल अर्थ की पहचान कर ली गई है, इसे दर्शाना— सामान्यतः पाठक शब्दों की पहचान से पहले अर्थ की पहचान कर सकते हैं और कर लेते हैं।
2. अर्थ की तत्काल पहचान किस प्रकार की जाती है, इसे प्रस्तावित करना।
3. अर्थ की तत्काल पहचान करना कैसे सीखा जाए, इस पर चर्चा करना।

अंतिम भाग में मैंने संक्षेप में, अर्थ पहचानने के लिए मध्यस्थता या सीधे अर्थ को न समझ पाने की स्थिति में पाठक क्या करता है, इसकी चर्चा की है।

पढ़ने में अर्थ का प्रयोग

पाठक हमेशा प्रत्येक शब्द को पहचानने के लिए अर्थ की सहायता लेते हैं न कि शब्दों को पहचानकर अर्थ समझने की मेहनत करते हैं। यह बात पहले ही प्रदर्शित की जा चुकी है।

मैं, यहाँ उस प्रयोग का उदाहरण ले रहा हूँ, जिसमें दर्शाया गया है कि एक छपी हुई पंक्ति पर नज़र डालने से जो कि एक सेकंड पढ़ने के बराबर है, मैं एक पाठक चार से पाँच शब्द पहचान सकता है, बशर्ते वे सार्थक क्रम में हों। अगर शब्द एक-दूसरे से संबद्ध न हों तो पाठक आधे शब्द भी नहीं पहचान पाता है, लेकिन एक सार्थक पाठ्यसामग्री से दूसरे विकल्पों को कम करने के लिए पाठक गैर-दृश्यात्मक सूचना का चुनाव कर सकता है। ऐसा इसलिए, ताकि दिमाग एक सेकंड में जितनी दृश्यात्मक सूचना को ग्रहण कर सकता है, कम से कम उससे दोगुना कर पाए और इस तरह दो-एक शब्दों की जगह पर चार या पाँच शब्दों की पहचान कर पाए। पाठक के पास जो गैर-दृश्यात्मक सूचना पहले से

होती है, वह केवल अर्थ हो सकती है या फिर भाषा में जिस तरह शब्द संयोजित होते हैं, उसका पूर्व अनुभव। यह न केवल व्याकरणिक है, बल्कि उसका एक अर्थ होता है।

सतत् सरोकार

यह समझना बहुत महत्वपूर्ण है कि जिस स्थिति की अभी चर्चा की गई है, उसमें पाठक लगातार अर्थ गढ़ता है। सार्थकता एक पंक्ति में मौजूद हर शब्द को पहचानने की प्रक्रिया को बढ़ावा देती है। ऐसा नहीं कि पाठक शब्द-पहचान-युक्ति से पहले किसी वाक्य में केवल एक या दो शब्द की पहचान करता है और उसके बाद शेष का सार्थक अनुमान लगाता है, मानो वाक्य में इन शब्दों का दूसरे शब्दों से कुछ संबंध न हो। वास्तव में, ठीक यही प्रयोग दिखाता है कि यदि दो शब्दों की पहचान करने से दूसरों के बारे में संकेत मिलता हो, तब दूसरे शब्दों की पहचान करने के लिए कोई समय नहीं बचेगा, जिनमें कोई सार्थक संबंध न हो, ऐसे असंबद्ध शब्द बहुत-से-बहुत दो होंगे। जहाँ शब्दों का क्रम सार्थक होता है, वहाँ शुरू से आखिर तक हर शब्द का अर्थ समझना आसान हो जाता है। ठीक उसी तरह जिस तरह प्रत्येक शब्द की सार्थक पहचान तभी हो पाती है, जहाँ शब्दों की प्रत्येक इकाई का अपने आप में अकेले कोई महत्त्व नहीं है। अर्थ समझने की प्रक्रिया में अवांछित (और असंभव) विकल्प पहले ही हटते रहते हैं।

जिस उदाहरण की अभी-अभी चर्चा की गई है, वह ऐतिहासिक है। इसका वर्णन पहली बार एक शताब्दी पूर्व किया गया था। एक तरह से तथ्य यह है कि पढ़ते समय हर बार अर्थ प्रत्येक शब्द की पहचान में सहायता करता है। यदि हम शब्द में छिपे संभावित अर्थ के बारे में पूर्व अंतर्दृष्टि के बिना आँख मूँदकर एक के बाद एक केवल शब्द-पहचान पर ही जुटे रहेंगे तो सार्थक ढंग से पढ़ना असंभव हो जाएगा। आँखों की गति पर किए गए अध्ययन यह बता सकते हैं कि कुछ परिस्थितियों में आँखें थोड़ी देर के लिए सारे या अधिकांश अक्षरों पर टिक सकती हैं, लेकिन यह तथ्य अप्रासंगिक है। आँखें एक समय में एक शब्द ही देख सकती हैं, परंतु मस्तिष्क शब्दों को एक अर्थपूर्ण समूह में देखता है। धीमी गति का पठन कुशल पठन नहीं है, क्योंकि इसकी प्रवृत्ति होती है कि यह दृष्टि को सीमित कर देता है। अल्पकालीन स्मृति पर अतिरिक्त बोझ डालता है तथा पाठक को भाषा की अनेकार्थता में उलझा देता है। जो भाषा सार्थक नहीं है, उसे जल्दी-जल्दी पढ़ना बहुत कठिन है। यदि आप आगे दिए गद्यांश पढ़ने की कोशिश करें तो खुद इसका अनुभव कर सकते हैं—

Be might words those what into insights prior no with, another after word one identify to striving blindly, along laboured we if impossible be would reading because. read we time every replicated is words individual of identification the facilitates meaning that fact the, sense a in but.

मुझे उम्मीद है कि जिन शब्दों को अभी आपने पढ़ने की कोशिश की है, वे अंग्रेजी के सार्थक वाक्य हैं, क्योंकि पिछले अनुच्छेद में मैंने खुद इसका इस्तेमाल किया है। फ़र्क केवल यह है कि यहाँ इसे उलटे क्रम में लिखा है। जिस गति एवं सरलता से आप किसी वाक्य को सीधे एवं उलटे क्रम में पढ़ सकते हैं, वह केवल इस बात से निर्धारित होता है कि आपने उसके अर्थ को समझा है या नहीं। यदि आपने इसी अनुच्छेद का मुखर वाचन किया तो संभवतः आपको ऐसा ही सुनाई देगा, जैसा स्कूल में ढेर सारे 'अकुशल पाठक' को सुनकर लगता है। ये 'अकुशल पाठक' नीरस और एकरस स्वर में एक-एक करके शब्द को पहचानने के लिए जूझते रहते हैं, मानो हरेक शब्द अकेला हो और उसका एक-दूसरे से कोई लेना-देना न हो। ऐसे बच्चे यह मानते हैं और शायद उन्हें यह बताया भी जाता है कि अर्थ की चिन्ता करना बाद की बात है। शब्द को सही ढंग से पहचानो, अर्थ तो अपने आप में समझ में आ जाएगा। उन्हें शायद यह नहीं बताया जाता है कि अर्थ से शब्दों की पहचान में मदद मिलती है।

उदाहरण के लिए, एक प्रसारणकर्ता, जो कि एक पेशेवर पाठक हैं, उन्हें आगे क्या पढ़ना है, उसकी पहले से समझ बना लेने का महत्त्व जानते हैं, इसलिए वे पढ़ने के पहले अपने आलेख को सरसरी निगाह से देख लेना चाहते हैं। किसी उपन्यास या तकनीक संबंधी किताब को पढ़ते हुए आगे दृष्टि डाल देने से भी उसके मौन पठन में मदद मिलती है। हमें एक अंदाज़ा लग जाता है कि आगे क्या होगा और फिर जहाँ ज़रूरी हो, पीछे जाकर हम किसी विशेष बिंदु को पढ़ सकते हैं। तेज़ी से पढ़ने से किसी विषय की एक समझ बन जाती है।

धीमी गति का पठन याद करने या विस्तृत वर्णन पर गौर करने के लिहाज़ से ज़रूरी हो सकता है, लेकिन यह तभी संभव है, जब आप उसका अर्थ समझ चुके हों। इसके ठीक उलट अर्थ, पठन संबंधी कुछ कार्यों में व्यवधान भी डालता है। प्रूफ़रीडर यदि पठन सामग्री

के अर्थ पर ध्यान देने लगे तो उनसे मुद्रण की गलतियाँ अनेदखी हो जाएँगी। वे शब्दों तथा उनकी वर्तनी पर ध्यान देते हैं कि क्या होना चाहिए न कि इस पर कि वास्तव में क्या है। इसलिए कभी-कभी प्रूफरीडर खासतौर पर आलेख को उलटे क्रम में पढ़ते हैं, ताकि वे एक-एक शब्द और उसकी वर्तनी पर ध्यान दे सकें, अर्थ पर नहीं। किंतु वे ऐसा करते हैं तो अर्थ की विसंगतियाँ नज़रंदाज़ हो जाती हैं। उनकी इस दुविधा से यह बात उजागर होती है कि एक-एक शब्द पर ध्यान देना और अर्थ पर ध्यान देना वैकल्पिक है। दोनों पढ़ने के समवर्ती पहलू नहीं हैं।

पढ़ते समय अर्थ को पहले से प्रयोग में लाना यह सुनिश्चित करता है कि जब प्रत्येक शब्द को पहचानना ज़रूरी होता है, जैसे— ज़ोर-ज़ोर से पढ़ते समय, तब न्यूनतम दृश्यात्मक सूचना का उपयोग होगा। इसके परिणामस्वरूप अक्सर गलतियाँ होंगी। यदि पाठक को इसका पहले से ही यह अंदाज़ा हो कि शब्द क्या होगा तो उसे उस शब्द की पुष्टि करने के बारे में और समय लगाने की ज़रूरत नहीं है। इसीलिए बहुत अनुभवी पाठक भी किसी एकदम अलग से दिखने वाले शब्द को गलत पढ़ देते हैं और इसमें कोई बहुत नयी बात नहीं है। जैसे लिखा हो ‘Announced’ या ‘Reported’, लेकिन उसे ‘Said’ पढ़ दिया जाता है, लेकिन उससे अर्थ में कोई खास अंतर नहीं पड़ता। पढ़ने की शुरुआत करने वाले की भी अक्सर ठीक यही प्रवृत्ति दिखती है। यह दिखलाता है कि बच्चे जब पढ़ना सीखते हैं, तभी वे अर्थ को जानने का प्रयास करते हैं (अव्वल तो ज़रूरी यह कि उन्हें पढ़ने की जो सामग्री दी गई है, उसके सार्थक होने की गुंजाइश हो।) इस प्रकार की गलतियों को कभी-कभी अपसंकेत (Miscues) कहा जाता है न कि गलती/चूक, ताकि उससे यह बोध नहीं हो कि उसमें कुछ बुरा है। (गुडमैन, 1969) सही तरह से नहीं पढ़ना— यह पठन दर्शाता है कि प्रारंभिक पाठक धाराप्रवाह पढ़ने वाले पाठकों की तरह ही पढ़ने का प्रयत्न करते हैं। उनका ध्यान मुख्य रूप से शब्दों की पहचान की जगह पर अर्थ निकालने की ओर होता है। निःसंदेह प्रत्येक शब्द पर बहुत कम ध्यान दिया जाता है तो कभी-कभी उसका परिणाम यह होता है कि उसका अर्थ ही बदल जाता है। हाँ, अर्थ के साथ पढ़ने का सबसे बड़ा लाभ यह होता है कि पाठक अपनी गलतियों के प्रति जागरूक हो जाते हैं और यह जागरूकता आने से अर्थ पर असर पड़ता है। यह जागरूकता समझ और अर्थ के संबंध को और पुख्ता कर देती है। अच्छी तरह पढ़ पाने और ठीक से न पढ़ पाने वाले बच्चों में एक महत्वपूर्ण अंतर यह नहीं है कि अच्छे पाठक कम गलतियाँ करते हैं, बल्कि यह है कि पाठक अपनी गलतियों को दोबारा पढ़ते हैं और गलतियों को सुधारते

हैं जो बच्चे अर्थ के साथ नहीं पढ़ते उनके ध्यान देने योग्य गलतियों के प्रति जागरूक होने की संभावना भी कम होती है।

अर्थ की प्रमुखता

कोलर्स, 1966; ने एक विशिष्ट उदाहरण के द्वारा यह बताया कि किस तरह अर्थ प्रत्येक शब्द की पहचान के स्थान पर प्रमुखता पा लेता है। अंग्रेजी एवं फ्रेंच भाषा को प्रवाह से पढ़ने वाले द्विभाषी लोगों को ऐसी अर्थपूर्ण पाठ्यसामग्री दी गई, जिसमें अंग्रेजी से फ्रेंच के हर दो-तीन शब्दों में फेर-बदल किया गया था, लेकिन उसमें अर्थ निहित था। उदाहरण के लिए—

*His horse, followed de deux bassets, faisait la terre
resonner under its even tread. Des gouttes de verglas
stuck to his manteau. Dne violente brise was blowing.
One side de l'horizon lighted up, and dans la blancheur
of the early morning light, il aperut rabbits hopping at
the bord de leur terriers.*

जिन लोगों ने उपरोक्त अनुच्छेद पढ़ा, वे ठीक से पढ़कर समझ पाए, परंतु वे उसे पूरा पढ़ने के बाद यह याद नहीं रख सके कि कौन-से शब्द अंग्रेजी भाषा में थे और कौन-से फ्रेंच भाषा में थे। सबसे अधिक उल्लेखनीय है कि उन्होंने बहुत जल्दी-जल्दी एक भाषा के शब्द के लिए दूसरी भाषा का उचित शब्द प्रतिस्थापित किया था। उन्होंने शायद 'Porte' पढ़ा, जहाँ शब्द था 'Door' या 'Hand' पढ़ा, जहाँ शब्द 'Main' दिया गया था। अर्थ सही प्राप्त किया गया, परंतु भाषा गलत थी। इसका अर्थ यह नहीं है कि वे प्रत्येक शब्द को बिल्कुल नहीं देख रहे थे। अर्थ पूर्णतः पूर्वानुमानित नहीं किया जा सकता था, परंतु उन्होंने अनुमान से शब्दों को देखा तथा अर्थ का पता ठीक उसी तरह लगा लिया, जिस तरह अंग्रेजी का वक्ता 2000 को देखकर समझेगा 'दो हजार' जबकि फ्रेंच वक्ता इसी मुद्रित अंक को देखकर समझेगा 'ड्यूक्स मिलेस' (Deux milles)।

पहले जो चर्चा की जा चुकी है, उसमें एक महत्वपूर्ण और शायद मुश्किल बिंदु यह है कि किस शब्द का इस्तेमाल हुआ है। बिना ठीक-ठीक उस पर ध्यान दिए शब्दों का अर्थ निकालना मुमकिन है। दूसरी तरह से कहा जाए तो जब 'Door' लिखा होता है तो हम उसका मतलब 'दरवाज़ा' समझ जाते हैं। इसके लिए उस शब्द को ज़ोर से बोलने की

ज़रूरत नहीं होती है और न ही हम अपने को यह बताते हैं कि यह शब्द 'door' है। लिखे हुए शब्द सीधे-सीधे अर्थ का बोध कराते हैं। वे मौखिक भाषा के लिए मध्यस्थ नहीं हैं। अंग्रेज़ी में एक यह उदाहरण बड़ा साफ़ है, जिसमें एक ही ध्वनि वाले शब्दों के लिए भिन्न-भिन्न वर्तनी है, जैसे— 'their' और 'there' है। *The children left their books behind.....* इस वाक्य में वर्तनी की चूक खोजना आसान है, क्योंकि इसमें जो 'their' शब्द आता है उसका अर्थ वाक्य से मेल नहीं खाता। 'Their' और 'There', 'Read', और 'Reed', 'So', 'Sew' और 'Sow' के बीच का अंतर स्पष्ट है। यह इसलिए नहीं है कि भिन्न वर्तनी भिन्न ध्वनि को बतला रही है, क्योंकि ऐसा है नहीं। यह अंतर इसलिए स्पष्ट है कि शब्दों का भिन्न रूप रंग, भिन्न-भिन्न अर्थ को बतलाता है। प्रत्येक शब्द की दृश्यात्मक बनावट सीधे अर्थ की ओर संकेत करती है।

पाठक, सीधे-सीधे अर्थ निकालने के लिए पढ़ सकते हैं, पढ़ते हैं और उन्हें पढ़ना ही चाहिए। यह तथ्य चीनी भाषा जैसी लिखित भाषा में स्पष्ट है। चीनी भाषा किसी विशेष ध्वनि-व्यवस्था पर आधारित नहीं है। इस पर तर्क करना बेकार होगा कि उसमें आने वाला लिखित प्रतीक 'i' घर के लिए प्रयुक्त चीन की राजभाषा 'मैंडारिन' का है या वहाँ की पारंपरिक भाषा 'कैटनीज़' का है। यह बहस इसलिए बेकार है कि यह प्रतीक सीधे एक अर्थ का संकेतक है। इस समय मेरा दावा यह है कि कोई भी लिखित भाषा सीधे अर्थ के लिए ही पढ़ी जाती है, जैसे— चीनी भाषा पढ़ी जाती है। कुछ लिखित भाषाएँ कमोबेश किसी मौखिक भाषा की ध्वनि-व्यवस्था से जुड़ी होती हैं, यह काफ़ी हद तक संयोग की बात है।

कम से कम पाठक के लिए तो ऐसा ही है। जैसा कि मैंने पहले सुझाया था— वाक्य में आने वाले अक्षर मुमकिन है कि पूरी तरह से लेखक की सहूलियत के आधार पर चुने गए होंगे। निश्चय ही इसका कोई प्रमाण नहीं है कि धाराप्रवाह पढ़ने वाले परिचित शब्दों को पहचानने में ही अक्षरों की पहचान करें। कम-से-कम अंग्रेज़ी भाषा की वर्तनी अपरिचित शब्दों की पहचान के लिए अपर्याप्त है।

लिखित भाषा सीधे अर्थ की ओर संकेत करती है, इसका जो मैं अंतिम उदाहरण दे रहा हूँ, वह ज़्यादा पैना है, क्योंकि यह उदाहरण दिमागी चोट वाले मरीज़ों के अध्ययन से आया है। इसमें देखा गया कि 'सटीक' शब्द चुनने में असमर्थ लोग भी 'Ill' को 'Sick', 'City' को 'Town' और 'Ancient' को 'Historic' पढ़ रहे थे, जिनका आपस में

कोई रिश्ता न था। मार्शल एवं न्यूकोम्ब, 1966; अथवा 'Injure' को Hurt, 'Quiet' को 'listen' और 'Fly' को Air शैलिस एवं वारिंगटन, 1975; पढ़ रहे थे।

अवबोध और अनिश्चितता में कमी

मैंने, यह बताने का प्रयास किया है कि धाराप्रवाह पढ़ने वालों और पढ़ने की शुरुआत करने वालों— दोनों के लिए शब्दों की पहचान में अर्थ को दो तरीके से प्राथमिकता दी जाती है। एक तो यह कि क्रमानुसार शब्दों के अर्थ के ज़रिए अलग-अलग शब्दों की पहचान होती है, जिसमें अपेक्षाकृत कम दृश्यात्मक सूचना का इस्तेमाल होता है। दूसरे, यह कि एक-एक शब्द को सटीक तरीके से पहचाने बगैर लिखित शब्दों को समझा जा सकता है। आमतौर पर अर्थ की पहचान के दोनों पहलू एक साथ काम करते हैं। हम काफ़ी कम दृश्यात्मक सूचना का इस्तेमाल करके पाठ को समझते हैं। एक-एक शब्द को पहचानने के लिए जितनी दृश्यात्मक सूचना की ज़रूरत होती है, यह उसके मुकाबले कम होती है और दरअसल इसमें एक-एक शब्द को पहचानने के दोनों पहलू समान प्रक्रिया को दर्शाते हैं। पाठक को अर्थ गढ़ने की प्रक्रिया में उससे संबंधित सवालों (अथवा पूर्वानुमानों) को ध्यान में रखकर जो निर्णय लेने होते हैं, उसमें न्यूनतम दृश्यात्मक सूचना का इस्तेमाल करने की प्रक्रिया होती है।

इस अध्याय में, मैं समझ के पर्याय की तरह एक थोड़े अटपटे से 'अर्थ की पहचान' पद का प्रयोग कर रहा हूँ। मैं इस तथ्य को रेखांकित करना चाहता हूँ कि एक पाठक किसी पाठ का अर्थ जिस तरह गढ़ता है, वह उसी पाठ के अलग-अलग अक्षरों या शब्दों की पहचान गढ़ने की प्रक्रिया से कतई भिन्न नहीं है। इसकी जगह मैं अपेक्षाकृत पुराने मनोवैज्ञानिक पद 'आशंका' (Apprehension) का भी इस्तेमाल कर सकता हूँ, ताकि अर्थ को जैसे समझा जा रहा है, उसे हम पकड़ पाएँ, लेकिन इससे समझ और अक्षर व शब्द-पहचान के बीच की समानता धुँधली पड़ जाएगी। बोध के बारे में अलग यह है कि पाठक, अर्थ गढ़ने के लिए उठ रहे प्रश्नों को अर्थ-ग्रहण के लिए इस्तेमाल करते हैं न कि अक्षरों और शब्दों के लिए। अर्थ की पहचान पद-बोध को एक सक्रिय प्रक्रिया होने पर बल देता है। सतही संरचना में अर्थ विद्यमान नहीं रहता है। पाठक, पाठ से जो अर्थ ग्रहण करते हैं, वह हमेशा जो वे पहले से जानते हैं और जो वे जानना चाहते हैं, के सापेक्ष में होता है। इस बात को दूसरी तरह से समझा जा सकता है कि बोध की प्रक्रिया में पाठक की अनिश्चितता को कम करना शामिल है। प्रश्न पूछना तथा उनके उत्तर प्राप्त करना, यही

वे विचार-बिंदु हैं जो पहले ही अक्षरों तथा शब्दों को पहचानने की परिचर्चा में लागू किए जा चुके हैं। पाठकों के पास अर्थ के बारे में स्पष्ट संकेत होने चाहिए।

पाठ्यसामग्री के एक अनुच्छेद को कम से कम तीन तरीकों से समझा जा सकता है, जैसे किसी वर्णमाला के अक्षरों की शृंखला के रूप में, किसी विशेष भाषा के शब्दों की शृंखला के रूप में अथवा ज्ञान या समझ के किसी संदर्भ में अर्थ की अभिव्यक्ति के रूप में, परंतु पाठ के अनुच्छेद में इनमें से कुछ भी नहीं होता, अगर होता भी है तो किसी हद तक ही मूल रूप से लिखित पाठ्यसामग्री (गद्यांश) पृष्ठ पर स्याही-चिह्नों का समुच्चयन है, जिन्हें व्यापक रूप से दृश्यात्मक सूचना, स्पष्ट लक्षणों और ऊपरी संरचना के विभिन्न रूपों में देखा जा सकता है। पाठ्यसामग्री में से अक्षर, शब्द या अर्थ में से पाठक जो भी देखता या समझता है, वह उसके अपने पूर्वज्ञान (गैर-दृश्यात्मक सूचना) पर निर्भर करता है, जो पाठक पठन के दौरान लाता है और उन निहित प्रश्नों पर निर्भर करता है, जो वह पूछ रहा होता है। पाठ्यसामग्री से पाठक जो वास्तविक सूचना ढूँढ़ते हैं (या जो प्राप्त करना चाहते हैं) वह अर्थ गढ़ने में उनकी मूल अनिश्चितता की स्थिति पर निर्भर करता है।

इस समय जो बात की जाने वाली है उस पर ध्यान दीजिए। उदाहरण के लिए, 'Consider, for example...' वाक्य के एक अंश की दृश्यात्मक सूचना, वर्णों के बारे में निर्णय लेने में उपयोगी होती है। जैसे कि पहला वर्ण 'C' है, दूसरा वर्ण 'O' है, तीसरा 'N' है और इसी प्रकार चौथा। दूसरा तरीका यह है कि इसी दृश्यात्मक सूचना का प्रयोग यह निर्णय लेने में किया जा सकता है कि पहला शब्द 'Consider' है, दूसरा शब्द है 'For' तीसरा शब्द है 'Example' इसी तरह आगे। पाठक, उन्हीं दृश्यात्मक सूचनाओं का प्रयोग करते हुए, उन्हीं विशिष्ट लक्षणों में से उनका चयन करता है, किंतु इस बार वह शब्दों को देखता है न कि वर्णों को। पाठक क्या देखते हैं, इस बात पर निर्भर करता है कि वे अपने संभावित प्रश्न या अनिश्चितताओं के आधार पर क्या देखना चाहते हैं।

अंत में वस्तुतः उन्हीं दृश्यात्मक सूचनाओं का उपयोग वाक्य के अर्थ के संबंध में निर्णय लेने में किया जा सकता है, जिसमें न तो शब्दों को और न ही अक्षरों को अलग-अलग रूप में देखा जाएगा। यह स्पष्ट रूप से कहना आसान नहीं है कि अर्थ के मामले में क्या पहचाना जा रहा है, बल्कि अवधारणात्मक कठिनाई के कारण यह कहना मुश्किल होता है कि अर्थ क्या है, क्योंकि व्याख्या करने के लिए प्रयोग में लाए गए शब्द पर्याप्त नहीं होते हैं। ऐसा इसलिए नहीं है कि पाठक निहित अर्थ से हटकर कुछ और सोच

रहे हों। पाठक, उन्हीं दृश्यात्मक सूचनाओं के स्रोत का उपयोग करते हुए वर्ण या शब्द की बजाय अर्थ के बारे में अपनी अनिश्चितता को कम करता है।

जैसा कि हम पहले ही देख चुके हैं, वर्णों या शब्दों की पहचान के लिए दृश्यात्मक सूचना कितनी है, यह इस बात पर निर्भर करता है कि पाठक के पास पूर्व अनिश्चितता का दायरा कितना है एवं पाठक के मस्तिष्क में विशिष्ट विकल्पों की संख्या कितनी है (तथा पाठक, लिए गए निर्णय के बारे में कितना विश्वस्त होना चाहता है)। अंग्रेजी वर्णमाला के आकार (Typeface) को ध्यान में रखते हुए, चाहे वे छोटे अक्षर हों या बड़े हों, यह आसानी से कहा जा सकता है कि अधिकतम संख्या के विकल्प 26 ही होते हैं। ऐसे ही यह दर्शाना भी आसान है कि प्रत्येक अक्षर को पहचानने के लिए दृश्यात्मक सूचना की आवश्यकता कम होती जाती है।

जैसे-जैसे एक वर्ण के विकल्प कम होते जाते हैं, वैसे-वैसे पाठक की अनिश्चितता कम होती जाती है। जितने कम विकल्प होंगे उतनी ही तेजी से या आसानी से हम अक्षर पहचान जाएँगे, क्योंकि कम विकल्पों में से चयन करना आसान हो जाता है। यह कहना आसान नहीं है कि शब्द के ज़्यादा से ज़्यादा कितने विकल्प होंगे, क्योंकि पहले वह पाठक के विकल्पों की सीमा पर निर्भर करेगा, परंतु फिर भी यह दर्शाना कठिन नहीं है कि जैसे-जैसे पाठक की अनिश्चितता घटती जाएगी, वैसे-वैसे शब्द को पहचानने के लिए दृश्यात्मक सूचना का दायरा भी घटता जाएगा। यदि हमारे पास हज़ारों के बजाय कम विकल्प हों तब शब्द को कम विशिष्ट लक्षणों से भी पहचाना जा सकता है।

अंत में यह कहना बिल्कुल असंभव है कि पाठक के एक खंड के अर्थ के लिए कितने सारे विकल्प हो सकते हैं, क्योंकि यह पूर्णतः पाठक पर निर्भर करता है कि वह क्या ढूँढ़ रहा है? परंतु पठन तब आसान व तेज़ गति से होता है, जब पाठक पाठ्यसामग्री को अर्थपूर्ण पाता है, न कि तब जब पाठक को उसे समझने में संघर्ष करना पड़े। एक अनुच्छेद के बारे में पाठक के पास अनिश्चितता जितनी कम होगी, अनुच्छेद को समझने के लिए उतनी ही कम दृश्यात्मक सूचनाओं की आवश्यकता होगी।

गैर-दृश्यात्मक सूचनाओं का प्रयोग

पहले दिए गए प्रत्येक उदाहरण में गैर-दृश्यात्मक सूचनाओं के प्रयोग से पाठकों की अनिश्चितता को पहले से कम किया जा सकता है। जिन दृश्यात्मक सूचनाओं का प्रक्रियायन किया जाना है, उन्हें सीमित किया जा सकता है। एक पाठक का अक्षरों से

मिलकर बने शब्दों के बारे में जितना अधिक पूर्वज्ञान होगा, प्रत्येक अक्षर को पहचानने के लिए उतनी ही कम दृश्यात्मक सूचनाओं की आवश्यकता होगी। पूर्वज्ञान पर आधारित अनुमानों से अवांछनीय विकल्पों को पहले से ही हटाया जा सकता है। इसी तरह पाठक किसी भाषा के व्याकरण तथा अर्थपूर्ण पदबंधों में शब्दों के एक साथ आने के बारे में जितना अधिक जानता है तथा जिस विषय पर और जिस भाषा में चर्चा की जानी है, उसकी पूर्व जानकारी होने से उसे शब्दों को पहचानने के लिए उतनी ही कम दृश्यात्मक सूचनाओं की आवश्यकता होगी। यहाँ बाद वाले उदाहरण में अर्थ का प्रयोग, गैर-दृश्यात्मक सूचनाओं के रूप में किया गया है, जो शब्दों को पहचानने के लिए दृश्यात्मक सूचनाओं की मात्रा कम कर रहा है।

बहुत-से लोग किसी उपन्यास या समाचार-पत्र के लेख का अर्थ हजार शब्द प्रति मिनट की दर से समझ सकते हैं जो कि उनकी संभावित गति से चार गुना तेज़ होता है, यदि वे हर शब्द को अर्थ की सहायता के साथ पहचानते हुए पढ़ें। यह एक भ्रांति है कि इस तरह की तीव्र गति के पठन में पाठक प्रत्येक चार शब्द में से एक शब्द को ही पहचान पाता है और यह उसका सार समझने की पर्याप्त सूचना देता है, परंतु यह दर्शाना बहुत आसान है कि एक अनुच्छेद को अच्छे ढंग से समझने के लिए चार में से एक शब्द का अर्थ समझ पाने में मात्रा से बहुत अधिक मदद नहीं मिल पाएगी। एक फ़िल्म समीक्षा के लेख से प्रत्येक चौथा शब्द यहाँ दिया जा रहा है— Many.....been.....face..... business.....sour.....If.....to.....।

गद्यांश को समझना और मुश्किल होगा। यदि चुने गए शब्द समूह में हों और उनके बीच काफ़ी अंतर हो। यदि चौथे शब्द की बजाय प्रत्येक चौथा अक्षर दिया गया हो तब अनुच्छेद किस बारे में है, यह समझना अधिक आसान हो जाएगा। फिर भी मेरा तर्क होगा कि हजार शब्द प्रति मिनट पढ़ पाना केवल तभी संभव होगा जब विलोपन (Omissions) संरचना (Featural level) के स्तर पर हो। एक कुशल पाठक को प्रत्येक शब्द में से एक अंश मात्रा की ही पहचान करने की आवश्यकता पड़ेगी या ऐसा न भी हो, यदि वे सभी लक्षण एक ही वर्ण में केंद्रित हों।

यह नहीं सोचना चाहिए कि लिखित सामग्री का अर्थ समझने के लिए कोई स्पष्ट लक्षण होते हैं, जो अक्षर एवं शब्दों के स्पष्ट लक्षणों से अलग हों। उदाहरण के लिए, 'घर' तथा 'आवास' में भौतिक रूप से जो समानताएँ हैं, वे अर्थगत लक्षणों (Semantic features) द्वारा पृष्ठ पर हम मुद्रित रूप में देखना तो चाहते हैं पर होती नहीं हैं। जहाँ तक

अर्थ का संबंध है, जिन कारणों से दृश्यात्मक लक्षण या बनावट विलक्षण होते हैं, ठीक उन्हीं कारणों से वे प्रत्येक अक्षर और शब्द के लिए भी विलक्षण होते हैं। ये वे विकल्प हैं जो पहले से ही अर्थ गढ़ने की प्रक्रिया में पाठक की अनिश्चितता के रूप में मौजूद रहते हैं। इसी प्रकार के लक्षणों या बनावट का प्रयोग अक्षर 'M' को अक्षर 'H' से अलग करने के लिए किया जा सकता है और शब्द 'Mouse' को शब्द 'House' से अलग करने में भी! यही लक्षण (*we went to the mill*) और (*we went to the hill*) वाक्य के अर्थ को भी अलग करेगा। यह कहना संभव नहीं है कि वे क्या विशिष्ट लक्षण या बनावट हैं, जिन्हें पाठक अलग-अलग अर्थों को पहचानने के लिए प्रयोग में लाता है। यह इस बात पर निर्भर करेगा कि पाठक क्या ढूँढ़ रहा है? किसी भी स्थिति में अक्षरों या शब्दों के लक्षणों की व्याख्या करना संभव नहीं है। इस तथ्य से यह स्थिति और भी जटिल हो जाएगी कि हम नहीं बता सकते कि आखिर अर्थ क्या है?

अर्थ गढ़ना

किसी भी भाषा की आधारभूत संरचना (Surface structure) तथा गहन संरचना (deep structure) के बीच में अत्यधिक अंतर या खाई होने की वजह से अर्थ शब्दों से परे होता है। यह कोई नहीं कह सकता है कि अर्थ सामान्य रूप से क्या होगा। यह कोई नहीं बता सकता कि एक शब्द विशेष या शब्द-समूह का अर्थ क्या है। हम केवल अर्थ के लिए दूसरे शब्द ही सुझा सकते हैं जो कि अपने आप में बाह्य संरचना होगी। अर्थ अपने आप बाहर नहीं आ सकता। अर्थ को परिभाषित करने की असमर्थता एक सैद्धांतिक दोष या वैज्ञानिक रूप से नज़र अंदाज़ करने की बात या अनदेखापन नहीं है। हमें यह आशा नहीं करनी चाहिए कि किसी दिन कोई अद्भुत खोज की जाएगी कि अर्थ क्या है; जिससे हम यह समझ जाएँगे कि अर्थ आखिर क्या है? मैं फिर से दोहरा दूँ कि अर्थ को शब्द-जाल में नहीं बाँधा जा सकता है।

कोई पाठक लिखे हुए शब्द 'मेज़' का अर्थ सिर्फ़ इसलिए नहीं समझता, क्योंकि बोल-चाल की भाषा का यह शब्द जोर से या मन ही मन बोला गया है। क्या स्पेनिश भाषा के मेसा (Mesa) शब्द को अपने आप मन ही मन में बोल लेने मात्र से उसका अर्थ समझ जाएँगे? ऐसे ही हम लिखे गए या बोले गए शब्द 'मेज़' को नहीं समझ पाएँगे। यदि हम ऐसे कहें कि चार पैर, ऊपर से समतल सतह वाला एक फ़र्नीचर या फिर हमारे दिमाग में अर्थ के लिए कोई अन्य परिभाषा सूझे, क्योंकि उसे समझने के लिए परिभाषा भी स्वीकार्य

होनी चाहिए। यदि हम भाषा के जाल से मुक्त हो पाएँगे तो ही कोई समझ या व्याख्या बन सकेगी। समझने के लिए, असल में जो शब्द हैं वे लिखित रूप में हैं या बोले गए हैं, अर्थ की दृष्टि में गौण ही होते हैं।

सामान्य रूप से पढ़ते समय हम प्रत्येक शब्द की अलग से पहचान पर ध्यान नहीं देते, क्योंकि उस समय हम शब्दों के बारे में नहीं सोच रहे होते हैं। लिखित भाषा (बोल-चाल की भाषा की तरह) पारदर्शी होती है। हम वास्तविक शब्द से कहीं आगे अर्थ गढ़ते हैं, और जब तक अर्थ में स्पष्ट असंगति नज़र नहीं आती अथवा समझने में कोई कठिनाई नहीं आती है तब तक शब्दों पर हमारा ध्यान नहीं जाता। (हम कब शब्दों पर जानबूझकर विशेष ध्यान देते हैं, उदाहरण के लिए, जब गहराई से कविता पाठ करते हैं, पर पहली बात तो यह है कि यह एक अलग तरह का प्रश्न उठाने का परिणाम है। शब्द को जो ध्वनि हम दे सकते हैं वह उसकी शाब्दिक व्याख्या में सहायक नहीं होती और वह पूरक या वैकल्पिक भाव या अर्थ को भी स्थापित नहीं करती है।)

मुखर और मौन पठन

हालाँकि मुखर पठन के लिए शब्दों की पहचान आवश्यक है, परंतु मैंने यह स्पष्ट करने की कोशिश की है कि इस प्रकार शब्दों को पहचानना पहले से अर्थ की पूर्व पहचान पर निर्भर करता है। स्वर 'बोध' से पीछे रह जाता है तथा कुछ हद तक हमेशा ही वास्तविक पाठ से अलग हो जाता है। शब्दों या फिर पदबंधों का भी उपयुक्त अर्थ के साथ स्थानापन्न (Substitution) देने के प्रति वास्तव में पाठक जागरूक नहीं होता है। मुखर पठन करते समय भी पाठक का मुख्य सरोकार अनुच्छेद को समझने से है। लिखित पाठ्यसामग्री और 'पढ़ना' दोनों के आधार पर अप-पठन (Misreading) को; जैसे— शब्दों का स्थानापन्न केवल एक श्रोता ही बता सकता है।

आमतौर पर इस प्रकार का अप-पठन तब नहीं होता जब शब्द अर्थपूर्ण सामग्री का हिस्सा नहीं होते हैं, परंतु ऐसा कोई तरीका नहीं है जिससे हम एकाकी अथवा असंगत सूची (Arbitrary list) के शब्दों में अर्थ को खोज सकें या उसका प्रयोग इसके अलावा ऐसी स्थिति में आमतौर पर पाठक बड़े आराम से प्रत्येक शब्द को स्पष्ट रूप से पहचानने के लिए पर्याप्त दृष्टात्मक सूचनाओं को अच्छी तरह से समझ लेते हैं (शब्दों को अर्थ देने की बजाय केवल एक नाम दिया जा रहा है), क्योंकि धीरे-धीरे पढ़ने से हानि की कोई संभावना

नहीं होती है। ज़ोर-ज़ोर से पढ़ने की तरह ही मन ही मन में पढ़ना या अपने आप के लिए पढ़ना, अर्थ को समझने में कोई खास मदद नहीं कर सकता।

वास्तव में ज़ोर से पढ़ना और मन ही मन पढ़ना, पढ़ने की एक सामान्य गति और स्वर के उतार-चढ़ाव से तभी संभव है, जब आपकी पहले से समझ बनी हुई हो। शब्द या पदबंध के किसी हिस्से को मन ही मन पढ़ते हुए किसी शब्द या पदबंध के किसी हिस्से को सुनने से अर्थ समझने में कोई मदद नहीं मिलती, बल्कि इससे तो हमारी पढ़ने की गति धीमी होती है और अर्थ समझने में व्यवधान ही होता है।

अर्थ गढ़ने की प्रक्रिया को नुकसान पहुँचाए बिना बुदबुदाकर पढ़ने की आदत को (Sub vocalisation) छोड़ा जा सकता है— हार्डिक एवं पैट्रिनोविच, 1970। इसके अतिरिक्त अधिकतर व्यक्ति जितना सोचते हैं उतना मन ही मन नहीं पढ़ते हैं। अगर यह सुनने की कोशिश करें कि क्या हम मन में पढ़ रहे हैं तो हम निश्चित रूप से मौन पठन करने लगेंगे। हम अपने मौन पठन को कभी सुन नहीं पाते पर इसका मतलब यह नहीं कि हम सदैव ही मौन पठन करते रहते हैं। हम मौन पठन करते ही क्यों हैं? हो सकता है, हम में यह आदत हमारे बचपन से हो, जब हमसे ऊँचे स्वर में पढ़ने की अपेक्षा की जाती थी। एक शिक्षक को यह मालूम रहता है कि बच्चे काम कर रहे हैं, जब उनकी अँगुलियाँ सही तरीके से लाइनों के साथ आगे बढ़ रही हैं, और उनके होंठ हाथों की गति के हिसाब से ही हिल रहे हैं। मन ही मन पढ़ने का एक फ़ायदा यह है कि वे शब्द दोहराने में मदद करते हैं। ऐसे शब्द जो समझ में नहीं आते या उनका मतलब नहीं निकल पाता, उन्हें अल्प स्मृति में बनाए रखते हैं, परंतु ऐसे मामलों में मन ही मन पढ़ना अर्थ ग्रहण करने की क्षमता के अभाव का संकेत देता है। जब पढ़ना कठिन लगने लगे और हम पूर्वानुमान कम लगा पाएँ तो हमारी प्रवृत्ति मन ही मन पढ़ने (sub-vocalise) की हो जाती है।

पूर्वानुमान और अर्थ

सामान्यतः पाठक लिखित सामग्री को बिना कुछ सोचे-समझे या बिना किसी पूर्व उद्देश्य के और बिना आशा के कि पाठ से क्या अर्थ निकलेगा, नहीं पढ़ते हैं। पाठक सामान्य रूप से अक्षरों या शब्दों को पहचानने की अपेक्षा अर्थ को ढूँढ़ते हैं। जिस तरह पाठक अर्थ ढूँढ़ता है, वह सभी संभावनाओं पर न तो विचार करता है और न ही मात्र एक के लिए बिना सोचे-समझे अनुमान लगाता रहता है, बल्कि अपेक्षाकृत सर्वाधिक उपयुक्त विकल्पों में से पूर्वानुमान लगाता है। इस तरह पाठक मस्तिष्क की सीमित सूचना प्रक्रिया

से उबर पाते हैं तथा भाषा में निहित अस्पष्टता से भी! पाठक सीधे ही पाठ से अर्थ निकाल सकते हैं, क्योंकि वे एक उम्मीद के साथ अर्थ को ढूँढ़ते हैं। यह विधि सामान्य रूप से उतनी ही स्वाभाविक, निरंतर और प्रयासरहित है, जितनी कि जब हम अपने जीवन के किसी अनुभव से कोई अर्थ निकालते हैं।

हर उस छोटी जानकारी को जो हमारी इंद्रियाँ हमारे मस्तिष्क को दे रही हैं, हम उसे समझने में नहीं जूझते, जैसा कि हम कहें कि ‘यह एक कुर्सी है; ‘यह एक मेज़ है’, कुर्सी वह होती है जिस पर मैं बैठ सकता हूँ, बल्कि अपने परिवेश के उन पहलुओं को खोजते हैं जो हमारे जीवन को अर्थपूर्ण बनाते हैं, विशेषकर हमारे उद्देश्यों और हितों के संदर्भ में। समझ का मतलब यह नहीं है कि हम निरर्थक चीज़ों को भी नाम दें और उनके परिणामों में एक अर्थ ढूँढ़ने के लिए जूझें, बल्कि समझ का मतलब हमेशा ही एक अर्थपूर्ण दायरे की प्रक्रिया में लगे रहना है।

अर्थ ग्रहण करना सीखना

इसके लिए किसी विशेष स्पष्टीकरण देने की आवश्यकता नहीं है कि बच्चे किस तरह लिखित पाठ्यसामग्री से अर्थ ग्रहण करना सीखते हैं, क्योंकि इसमें कोई विशेष प्रक्रिया शामिल नहीं है। बच्चे स्वाभाविक रूप से अर्थ समझने की कोशिश करते हैं। उनके लिए ऐसी भाषा सीखने का कोई महत्त्व नहीं है, जिससे कोई अर्थ नहीं मिल रहा हो, चाहे वह भाषा मौखिक हो या लिखित। वे बोली गई भाषा का बोध अर्थ ग्रहण करने के द्वारा करते हैं, शब्दों की ध्वनि पर ध्यान देकर नहीं।

बोध से अपेक्षा

बच्चों द्वारा बोलना सीखने की प्रक्रिया के दौरान अर्थ की प्राथमिकता का एक उत्तम उदाहरण है — जब बच्चे नकल करने का प्रयास करते हैं, तो वे अर्थ की नकल करते हैं न कि ऐसी ध्वनियों की जो उनके लिए निरर्थक हैं।

मेकनील, 1967; ने माँ तथा बच्चे के बीच वार्तालाप का उल्लेख किया है जो इस प्रकार है—

Child : Nobody don't like me.

Mother : No, say “Nobody likes me.”

Child : Nobody don't like me.

(Eight repetitions of this dialogue)

Mother : No, now listen carefully, say “*Nobody likes me*”.

Child : Oh! Nobody don't likes me.

यहाँ तक कि जब बच्चों को भाषा-अभ्यास का प्रदर्शन करने के लिए कहा जाता है, तो वे यह अपेक्षा करते हैं कि अभ्यास अर्थपूर्ण होगा। पहले दिए गए उदाहरण के बच्चे के समान यदि उन्हें अर्थ के बजाय बाह्य संरचना देखने को कहा जाए, तो उन्हें दिए गए कार्य को समझने में बहुत समय लगता है।

अर्थ खोजने के लिए बच्चों को ‘विपरीत/उलट’ बताने की आवश्यकता नहीं होती, यानी भाषा की संरचना को समझाने की ज़रूरत नहीं है। बच्चे सहज एवं स्वाभाविक रूप से अर्थ ढूँढ़ लेते हैं। यह प्रमुख रूप से उनकी भाषा सीखने की स्वाभाविक (तथा एकमात्र) प्रक्रिया है। वे किसी ऐसे शोर या आवाज़ पर ध्यान नहीं देते जो उनके लिए अर्थपूर्ण नहीं होती है।

जिस तरह बच्चों को लिखित अथवा मौखिक भाषा में अर्थ देखने या बताने की आवश्यकता नहीं होती है, उसी तरह अर्थ ढूँढ़ने के लिए किसी विशेष तरीके को सीखने की आवश्यकता भी नहीं होती है। इसके अलावा पढ़ते समय आने वाली मुख्य कठिनाइयाँ, जैसे— लगातार अस्पष्टता, सीमित दृष्टिकोण तथा याददाश्त पर अत्यधिक बोझ की संभावनाएँ विद्यार्थी को मात्र स्मरण करवाती हैं कि पठन का आधार पूर्वानुमान ही होना चाहिए और सभी विद्यार्थी जो अपने परिवेश की मौखिक भाषा को समझते हैं, उन्हें पूर्वानुमान में भी निपुण होना चाहिए।

निश्चित रूप से पढ़ते समय, समझकर पढ़ना सिखाने के लिए किसी विशेष व्याख्या की आवश्यकता नहीं है। अर्थ गढ़ना कोई नया कौशल नहीं है, जिसे पढ़ने के लिए सीखा जाए, बल्कि वह कुछ भी सीखने का आधार है। अक्सर स्कूलों में ऐसा हो सकता है कि बच्चों को समझ का वैपर्य (Reverse of comprehension) सिखाया जाए। पढ़ते समय ‘अनिश्चितता’ की स्थिति में अर्थपूर्ण ‘अनुमान’ लगाने के बजाय सही ‘डिकोड’ करने के निर्देश दिए जाते हैं। उनसे ऐसी सामग्री व अभ्यास-कार्य के द्वारा सीखने की अपेक्षा की जा सकती है, जो खासतौर पर गैर-दृश्यात्मक सूचना के प्रयोग को निरुत्साहित करते हैं या रोक देते हैं।

निश्चित ही लिखित भाषा की समझ और मौखिक भाषा की समझ या अन्य प्रकार की घटनाओं में अंतर हो सकता है। ये प्रक्रियागत अंतर नहीं हैं। पाठक को लिखित पाठ्यसामग्री के विशिष्ट लक्षणों की मदद से पूर्वानुमान सिद्ध करने और अनिश्चितता

दूर करने की ज़रूरत है। बच्चों को लिखित पाठ के विशिष्ट लक्षणों और उनमें निहित अर्थ से इनके सह-संबंध से परिचित कराने की आवश्यकता है, जैसे बोल-चाल की भाषा के नियम सिखाए नहीं जा सकते, वैसे ही लिखित भाषा के विशिष्ट लक्षण व अर्थ गढ़ने में भी इनका प्रयोग सिखाया नहीं जा सकता। इसी प्रकार औपचारिक निर्देश न केवल अनावश्यक, बल्कि असंभव हैं। लिखित अंश से अर्थ प्राप्त करना केवल अर्थपूर्ण पठन के अनुभव से ही प्राप्त किया जा सकता है, ठीक उसी तरह जैसे बच्चे अपनी बोलने की क्षमता को अर्थपूर्ण भाषा सुनकर व प्रयोग में लाकर विकसित करते हैं और जब तक विद्यार्थी अपने आप समझ के साथ पढ़ने में सक्षम नहीं हो जाते तब तक वे स्पष्टतः उसी पर निर्भर करते हैं जो उनके लिए पढ़ा जाता है या कम से कम उस मदद पर निर्भर होते हैं, जो उन्हें पठन के दौरान मिलती हो।

अनदेखा करने का अधिकार

विशेष तौर पर प्रारंभिक पाठकों के लिए ही नहीं, बल्कि किसी भी पाठक के लिए यह अंतिम बिंदु है। यह आवश्यक नहीं है कि वे जो भी पढ़ने का प्रयास कर रहे हैं, उनमें प्रत्येक बात का अर्थ समझें। कोई भी वयस्क जब कोई उपन्यास और कोई अन्य विस्तृत पाठ्यसामग्री या कोई सूची अथवा विज्ञापन पढ़ते हैं तब उन्हें यह स्वतंत्रता होती है कि वे पाठ का कोई बड़ा खंड छोड़ दें तथा वे बहुत सारे छोटे-छोटे विवरणों को अनदेखा कर सकते हैं, क्योंकि या तो वे विवरण नहीं समझ पा रहे होते हैं या वे उनकी रुचि या आवश्यकता के अनुरूप नहीं होते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि बच्चे जब बोल-चाल की भाषा सीख रहे होते हैं, तब वे स्वेच्छा से वयस्कों के वार्तालापों एवं टेलीविजन कार्यक्रमों की बात के हर एक शब्द का अर्थ निकाले बिना ही उनका अनुसरण करते रहते हैं।

पाठ में बच्चों का ध्यान बनाए रखने के लिए, कथानक की पकड़, सामान्य रुचि तथा कुछ अर्थपूर्ण हिस्सों की मदद से समझ बनाने की योग्यता भी काफ़ी होती है। इस तरह से आंशिक रूप से समझी हुई सामग्री ही वास्तव में सीखने का आधार है। कोई भी पाठक बोल-चाल या लिखित भाषा के किसी पहलू पर तब तक ध्यान नहीं देता, जब तक कि उसमें कुछ नयापन न हो। यदि बच्चों को पठन सामग्री का बहुत-सा हिस्सा समझ में नहीं भी आता तब भी उससे उन्हें कोई फ़र्क नहीं पड़ता, क्योंकि उन्हें कुछ नया व रोचक खोजने के अवसर मिल रहे होते हैं। बच्चों की इस योग्यता को प्रायः सराहा नहीं जाता कि वे जो समझ नहीं सकते उसे अनदेखा कर केवल उसे ही पढ़ते हैं, जिसे वे समझ पाते हैं।

बच्चों को समझ में न आने वाली बात को अनदेखा करने का अधिकार, उनकी स्वतंत्रता में से शायद सबसे पहली स्वतंत्रता होती है, पर दुर्भाग्यवश विद्यालय में प्रवेश करते ही यह छिन जाती है। इसके स्थान पर, ध्यान उस ओर दिया जाता है जिसे बच्चे समझ नहीं पाते तथा जिससे आगे की सीखने की प्रक्रिया उनके लिए और चुनौतीपूर्ण हो जाए। बच्चों को जो समझ में आ जाता है, उसे 'बहुत आसान' कहकर एक तरफ़ कर दिया जाता है। विडंबना यह है कि बहुत सारी पठन सामग्री जान-बूझकर निरर्थक बनाई जाती है। स्पष्ट है कि ऐसी स्थितियों में कोई रास्ता नहीं बचता, जिससे बच्चे पाठ में अर्थ ढूँढ़ने व पहचानने की अपनी इस योग्यता को विकसित कर सकें तथा उससे लाभ उठा सकें।

अंतर्निहित अर्थ की पहचान

सामान्यतः पाठ के पठन में प्रत्येक शब्द या संभावित वैकल्पिक अर्थों की जानकारी के बिना तत्काल या सीधे अर्थ निकाला जा सकता है, हालाँकि कई स्थितियों में ऐसा भी होता है जब किसी पाठ या किन्हीं शब्दों का अर्थ तत्काल समझ में नहीं आता है। इन अवसरों पर शब्दों की अर्थपूर्ण शृंखला को समग्र रूप में समझने से पहले प्रत्येक शब्द की पहचान करते हुए अंतर्निहित या मध्यस्थ अर्थ को जानने का प्रयास किया जाना चाहिए। यहाँ दो उदाहरणों पर विचार किया जा सकता है। पहला, संपूर्ण शब्द शृंखला में अंतर्निहित अर्थ की पहचान, जैसे— पदबंध और वाक्य। दूसरा, कभी-कभी अलग-अलग शब्दों में अंतर्निहित या मध्यस्थ अर्थ की पहचान करना।

मैंने, पहले ही यह तर्क दिया है कि पहले प्रकरण की संभावना बहुत कम है। प्रत्येक शब्द के अर्थ को साथ-साथ रखकर वाक्य का संपूर्ण अर्थ नहीं समझा जा सकता है। प्रत्येक शब्द में अर्थ के कई आयाम होते हैं और उनके वैकल्पिक व्याकरणिक प्रकार्य होते हैं, इसलिए अर्थ की पूर्व अपेक्षा के बिना, अर्थ समझने की शुरुआत होने की भी बहुत कम संभावना होती है। इसके अलावा दृश्यात्मक सूचना प्रक्रियायन और स्मृति की सीमाओं से उबरना कठिन होता है। यदि पाठक यह मानने की कोशिश करता है कि पठन सामग्री के प्रत्येक शब्द अपने आस-पास के शब्दों से स्वतंत्र हैं और कई हजार विकल्पों में से चुने गए हैं तो हो सकता है कि कुछ पठन-सिद्धांत और पठन-निर्देश के कई तरीके इस धारणा पर आधारित लगते हों कि लिखित पाठ्यसामग्री के अर्थ की समझ अलग-अलग एक-एक शब्द से होती है, फिर तो इस विषय पर चर्चा का कोई अर्थ ही नहीं है।

इस प्रकार से अर्थ गढ़ने का यह प्रयास असक्षम और असफल प्रयास माना जाना चाहिए, परंतु मध्यस्थ या अंतर्निहित अर्थ पहचानने का एक और आशय भी है, जहाँ पूरे अनुच्छेद का अर्थ तो समझ में आ रहा हो, पर संभवतः उसमें से कोई एक शब्द अपरिचित हो और समझ में न आ रहा हो। यह पठन की अधिक सामान्य तथा उपयोगी विशेषता है। इस प्रकरण में प्रश्न यह नहीं है कि अलग-अलग शब्द के अर्थ से पूरे अनुच्छेद के अर्थ की संरचना का प्रयास किया जाए, बल्कि पूरे अनुच्छेद के अर्थ के माध्यम से प्रत्येक शब्द का संभावित अर्थ निकाला जाए। यह संभव तो है ही, साथ ही काफ़ी हद तक, जिस तरह से हम भाषा सीखते हैं, उसका आधार भी है। ज्यादातर पढ़े-लिखे लोगों की अधिकतम शब्दावली पठन से ही आनी चाहिए, नागी, हरमन एवं एंडरसन, 1985; पढ़ना सीखने की शुरुआत करने के लिए यह ज़रूरी नहीं है कि पहले कई हजार शब्दों के अर्थ जानें। मूलतः ज़रूरी यह है कि उस लिखित सामग्री, जिसके द्वारा सीखने की अपेक्षा की जा रही है, उस सामग्री के शब्दों और संरचनाओं से सामान्य रूप से परिचित हों और केवल यही सब नहीं।

यह बात अत्यधिक असंगत प्रतीत होती है कि पठन द्वारा सीखे गए बहुत से शब्दों की हमारी समझ का श्रेय हजारों बार प्रयोग में लाए गए शब्दकोश को दिया जाना चाहिए या उस व्यक्ति को, जिसने हमें उस शब्द के अर्थ बताए हैं। वास्तव में हम पूर्ण पाठ्यसामग्री से ही अर्थ समझ पाते हैं।

पठन के दौरान हम बड़े सहज रूप से नए शब्द सीख जाते हैं, जिनका अर्थ या संदर्भ हम पहले से ही भली-भाँति जानते हैं, किंतु हम उनके सही उच्चारण के प्रति आश्वस्त नहीं होते हैं, यानी अनौपचारिक प्रमाण यह है कि ये शब्द हमने केवल सुनने या बोलने मात्र से नहीं सीखे हैं। मैं, यहाँ शब्दों का उल्लेख कर रहा हूँ, जैसे— ‘Penelope’ (Penny-loap?), ‘Misled’ (Mizzled? Myzelled?) तथा ‘Gist’ (Guest की तरह या Jest?) तथा शायद ‘Slough’ तथा ‘Orgy’ (Orgi)। इसके अलावा और भी अनगिनत विदेशी शब्द या किसी के नाम तथा स्थान हो सकते हैं। यहाँ पर मैं ‘Facky-tious’ शब्द से जुड़ी घटना (Pious के साथ Tious की लय) के बारे में कहना चाहता हूँ। जब मैंने अपने मित्र की माँ से किसी अवसर पर इसके बारे में पूछा, तब उन्होंने कहा कि आजकल ‘Fakcy-tious’ प्रयोग में नहीं आता। मेरे मित्र ने यह स्वीकार किया कि उसे याद नहीं है कि अंतिम बार उसने यह शब्द कब सुना था और उसने मुझसे उसका अर्थ पूछा। माँ ने बताया— “*A little sarcastic or supercilious*” फिर अचानक मेरे मित्र को कुछ

सूझा। उसने कहा— “याद आया। आपका मतलब ‘Facetious’ से है?” माँ ने कुछ सोचकर जबाब दिया— “नहीं”, हालाँकि इन दोनों शब्दों के अर्थ मिलते-जुलते हैं। माँ ने आगे बताया— “अगर हम ध्यान दें तो मुझे नहीं लगता कि मैंने ‘Facetious’ शब्द को कभी कहीं लिखा देखा हो।”

निःसंदेह, सवाल यह है कि मेरे मित्र की माँ को ‘Facky-tious’ शब्द का सही अर्थ कहाँ से पता चला, जिसे न तो उन्होंने कभी सुना और निश्चित तौर पर न कभी किसी से पूछा। इसका उत्तर यह होना चाहिए कि उन्होंने उसी तरीके से सीखा जैसे हममें से बहुत से लोग सीखते हैं। हम सामान्यतः अपरिचित शब्द के संदर्भ में उपलब्ध जानकारी को अपने पूर्वज्ञान से जोड़ते हुए उस अपरिचित शब्द के अर्थ को समझते हैं। संदर्भ से मध्यस्थ या अंतर्निहित अर्थ की पहचान ठीक वैसे ही होती है, जैसे आमतौर पर प्रवीण पाठक अक्सर करते हैं। यह केवल समझने का ही नहीं अपितु सीखने का भी आधार होता है।

पाठ की सामान्य समझ के हस्तक्षेप के बिना नए शब्दों को सीखना एक दूसरा उदाहरण है, जिससे कि बच्चे तथा अन्य सभी पाठक निरंतर पढ़कर ही पढ़ना सीखते हैं। पठन के परिणामस्वरूप जो शब्द-भंडार विकसित होता है, वह संभाव्य अर्थ और नए शब्दों को उच्चारण का निर्धारण करने के लिए ज्ञान का स्थायी आधार प्रदान करता है। यदि आप ‘Auditor’ और ‘Visual’ दोनों शब्दों का अर्थ एवं उच्चारण जानते हैं तब आपको एक नए शब्द, जैसे— ‘Audio-visual’ को बोलने और समझने में कठिनाई न के बराबर होगी। पूँजी जितनी अधिक होगी, उतनी ही तेजी से वह बढ़ेगी, चाहे वे शब्द हों या भौतिक संपदा! पढ़ने के लिए व्यापक और उपयोगी ‘Sight vocabulary’ या परिचित शब्दावली को ग्रहण करने का सबसे उत्तम तरीका है, समझ के साथ पढ़ना। यदि पाठ्यसामग्री अर्थपूर्ण है तो मध्यस्थता और सीखना अपने आप हो जाता है।

मुद्दे

एक चर्चित मुद्दा यह है कि सामान्य पढ़ने की परिस्थिति में खास शब्दों को विशेष रूप से, एक समय में एक-एक करके पहचाना जाए या किसी वाक्यांश, वाक्य, या अनुच्छेद का पहले अर्थ ग्रहण किया जाए। प्रायोगिक रूप में इस तरह के मुद्दों को हल कर पाना कठिन है। यह प्रमाणित है कि जहाँ आँखें केंद्रित हैं, आवश्यक नहीं कि पाठक उसी के बारे में सोच रहा है। एक संकल्पना के रूप में अर्थ का चिंतन करना किसी भी अवस्था में काफ़ी कठिन है। अर्थ को आँखों की स्थिति से चिह्नित करने की कोशिश करना उस अध्ययन

के समरूप है, जैसे— छुरी तथा काँटे की गतिविधि का अध्ययन कर पाचन-क्रिया को समझना। जैसा कि हम लगातार देखते आ रहे हैं कि बच्चों को 'पढ़ना कैसे सिखाया जाए' की धारणाएँ बहुत गहन हैं और यही धारणाएँ पढ़ने की प्रकृति के बहुत से विवादों को आगे बढ़ाती हैं।

सारांश

पठन का आधारभूत उद्देश्य, 'समझ के साथ पढ़ना है।' यह पढ़ने की प्रक्रिया में दो तरह से मदद भी करता है। अर्थ की तत्काल पहचान प्रत्येक शब्द की पूर्व पहचान को अनावश्यक बना देती है। पूरे अनुच्छेद को समझ के साथ पढ़ना शब्दों को समझने में मदद करता है और जरूरत हो तो प्रत्येक शब्द को पहचानने में भी मदद करता है। मध्यस्थता के जरिए अर्थ की पहचान करने से संकीर्ण दृष्टिकोण, स्मृति पर बोझ व अस्पष्टता की संभावना बढ़ती है, क्योंकि यह दृश्यात्मक सूचना पर अधिक निर्भर करता है।

टिप्पणियाँ

अर्थपूर्ण संदर्भ का प्रभाव

अर्थपूर्ण ढंग से पढ़ना, पढ़ने की प्रक्रिया में शब्दों की उचित पहचान को सरल बनाता है। पठन में शब्दों को पहचानने में अर्थपूर्णता स्पष्ट रूप से अहम भूमिका निभाती है, जिससे शब्दों को संदर्भ से अलग देखने की पाठक की अनिश्चितता कम से कम 12 bits (समान अर्थ वाले संभाव्य विकल्पों में से 4,096 के बराबर) हो जाती है व संदर्भ में देखने पर 8bits (256 विकल्प) से भी कम हो जाती है। जब शब्द संदर्भ के साथ होते हैं तो उनमें अनिश्चितता कम होती है और जब संदर्भ के बिना होते हैं तो उनमें अनिश्चितता अधिक होती है।

अर्थपूर्णता, इसी अनिश्चितता को घटाती है। इस स्तर पर अक्षरों की बात करना अप्रासंगिक है, क्योंकि जब अर्थपूर्ण पाठ पढ़ा जाता है तब सामान्यतः अक्षरों पर ध्यान नहीं दिया जाता, लेकिन मानदंड के रूप में जब संदर्भ अर्थपूर्ण होता है तब अक्षरों की अनिश्चितता 4.7 bits से घटकर मुश्किल से 1 bit तक आ जाती है और लिखित सामग्री में एक पंक्ति का बोध 4 गुना बढ़ जाता है। यदि संदर्भ अर्थपूर्ण हो तो न केवल एक ही बार देखने में दोगुने शब्दों को पहचाना जा सकता है, बल्कि उससे सूचना प्रक्रमण (Information Processing) और स्मृति में अटकने वाले बिंदुओं पर काबू हो जाता

है। साथ ही असंगत विकल्पों पर विचार कर अस्पष्टता की समस्याओं और बाह्य बनावट एवं अर्थ के बीच की खाई को पहले ही हटा दिया जाता है।

संदर्भ का प्रभाव केवल इसलिए नहीं होता, क्योंकि यह मौजूद होता है, बल्कि इसलिए है कि यह अर्थपूर्ण हो सकता है व प्रत्येक शब्द की अनिश्चितता अनुक्रमिक समधिकता (Sequential redundancy) का प्रयोग करते हुए, कम कर देता है। संदर्भ¹ प्रत्येक शब्द के अर्थ पर अंकुश लगाता है। यह अंकुश ही अनुक्रमिक समधिकता संघटित करते हैं, जिसका तभी इस्तेमाल किया जा सकता है जब वह पूर्वज्ञान व गैर-दृश्यात्मक सूचना के रूप (Non-Visual Information) में प्रतिबिंबित हो व पाठक जिनका प्रयोग करने में सक्षम हो।

यही कारण है कि मैं, इस बात पर बल देता हूँ कि संदर्भ को उस शब्द से जुड़े सभी भाव सूचकों के साथ ज़रूर अर्थपूर्ण होना चाहिए। यदि एक विशेष संदर्भ पाठक की समझ से परे है या किसी न किसी वज़ह से पाठक समधिकता का लाभ उठाने में हिचकता है और पठन के किसी भी पहलू के लिए जितनी दृश्यात्मक सूचना की ज़रूरत होती है, उसे कम नहीं होने देता। ऐसी स्थिति में संदर्भ एकदम निरर्थक हो सकता है और केवल कागज़ के पृष्ठ पर प्रतीकों की एक बेतरतीब व्यवस्था की तरह हो सकता है।

अर्थपूर्ण संदर्भ, जिस पद का मैं प्रयोग करता आ रहा हूँ, शब्दों की सुनिश्चितता (किसी वाक्य में किस व्याकरणिक कोटि का कौन-सा शब्द आएगा) पर दो तरीकों से अंकुश लगाता है— वाक्य-विज्ञान और अर्थविज्ञान (Syntactic और Semantic) के माध्यम से। एक समय पर किसी शब्द विशेष पर दो तरह की सीमाएँ होती हैं, जिसे एक लेखक चुनता है या पाठक अनुमान लगाता है (लेखकों पर अन्य अंकुश भी होते हैं, जैसे— सीमित शब्दावली का प्रयोग, जिन्हें पाठक से समझने की अपेक्षा की जाती है)। हम क्या कहना चाहते हैं (Semantics) और कैसे कहना चाहते हैं (Syntax)। हमेशा शब्दों का चयन सीमित करते हैं।

मैंने इस चर्चा में वाक्य-रचना (Syntax) और अर्थविज्ञान (Semantics) के प्रभाव को अलग-अलग करने की कोशिश नहीं की है, क्योंकि इसे सही ढंग से करने

¹ यहाँ भाषा के संदर्भ की बात हो रही है, पाठ्यसामग्री में शब्दों का समूह, परंतु शब्द स्थितिपरक संदर्भों के आधार पर भी चुने जा सकते हैं। उदाहरण के लिए, एक टूथपेस्ट ट्यूब (Toothpaste Tube) पर क्या लिखा जाए, उस संदर्भ में वैकल्पिक शब्द समूहों की संख्या काफ़ी कम है और काफ़ी हद तक अंदाज़ा लगाया जा सकता है, जिसमें ग्रहणकर्ता की अपेक्षाओं का भी एक महत्वपूर्ण संदर्भ होता है। ऑलसन (Olson, 1970) के अनुसार शब्दों का चयन व उन्हें अर्थ देना इस बात पर निर्भर करता है कि पाठक व श्रोता क्या जानना चाहते हैं।

का तरीका मुझे नहीं मिला है। सैद्धांतिक विश्लेषणों से यह तर्क प्रस्तुत किया गया कि इन दोनों को अलग नहीं किया जा सकता, क्योंकि अर्थ के बिना व्याकरण की बात करना व्यर्थ होगा। ट्राइसमैन, 1969; ने प्रयोगों के आधार पर इन दोनों को स्पष्ट करने का प्रयास किया और यह निष्कर्ष निकाला कि सामान्य भाषा में वाक्य-विज्ञान घटक (Syntactic component), अर्थविज्ञान घटक (Semantic component) के अधीन रहता है।

ऐसे शोधों की कोई कमी नहीं है, जो यह दर्शाते हैं कि शब्द-पहचान पर अर्थपूर्ण संदर्भ के गुणात्मक प्रभाव होते हैं, जो पढ़ने की प्रक्रिया को सुगम बनाते हैं। वास्तव में इसके विरोध में कोई प्रमाण नहीं है, परंतु इस शोध का उदाहरण देने से पहले एक मूलभूत बिंदु पर बल देना ज़रूरी है कि पढ़ने में केवल शब्दों की पहचान शामिल नहीं होती है। यह साधारण विचार प्रतीत हो सकता है, लेकिन अर्थपूर्ण संदर्भ के बारे में बुनियादी बात है कि संदर्भ पठन को ही अर्थपूर्ण बनाता है और शब्दों की पहचान को अनावश्यक बनाता है। यह कहना कि अर्थपूर्ण संदर्भ अलग-अलग शब्दों की पहचान आसान बनाता है, उतना ही अप्रासंगिक है जितना यह तथ्य कि शब्दों में अलग-अलग अक्षरों को पहचानना अधिक आसान है? शोध के प्रमाण केवल अर्थपूर्ण संदर्भ के प्रभाव को दर्शाते हैं। यहाँ तक कि ज़ोर-ज़ोर से पढ़ते समय भी, जिसमें शब्दों की ठीक-ठीक पहचान ज़रूरी होती है, अर्थपूर्ण अंदाज़ा लगाना एक महत्वपूर्ण पूर्वापेक्षा है। यदि शब्दों की पूर्व समझ सीमित हो तो ज़ोर-ज़ोर से पढ़ना मुश्किल होता है और यदि शब्दों की पहचान को प्राथमिकता दी जाए तो समझ में दखल देना होगा— होव एवं सिंगर, 1975; शारके और मिशैल, 1985; यह बताते हैं कि अर्थपूर्ण संदर्भों में शब्दों की पहचान अक्सर न्यूनतम होती है और उसका पूर्वानुमान मुश्किल होता है, खासकर जब संदर्भ अपने आप ऐसा ‘आलेख’ हो, जिसका अंदाज़ा लगाना आसान होता है या दूसरे शब्दों में कहें कि जब संदर्भ की एक परिचित व्याख्या हो।

लिवाय लेवी, 1978; ने बताया कि लिखित भाषा के शब्दों को बदलना थोड़े समय के लिए याद रखने वाले कार्यों पर प्रभाव नहीं डालता है। यहाँ तक कि बहुत कम समय के लिए भी अर्थ को बचाए रखा जाता है न कि खास शब्दों को। कभी-कभी संदर्भ हमें भटकाते हैं, यह पुनः अर्थ की क्षमता और पूर्वानुमान के महत्त्व का प्रमाण है। कारपेंटर और डेनमैन, 1981; ने ‘Garden Path’ (गार्डन पाथ) पाठ्यसामग्री के कई उदाहरण दिए हैं, जिसमें संदर्भ ने मदद करने के स्थान पर गुमराह किया है, जैसे— *Cinderella*

could not go to the ball. There were tears in her dress. मार्शल, 1978; जिसे अवचेतन पठन कहते हैं, उसके अचेतन प्रभाव तक को उन्होंने दिखाया है— जब लोगों को नहीं पता होता कि कोई पाठ्यसामग्री उसके सामने लाई गई है तब वे केवल सूचना हासिल करते हैं (क्योंकि यह इतने कम समय के लिए उनके सामने कौंधा और फिर छुपा लिया गया) लेकिन एक तरह से सबसे अधिक मुश्किल और कृत्रिम पठन को यदि छोड़ दें तो सारा पठन अचेतन होता है, हो सकता है कि हमने क्या पढ़ा? हम यह जानते हों, लेकिन इस बारे में सचेत न हों कि हम ‘पढ़’ रहे हैं।

संदर्भ, शब्दों की पहचान को कैसे सुगम बनाते हैं, इसके उदाहरणों के लिए मॉर्टन 1969, 1982, क्लीन और क्लीन, 1973; और स्मिथ और स्पोर, 1974; को देखें। इस अध्याय में दिए गए तर्कों का सार जानने के लिए स्मिथ और होम्स, 1971; को देखें। अर्थपूर्णता के प्रभाव को दिखाने वाले संबंधित अध्यायों में रोथकोफ़ और कॉटने, 1974; बतलाते हैं कि पाठ्यसामग्री में पाठक; जिन सूचनाओं की अपेक्षा करता है, उससे उसके पढ़ने की गति निर्धारित होती है और रोथकोफ़ व बिलिंग्टन, 1974; बतलाते हैं कि जब किन्हीं खास सवालों का जवाब खोजा जाता है और वह मिल जाता है, तब समझ में बढ़ोतरी होती है। स्मिथ और क्लैमैन, 1979; ने कई प्रयोगों का सार प्रस्तुत किया है। उन्होंने बतलाया है कि पूर्ववर्ती संदर्भ, आगे आने वाले शब्दों के संभावित अर्थ को किस तरह से क्रियाशील करता है। कारपेंटर और जस्ट, 1975, 1977; इस बात को परखते हैं कि कैसे पढ़ने में सामान्यतः पहले से ज्ञात सूचना और नयी संदर्भयुक्त सूचना का जुड़ाव होता है (जो फिर से इस बात को दर्शाते हैं कि ‘सीखना’ और ‘समझ’ को अलग-अलग नहीं किया जा सकता)। क्राउडर और वेगनर, 1991; बतलाते हैं कि पाठ्यसामग्री में खास शब्दों की पहचान करने में पाठक दूसरे शब्दों के अर्थ की मदद लेते हैं; इसके लिए गोल्डस्मिथ फिलिप्स, 1989; को भी देखें।

कोहन, 1970; और नाइसर एवं बैलर, 1965; ने प्रयोग के आधार पर बताया है कि बिना शब्दों की पहचान के भी अर्थ पाया जा सकता है। शब्द सूचियों में खोजने के कामों में उन्होंने दिखलाया कि एक वर्ग का उदाहरण (जैसे— कोई फूल) खोजने में उस वर्ग के एक खास शब्द (जैसे— Daisy) को खोजने से अधिक समय नहीं लगेगा। इस प्रकार के खोजने के काम में मूलतः सूची में से असंबद्ध चीजों को हटाना जरूरी होता है (बहुत कुछ उस तरह जैसे टेलीफोन डायरेक्ट्री में जिन नामों को हम नहीं खोज रहे

होते हैं, उन नामों को हम तेज़ी से छोड़ते जाते हैं)। ये काम दिखलाते हैं कि किसी शब्द को पहचानने के लिए यह तय करना ज़रूरी नहीं है कि जिस खास वर्ग में (विकल्पों का समूह) हमारी दिलचस्पी है, उस वर्ग में वह नहीं आता। स्प्रेजिंस, लैफ़न और फ़िशर, 1976; ने दर्शाया कि अर्थ में पहले से इतनी क्षमता होती है कि यह खोज में हस्तक्षेप करेगा, जहाँ वास्तव में अर्थ अप्रासंगिक हो।

नाइसर, 1967; ने इस तरह कई खोज संबंधी कामों पर विस्तार से चर्चा की है, इसका पुनरीक्षण मार्टिन, 1979; में देखें। एक शोध जिसका शीर्षक है 'मीनिंग इन विज़ुअल रिसर्च' जो पठन के बारे में नहीं है, उसमें पॉटर, 1975 बतलाते हैं कि दर्शक, तसवीरों को उसी सटीकता और तेज़ी से पहचानते हैं, जब वे पहले से उसका शाब्दिक अर्थ जानते हैं (उन्हें नाम या शीर्षक देते हुए, जैसे 'नाव') दर्शक तसवीरों को उसी सटीकता से और तेज़ी से पहचानते हैं, जब वे तसवीरों को पहले से देख चुके होते हैं। मैक्नील और लिंडिग, 1973; दर्शाते हैं कि मौखिक भाषा पर संदर्भ के प्रभाव उसी तरह रहते हैं जैसे कि लिखित भाषा में रहते हैं। मिलर, हीस और लिचटन, 1951; को भी देखें।

संदर्भ एवं पूर्वानुमान

कुछ विचारक (Theorists) यह तर्क देते हैं कि संदर्भ एवं पूर्वानुमान पठन में अपेक्षाकृत बहुत कम भूमिका निभाते हैं, परंतु मेरी अपेक्षा, उन्होंने इन पदों का बहुत संकीर्ण अर्थों में प्रयोग किया है। उदाहरण के तौर पर स्टैनोविच, 1992; ने आँखों की गति के अध्ययन के आधार पर निष्कर्ष निकाला कि 'संदर्भ-प्रभाव' न्यूनतम होता है, क्योंकि दृश्यात्मक सूचना बड़ी तेज़ी से दृष्टि विस्तार-क्षेत्र के केंद्र में गर्तिका क्षेत्र (Foveal area) के बाहरी भाग को धुँधला कर देती है। इससे पहले स्टैनोविच, 1986; का यह दावा था कि प्रवाह से पढ़ने वाले पाठकों की अपेक्षा कमज़ोर पाठक पूर्वानुमान पर अधिक निर्भर होते हैं, परंतु मैं, संदर्भ को अलग रूप में देखता हूँ।

यह पाठ्यवस्तु के किसी एक बिंदु पर पाठक की बनी समझ से जुड़ी है जो कि पहले देखी हुई पाठ्यवस्तु और आगे आने वाली वस्तु पर पड़ी दृष्टि से और विकसित हो जाती है। इस तरह का अग्रिम ज्ञान, जो कि प्राथमिक रूप से दृश्यात्मक की अपेक्षा गैर-दृश्यात्मक होता है, पाठक की अनिश्चितता को कम कर पठन को सुगम बनाता है। आम-तौर पर यह देखा गया है कि 'पूर्व-अनुमान' को 'Guess' (अंदाज़ा) लगाने के

समान अर्थ में समझा जाता है। यह प्रवाहपूर्ण तरीके से पढ़ने वाले पाठकों का वर्णन करने के लिए एक ऐसा पद है, जिससे मैं, सहमत नहीं हूँ मेरी समझ से पूर्वानुमान की परिभाषा है— ‘असंबद्ध विकल्पों को पहले ही हटा देना।’ यदि पाठक पाठ्यसामग्री की भाषा और विषय-वस्तु से परिचित होते हैं तो इस अनुभवी पाठक का पठन और प्रभावशाली होता है। एक बार फिर सब कुछ पाठक के उद्देश्यों और उसके लचीला होने और चयन की आज़ादी पर टिक जाता है।

अलग-अलग तरह के अध्ययनों द्वारा यह दर्शाया गया है कि आरंभिक पठन में संदर्भ के इस्तेमाल में बच्चों की तत्परता यह निष्कर्ष निकालती है कि बच्चों को अर्थ तक पहुँचने से रोका नहीं जा सकता (यदि उन्हें इस प्रकार की अनुमति हो), उदाहरण के लिए— क्लीन, क्लीन और बर्टिनो, 1974; गोलिनकॉफ़, 1975, 1976; तथा डोहर्गिंग, 1976; मेकफ़रलैंड एवं रोहडस, 1978; रोसिंस्की, गोलिनकॉफ़ तथा कुकिश, 1975; को भी देखें, जिन्होंने यह निष्कर्ष निकाला है कि अर्थ जानने के लिए बच्चे खुद को रोक नहीं पाते।

यह किसी काम के परिणाम में हस्तक्षेप कर सकता है, क्योंकि बच्चे इसे अनदेखा नहीं कर सकते। ऐसे अध्ययन यह भी दिखाते हैं कि संदर्भ के इस्तेमाल और पढ़ने की क्षमता दोनों साथ-साथ हों तो उनकी साथ-साथ वृद्धि होती है। अक्सर इस संबंध को इस तथ्य से जोड़ा जाता है कि बेहतर पाठक संदर्भ का अधिक इस्तेमाल कर सकते हैं। इस संभावना पर कम विचार किया जाता है कि संदर्भ का प्रयोग पाठक को बेहतर बनाता है। पढ़ने की क्षमता और संदर्भ का इस्तेमाल इन दोनों संबंधों को समझने के लिए क्ले और इम्लैक, 1971; सैम्युल्स बैजी और चैन, 1975/1976; को भी देखें। बच्चों की गलतियों के विश्लेषण के लिए, इसे गुडमैन (Goodman) ‘पढ़ने की प्रक्रिया के झरोखे’ कहते हैं। गुडमैन, 1965–1969; वेबर, 1968; और क्ले, 1969; को भी देखें।

बच्चों के त्रुटिपूर्ण पठन संबंधी अध्ययन इस महत्वपूर्ण तथ्य को उजागर करते हैं कि बहुत सारी गलतियाँ, खासकर बेहतर पाठकों द्वारा की जाने वाली गलतियाँ, संदर्भ के अर्थ को बनाए रखती हैं और यह भी कि अर्थ को बदलने वाली गलतियाँ अक्सर अर्थ के लिए पढ़ने वाले बच्चों द्वारा बाद में खुद से सुधार ली जाती हैं, इसलिए वे ऐसी गलतियाँ नहीं हैं, जिन पर बहुत अधिक चिंता की जाए। जो बच्चे मात्र शब्दों को पढ़ते हैं, संभवतः इसका कारण यह है कि निर्देश के दौरान ‘सटीकता’ पर बल दिया जाता है। ऐसे बच्चे उन्हें बिना जाने निरर्थक गलतियाँ कर सकते हैं।

ध्वनि में 'डिकोड' करने की किसी संभावना के बिना सिर्फ अर्थ द्वारा बच्चे का पढ़ना सीखने का रूढ़ उदाहरण अनिवार्यतः हेलेन केलर (Helen Keller) का होगा। हेंडरसन, 1976; एक श्रवणबाधित बच्चे का प्रसंग बताते हैं, जिसने मात्र नौ महीनों में छह साल की उम्र में 4,400 मुद्रित शब्दों को पहचानना सीखा था। इस बच्चे ने यह सब अर्थपूर्ण संदर्भ में हाथ के संकेतों को मुद्रित शब्दों से जोड़कर सीखा था। मूलतः यह बच्चे की स्वतः जिज्ञासाओं की वजह से हुआ। इवोल्ट, 1981; ने यह दिखलाया कि श्रवणबाधित बच्चे उसी तरह से पढ़ सकते हैं, जिस तरह से सुनने में सक्षम बच्चे।

दोहरी प्रक्रिया

पठन पर प्रयोग-आधारित शोध में समझ के बारे में सबसे लोकप्रिय मान्यता इस धारणा पर केंद्रित है कि मस्तिष्क में एक 'आंतरिक शब्द-समूह' (Internal lexicon) होता है, जो मानसिक शब्दकोश का प्रमुख केंद्र होता है। हम जिन शब्दों को पढ़ते हैं, उनका अर्थ आंतरिक शब्द-समूह में देखते हैं। अवधारणा, एक रूपक है न कि व्याख्या। यह इसकी व्याख्या नहीं करती कि आंतरिक परिभाषाएँ कैसे समझी जाती हैं तथा चयन करने की क्षमता, पूर्वानुमान लगाना और पाठक आमतौर पर जो अन्य कार्य करते हैं— उनकी इसमें गुंजाइश नहीं रहती है। वास्तव में यह विचार कुछ निश्चित व्याख्याओं को प्रतिबाधित करता है, जैसे— 'समझ' किसी अवसर पर चित्रात्मक या संवेदनात्मक बिंब या एक भौतिक प्रतिक्रिया हो सकती है। 'समझ' स्थिति की बजाय एक प्रक्रिया है अथवा भाषा में अर्थ का सृजन किया जाता है।

आंतरिक शब्द-समूह की अवधारणा 'समझ' के मूल रहस्य को पूरी तरह से उजागर नहीं करती है। अभी तक यह धारणा है कि ऐसा शब्द-समूह वास्तव में मौजूद है, जिसे प्रायः मान लिया जाता है और उस पर कोई बहस नहीं होती। यह आसानी से मान लिया जाता है कि आंतरिक शब्दकोश से होते हुए और पहचानते हुए, शब्दों को समझा जाता है। यह एक बड़ी सैद्धांतिक उपयोगिता है। यह लक्ष्य की प्रकृति पर विचार किए बिना आँख एवं समझ के बीच काल्पनिक 'रास्तों' पर चर्चा करने का मौका देता है। समझ को 'शब्दकोश तक पहुँच' मानकर आसानी से खारिज किया जा सकता है।

भाषाविदों द्वारा आंतरिक शब्द-समूह पर कई विमर्शों में से फ़ोडर, 1979; और मनोवैज्ञानिक मॉर्टन, 1969; और रेबेन और परफ़ेड्टी, 1991; को देखें। मिलर और फ़ेलबॉम, 1991; अंग्रेज़ी के वास्तविक शब्द-समूह रचना की वृहत समस्याओं पर चर्चा

करते हैं, साथ ही 46,000 प्रविष्टियों का डेटाबेस, संज्ञा के 26 विभिन्न सोपान क्रम संबंधों को शामिल करता है। इसमें 10 स्तरीय गहन और उन्हें अलग करने वाली विशिष्टताओं की कम से कम तीन श्रेणियाँ, जैसे— हिस्से, गुण और कार्य भी शामिल हैं। फिर भी इस तरह का अर्थ संरचनागत वियोजन प्रचलित है। मिलर और जॉन्सन-लेयर्ड, 1975; को भी देखें। मैककौलिस, 1968; के एक प्रसिद्ध उदाहरण 'kill = cause become not alive' के साथ रॉबिन्सन, 1975; के अंतर्जात व्याकरण सिद्धांतों का भी उपहास हुआ।

रॉबिन्सन, 1975; यह विवाद उत्पन्न करते हैं कि क्या भाषा विज्ञान, विज्ञान है? अथवा होना चाहिए। रॉबिन्सन भाषा के मूल अवयवों में परिणत करने की अवधारणा को दोषी ठहराते हैं, जिसे वे 'भाषागत परमाणुवाद' (Linguistic atomism) कहते हैं। फोडर, 1981; कहते हैं कि अधिकांश शब्दों को मूल अवयवों में परिणत नहीं किया जा सकता। फोडर कहते हैं कि यदि लोग 50,000 शब्दों को जानते हैं तो जरूर 50,000 के करीब 'आदिम अवधारणाएँ' होंगी, जो अवश्य ही जन्मजात होंगी।

दोहरी प्रक्रिया के सिद्धांतकार दृश्यात्मक सूचना से आंतरिक शब्द समूह तक जाने के लिए दो रास्ते देखते हैं, पहला है— प्रत्यक्ष (यानी शब्द और अर्थ के बीच का अबाधित रास्ता। यह प्रस्तुत किताब के सामान्य दृष्टिकोण के समान है, लेकिन अनिवार्य रूप से समान दिशा में नहीं है) और दूसरा है— ध्वन्यात्मक रिकॉडिंग। विचार यह है कि आंतरिक शब्द समूह में न केवल अर्थ रहते हैं, बल्कि वर्तनी और उच्चारण, वाक्य-रचना संबंधी कार्यों के बारे में सूचनाएँ और संभवतः नाना प्रकार के लक्षणात्मक विवरण भी रहते हैं। ये सब उसके वैकल्पिक तरीके हैं कि पहचान और उत्पत्ति (लिखना और वर्तनी) दोनों में आंतरिक शब्द समूह का प्रवेश कैसे हो सकता है।

अधिकांश शोधकर्ताओं ने दोनों मार्गों को संभव बताया है, लेकिन प्रत्येक ने अलग-अलग बातों पर बल दिया है। कुछ सिद्धांतकार जैसे, गफ़ एंड वॉल्स, 1991; का तर्क है कि आंतरिक शब्दकोश तक केवल ध्वन्यात्मक रास्ता ही जाता है। पठन, अंग्रेजी हिज्जे के संकेताक्षर या बीजलेख की (बल्कि गूढ़ लिपि को समझने) डिकोडिंग (कूट खोलने) की एक प्रक्रिया है। एहरी, 1992; दावा करती हैं कि वर्तनी के पैटर्न के जरिये शब्द-समूह तक पहुँचा जा सकता है और यह जरूरी नहीं है कि इसके लिए ध्वन्यात्मक रूप में रिकोडिंग (Recoding) अनिवार्यतः हो (जो आमतौर पर अर्थ की पहचान के साथ उपलब्ध हो ही जाती है)। एहरी, 1992; इसे दृश्य-ध्वन्यात्मक मार्ग (Visual-phonological route) कहती हैं, जो कि 'प्रत्यक्ष-पहुँच' (Direct access) के लिए

भी इस्तेमाल होता है। वे इसका प्रमाण देती हैं कि 'देखकर पढ़ना सीखने वाले' बच्चे 'एम एस के' (MSK) मास्क 'Mask' को सीखना आसान पाते हैं और शब्द को 'Mask' की तरह याद करते हैं बजाय 'uhs' जैसी मनमानी वर्तनी के, हालाँकि नहीं पढ़ने वाले बच्चे ऐसा नहीं करते हैं। यह स्पष्ट है कि शब्दों की पहचान करने में वर्तनी संबंधी (Orthographic structure) जानकारी का इस्तेमाल होता है जैसे कि अंग्रेजी में समान-ध्वनि वाले शब्द (Homophones) 'Their' और 'There' में भेद करना।

वर्तनी-संरचना (Orthographic structure), जिसका शाब्दिक अर्थ है— दृश्य-बनावट, पद प्रायः वर्तनी (spelling) की ओर संकेत करता हुआ माना जाता है, न कि उच्चारण के मार्गदर्शक के रूप में, हालाँकि वर्तनी-संरचना शब्द के आकार और उसके लक्षण संबंधी विवरण की ओर भी संकेत कर सकती है। शब्दों को समग्र रूप में देखना और उन्हें अक्षरों की व्यवस्था के रूप में देखना, अलग-अलग या समूह के रूप में, यह सब दृश्य-विन्यास के रूप में है।

वैन ऑर्डन, जॉन्सन एवं हेल (Van Orden, Johnson and Hale, 1988) ने सर्व सहमति से अपने प्रकाशन को 'Word Identification in Reading Proceeds from Spelling to Sound to Meaning' का नाम दिया। बार्कर, टोर्जसन, वैगनर, 1992; ने तीसरी कक्षा में पढ़ने वाले 87 बच्चों पर पाँच परीक्षण किए— समय-सीमा के बिना और समय-सीमा में शब्द-पहचान, 100 शब्दों वाले अनुच्छेदों का मुखर और मौन पठन, मनगढ़ंत अर्थहीन शब्दों (Non-words) को पढ़ने की सटीकता। इन पाँचों परीक्षणों में बच्चों ने वर्तनी संबंधी कौशल का प्रयोग किया। मनगढ़ंत अर्थहीन शब्दों को पढ़ने में 5 प्रतिशत से लेकर पाठ्यसामग्री को मुखर रूप में पढ़ने में 20 प्रतिशत तक वर्तनी संबंधी कौशल का इस्तेमाल पाया गया।

उन्होंने 'ध्वन्यात्मक प्रक्रमण कौशल' (Phonological processing skill) को एक अधिक महत्वपूर्ण कारक के रूप में पाया, लेकिन उन्होंने इस बात को दर्ज नहीं किया कि बच्चे जो निर्देश ग्रहण कर रहे थे, यह उनसे संबंधित है या नहीं। सिडनबर्ग और मैकक्लीलैंड, 1989; यह तर्क प्रस्तुत करते हैं कि शब्द की पहचान में ध्वन्यात्मक सूचना के प्रत्यक्ष प्रयोग में अनिवार्य रूप से लेखिम-स्वनिम (Grapheme-phoneme) के मेल का इस्तेमाल जरूरी नहीं है, बल्कि यह शब्दों के वर्तनी संबंधी (Orthographic) और ध्वन्यात्मक प्रस्तुति के सह-प्रसरण (Covariance) में सांख्यिकीय नियमितता का परिणाम है।

परफ्रेड्री, 1985; गॉफ़ के भाषण अभिलेखन नमूना (Speech recording model) को स्वीकार नहीं करते। वे मानते हैं कि यह संभव तो है पर जरूरी नहीं। परफ्रेड्री अपने उपागम (Approach) को 'मौखिक निपुणता सिद्धांत' कहते हैं। 'मौखिक निपुणता' का अर्थ है— भाषा और पठन के भाषा संबंधी पहलुओं पर ध्यान एवं स्मृति संसाधन का आवंटन करने की कुशलता। इस संदर्भ में इसका अर्थ है— भाषण (Speech)। परफ्रेड्री पढ़ने को अलग-अलग अनेक 'प्रक्रियाओं' में विभाजित करते हैं, जैसे— शब्दों की पहचान, शब्द तक पहुँच (Lexical access), स्कीमा तक पहुँच (Schema access), अर्थग्रहण की प्रक्रिया तथा उपसर्गीय एनकोडिंग (Prepositional encoding) और अर्थतत्त्व एवं स्वनिम कोड को सक्रिय करना। पाठक इन बहुप्रक्रियाओं का इस्तेमाल 'कूट-व्यवस्था' (Coding system) को सीखने की जरूरत से प्रेरित होकर करता है। वे विशेष रूप से कारपेंटर तथा जस्ट, 1981; के शोध पर भरोसा करते हैं कि प्रायोगिक पठन की स्थितियों में, अधिकांश शब्दों पर बल दिया जाता है— छोटे की अपेक्षा बड़े शब्द पर; परिचित की अपेक्षा अधिक अपरिचित शब्द पर; एक वाक्य में शब्दों की अपेक्षा; अंतिम शब्द पर अधिका।

रेनर तथा पोलात्सेक, 1989; सीधे-सीधे लेखिम-स्वनिम (Grapheme-Phoneme) पहुँच के पक्षधर हैं, एक आक्षरिक या समग्र शब्दों के नहीं। एक लंबे तकनीकी तथा विवादास्पद लेख में वैन ऑर्डन, पैनिंगटन और स्टोन, 1991; ने विभिन्न दृष्टिकोणों का विस्तृत संदर्भ देते हुए रेनर तथा पोलात्सेक, 1989; के इस पक्ष को नकार दिया। वे इसे सांकेतिक मनोभाषाविज्ञान 'Subsymbolic psycholinguistic' से बदलना चाहते हैं। यह 'जटिल संबंधवाद' (Complex connectionism) और सहचर्य अधिगम (Covariant learning) पर आधारित है। इसमें संबद्धता की महत्ता को जाँचा जाता है।

यह लेख विशेष रूप से 'प्रारंभिक प्रेरणात्मक एनकोडिंग' से संबंधित है। जबकि लेख का शीर्षक दूसरे दावों के बीच निश्चयपूर्वक यह दावा नहीं करता कि इसकी विषयवस्तु 'पढ़ने' से संबंधित है। वाल्टर्स, कोमोडा तथा आर्बकल, 1985; प्रायोगिक प्रमाण देते हैं कि कुशल पठन में स्वनिमिक अभिलेख की भूमिका बहुत छोटी-सी होती है तथा यह अनावश्यक होती है, जब तक कि विस्तृत स्मृति की जरूरत न हो। पठन के लिए, दोहरी विधियों के सिद्धांत की कम तकनीकी आलोचना के लिए हेंडरसन, 1984; तथा बैरन स्ट्रॉसन, 1976; के लेख को देखा जा सकता है।

प्रायः यह मान लिया जाता है कि लिखित भाषा को बोल लेने से डिकोडिंग (कूट को खोलना) (Decoding) या रिकोडिंग (Recoding) से लिखित शब्दों का अर्थ स्वतः निकल आता है। पर बोले गए शब्द को भी समझने की ज़रूरत है, क्योंकि लिखे हुए शब्दों की अपेक्षा वे अधिक अस्पष्ट भी हो सकते हैं। पढ़ने की प्रक्रिया में स्वनिमिक मार्ग (Phonological loop) को शामिल करना समझ बनाने की दृष्टि से एक अतिरिक्त कदम है, एक सहज संक्षिप्त (Shortcut) तरीका नहीं है।

शरीर विज्ञान के प्रमाण

पठन के संदर्भ में अर्थ समझने के प्रभाव प्रत्यक्ष रूप से मस्तिष्क के पूर्ववर्ती अध्ययनों से प्राप्त होते हैं।² पीटरसन एट. एल., 1989; ने 'PET' (Positron Emission Tomographic) द्वारा मस्तिष्क में रक्त के बहाव के प्रतिरूपण द्वारा उन क्षेत्रों की पहचान की है, जो वयस्कों में मौखिक व लिखित शब्दों की प्रक्रिया में शामिल होते हैं। उनके परिणाम यह बताते हैं कि स्वनिम अभिलेखन (Phonological recording) के बिना भी दृश्यात्मक रूप से प्रस्तुत शब्दों से अर्थ और उच्चारण-क्षेत्रों तक का एक सीधा संबंध है। समान निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए रैशेल, 1990; ने विस्तृत रूप से सामान्य भाषा विधियों का इस्तेमाल किया है। जिन व्यक्तियों पर जाँच की जा रही थी, उन्हें बोले व लिखे हुए शब्दों के बारे में सोचने के लिए कहा गया, जब उनके मस्तिष्क की चयापचय गतिविधियों (Metabolic activity) का अभिलेख रेडियोधर्मी पदार्थों के इस्तेमाल से पीईटी विधियों, द्वारा त्रि-आयामी रूप से (Three Dimensionally) किया जा रहा था।

पोसनर तथा कार, 1992; ने मस्तिष्क के प्रतिरूपण चित्रण के तरीकों, संज्ञानात्मक गतिविधियों, जैसे— पढ़ते समय ध्यान की अवस्था, शाब्दिक पहुँच (Lexical access) पर ध्यान देने के अध्ययन में इन तरीकों की उपयोगिता को समझने के लिए समीक्षा की।

² मुझे, यहाँ उल्लेख करना चाहिए कि ऐसे सभी अध्ययनों का भाषांतरण बहुत सावधानीपूर्वक करना चाहिए। मैं, उन अध्ययनों द्वारा दर्शाए जा रहे मस्तिष्क के 'श्रवण-क्षेत्र' से सहमत नहीं हूँ अथवा वास्तव में पढ़ने के दौरान संपूर्ण मस्तिष्क निरपवाद रूप से सक्रिय होता है या तो दुष्प्रभाव के रूप में या पूरे जवाब के हिस्से के रूप में। गहन सैद्धांतिक मुद्दे, चिंतन की प्रकृति तथा मस्तिष्क के काम करने के तरीकों आदि को हल किए जाने की आवश्यकता है, इससे पहले कि मनोवैज्ञानिक से मनोवैज्ञानिक घटनाओं का अतिरेक हो। 'पठन का मनोविज्ञान' पुस्तक की समीक्षा, जिसमें तंत्रिका मनोविज्ञान पर अत्यधिक बल दिया गया है। अंडरवर्ड (Underwood, 1992) पूछते हैं कि किस प्रकार आँख की गण्डिका संरचना और मस्तिष्क में 'Amygdala' तथा अश्वमीन के कार्य, पढ़ने की समझ में मदद करते हैं और सोचते हैं कि वे वास्तव में असंगति को दूर कर रहे हैं, क्योंकि महत्वपूर्ण प्रश्न खो गए हैं।

उन्होंने यह बताया कि पीईटी प्रतिरूपण चित्रण से यह पता चलता है कि जब वास्तविक शब्द और उचित ढाँचे वाले कृत्रिम शब्द (Orthographically well-structured pseudowords) पढ़े जाते हैं, तो मस्तिष्क के कुछ हिस्से (सामान्यतः बायाँ दृष्टि-क्षेत्र) क्रियाशील हो जाते हैं, लेकिन बेतरतीब या यूँ ही कोई भी अक्षर या जटिल दृश्यात्मक संरचनाएँ (Pattern) पढ़ते समय मस्तिष्क के ये हिस्से क्रियाशील नहीं होते। अर्थ निकालने की प्रक्रिया में प्रीफ्रॉन्टल कोरटेक्स (Prefrontal Cortex) शामिल होता है।

स्वनिम विज्ञान या उच्चारण की प्रक्रिया में विभिन्न 'टेंपोरल क्षेत्र' (Temporal areas) शामिल होते हैं। निःसंदेह ये सभी अध्ययन निष्पादन, अर्थ-निर्णय और संबंध स्थापित करने में बहुत जटिल हैं। मोटे तौर पर ये प्रमाणित सिद्धांतों का अनुमोदन करते हैं कि शब्द की विभिन्न विशेषताओं का मस्तिष्क प्रणालियों के अलग-अलग जटिल समूहों द्वारा संगठन होता है। वारिंगटन और शैलेस, 1979; ने तंत्रिका मनोवैज्ञानिक (Neuropsychological) तथ्यों के आधार पर यह तर्क दिया है कि शब्द-रूप (Word form) का अर्थविज्ञान व्यवस्था (Semantic system) से अभिगमन होता है, जो अर्थपूर्णता का स्रोत माना जाता है।

पठन के दृश्यात्मक पक्षों और दृश्यात्मक बोध के जटिल तंत्रिकावैज्ञानिक (Neurological) आधार के संबंध में हुए अध्ययन पर विलोज़, क्रक और कोरकॉस, 1993; ने एक व्यापक संपादित लेख प्रस्तुत किया है। वे यह शिकायत करते हैं कि प्रत्यक्ष तौर पर पढ़ना एक दृश्यात्मक गतिविधि है, लेकिन स्वनिमिक जागरूकता (Phonological awareness) जैसे विषयों की तुलना में पढ़ने के इस पक्ष पर बहुत कम ध्यान दिया जाता है, हालाँकि यह एक सटीक अवलोकन है, लेकिन फिर भी संपादकों ने पढ़ने की प्रक्रिया के एक पहलू पर ज्यादा ज़ोर देते हुए, पूर्वज्ञान तथा सीखने एवं अर्थ की सामाजिक प्रकृति के महत्त्व को पूर्ण रूप से स्वीकार नहीं किया है। सैकड़ों अध्ययन जिनका उल्लेख किया गया है, में से अधिकांश खासतौर पर न भी हों तो भी प्राथमिक रूप से इस पर केंद्रित हैं कि आँखें क्या करती हैं? निश्चित रूप से ऐसे शोध की तुलना में, जिसमें उद्देश्य तथा भाषागत सीमाएँ शामिल हों, आँखें क्या करती हैं? केवल उसे समझने पर केंद्रित, शोध कार्य अधिक कठिन संभवतः अप्राकृतिक हो जाता है। कोलहार्ट, 1987; ने 700 पृष्ठों के सारांश में पठन के प्रायोगिक तरीके, शब्दों को पहचानना, वाक्यों का अर्थ समझना तथा आँखों की गति संबंधी बिंदु शामिल किए हैं।

आँखों की गतियाँ

विशेष रूप से, जब पठन-गति बढ़ती है, तब स्थिरण (Fixation) होने की स्थिति व विशिष्ट क्रम विश्वसनीय मार्गदर्शक नहीं हैं कि पाठक कैसे अर्थ ग्रहण करता है। (ठीक उसी तरह जिस तरह असतत तरीके से हमारी नज़र के घूमने के बावजूद हमारे मस्तिष्क में पूरे कमरे का एक समग्र और स्थायी चित्रण होता है, हालाँकि हमारी घूमती नज़रें इस बात का कोई विशेष संकेत नहीं देती हैं।) फिर भी जस्ट एवं कारपेंटर, 1980; ने स्थिरण-बिंदुओं के आधार पर पठन का नया सिद्धांत प्रस्तुत करने का दावा किया है। स्थिरण तथा अर्थग्रहण संबंधी अन्य चर्चाओं के लिए कोलर्स, 1976; कीरिस तथा जस्ट, 1984; जस्ट एवं कारपेंटर, 1984; रेयनर, 1983; तथा ग्रोनर, मेक्कोन्की तथा मेन्ज़, 1985; देखें। रेयनर तथा मॉरिस, 1992; यह दावा करते हैं कि प्रयोग यह दर्शाते हैं कि 'अर्थसंबंधी पूर्व-प्रक्रमण' (Semantic pre-processing) पठन में आँखों की गति को नियंत्रित नहीं करता है। इस बात के भी साक्ष्य देखे जा सकते हैं कि आँखों की गति पर हुए प्रयोग, पठन के बारे में कुछ नहीं कहते हैं।

उप-स्वरोच्चारण

एडफ़ेल्ट, 1960; ने निष्कर्ष निकाला कि कुशल पाठक, कमज़ोर पाठक की अपेक्षा 'मौन पठन' में कम शामिल होते हैं। वह यह भी मानते हैं कि कठिन गद्यांश की अपेक्षा आसान गद्यांश में उप-स्वरोच्चारण (Sub-vocalisation) कम होता है। (जिसमें मुझे लगता है कि वही रेखांकित कारक प्रतिबिंबित होता है कि कमज़ोर पाठक के लिए सभी गद्य कठिन होते हैं)। क्लेमन, 1975; बहुत सावधानीपूर्वक किए गए एक नियंत्रित अध्ययन में दिखाते हैं कि भाषण का अभिलेखन खास शब्दों (शाब्दिक पहुँच) को समझने के लिए आवश्यक नहीं है, परंतु वह तब उपयोगी होता है, जब 'अर्थात्मक एकीकरण' (Semantic integration) किया जाता है या दूसरे शब्दों में, जब एक अल्पकालीन स्मृति के ऊपर भारी-भरकम माँग रख दी जाए।

बैडले, एलड्रिज़ एवं लेविस, 1981; ने तर्क दिया कि यद्यपि उप-स्वरोच्चारण के द्वारा स्मृति में मदद मिलती है, प्रयोगों में अनुचित उच्चारण की आवश्यकताएँ अल्पकालिक स्मृति को खराब कर देती हैं। स्वॉनसन, 1984; ने भी दिखाया कि उप-स्वरोच्चारण की आवश्यकता स्मृति पर भार बढ़ने से बढ़ती जाती है (जिसे उन्होंने स्वनिमिक 'रिकोडिंग' (Phonological recoding) कहा है) उदाहरण के

लिए— ‘अर्थ ग्रहण करने वाले प्रश्न’ के संदर्भ में। यह आवश्यकता भी युवा पाठकों में ज़्यादा होती है या तब, जब पठन कठिन होता है। किसी भी स्थिति में स्वनिमिक ‘रिकोडिंग’ से पहले ही अर्थ ग्रहण करने की क्रिया हो जाती है, किसी दूसरी तरह से शब्दों का अर्थपूर्ण उप-स्वरोच्चारण नहीं हो सकता है। पग, 1978; तीव्र पठन तथा ‘उप-स्वरोच्चारण’ को हटाना— दोनों की चर्चा करते हैं और यह निष्कर्ष निकालते हैं कि इनमें से कोई भी अर्थ ग्रहण करने में बाधा नहीं डालता है।

4. स्कूलों में साक्षर बनना सीखना

—शोभा सिन्हा*

आज़ादी के पहले के दिनों से ही भारत में ज़्यादा-से-ज़्यादा लोगों को साक्षर बनाने के लक्ष्य की आकांक्षा रही है। वैसे, लक्ष्यों और वास्तविकता के बीच बड़ी खाई है, हालाँकि यहाँ साक्षरता का प्रतिशत बढ़ा है, लेकिन जनसंख्या में निरक्षरों की कुल संख्या में कमी नहीं आई है। वास्तव में आज यह पहले से कहीं ज़्यादा हो चुकी है। साक्षर समझे जाने वाले अधिकांश लोग (जनगणना के उदार मानकों के कारण) जो भी पढ़ते हैं, उसका अर्थ समझने में सक्षम नहीं होते हैं। इस स्थिति को लेकर किए गए अध्ययन आमतौर पर घर से संबंधित कारकों की भूमिका को उजागर तो करते हैं, लेकिन साक्षरता की निराशाजनक स्थिति को समझने के लिहाज़ से हमें स्कूल से संबंधित कारकों पर भी समान रूप से ध्यान देने की ज़रूरत है (कुमार, 1992)।

हमारे देश में साक्षर बनाने के लिए सुविधाएँ उपलब्ध कराने की प्राथमिक ज़िम्मेदारी स्कूलों पर है, जो अधिकांश बच्चों के लिए सीखने का एकमात्र स्थान है, हालाँकि भाषा-शिक्षा पर चर्चा करते समय भी साक्षर बनना सीखने पर कम ध्यान दिया जाता है। प्रारंभिक और माध्यमिक शिक्षा की *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा* (रा.शै.अ.प्र.प., 1988) जो कि चर्चित विद्यालयी शिक्षा के लिए *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा* (रा.शै.अ.प्र.प., 2000) का पूर्ववर्ती दस्तावेज़ है, में भी साक्षर बनना सीखने को बहुत कम स्थान दिया गया है। यह दस्तावेज़ बस इतना ही कहता है कि ‘प्राथमिक स्तर के आरंभिक दो सालों में बच्चे को अपनी मातृभाषा/प्रादेशिक भाषा में पढ़ना-लिखना सीखने के बुनियादी कौशल हासिल करने में मदद करनी चाहिए।’ (पृ. 22) यह दस्तावेज़ उच्चारण, स्वर के उतार-चढ़ाव, सुलेख और वर्तनी के साथ-साथ बहुत संक्षेप में समझ का उल्लेख करता है। साक्षर बनना सीखने को इतने भी हलके तरीके से नहीं लेना चाहिए, क्योंकि साक्षर बनने में असफलता हर तरह के शैक्षिक विस्तार में सीखने की प्रक्रिया पर असर डालेगी।

भारत के प्राथमिक स्कूलों में पढ़ना-लिखना सीखने से संबंधित सामग्री और उसके निर्देशों की गुणवत्ता को देखना ज़रूरी है। स्कूलों में अध्यापन का केंद्र-बिंदु पाठ्यपुस्तकें हैं, फलस्वरूप पाठ्यपुस्तकों के विश्लेषण से पता चलेगा कि स्कूली संदर्भ

में बच्चे साक्षर बनना सीखने के लिए किस तरह के निर्देश ग्रहण करते हैं। प्रस्तुत लेख आरंभिक कक्षाओं में इस्तेमाल होने वाली पाठ्यपुस्तकों, हिंदी प्रवेशिकाओं (Primers) पर केंद्रित है।

अधिकांश भारतीय कक्षाओं में साक्षर बनाने के लिए प्रवेशिकाओं का इस्तेमाल किया जाता है, जिन्हें खासतौर पर पढ़ना सिखाने के मकसद से तैयार किया जाता है। बाल साहित्य जैसी दूसरी पठन सामग्री के अभाव में पढ़ना सिखाने में ये प्रवेशिकाएँ महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। प्रवेशिकाएँ, साक्षरता की पाठ्यचर्या का आधार बनाती हैं और यह निर्धारित करती हैं कि उनके द्वारा कैसे पढ़ाया जाए? ऐसी स्थिति में इसकी अधिक संभावना है कि गैर-साक्षर पृष्ठभूमि से आने वाले बच्चों को केवल इसी तरह के पाठ देखने-सुनने को मिलें और इन्हीं पाठों के आधार पर पढ़ना-लिखना सीखने की कुशलता हासिल कर, वे पढ़ना सीखने के विषय में अपनी राय बना लें। एक ऐसे देश में, जहाँ स्कूली जीवन के आरंभिक वर्षों में ही स्कूल छोड़ देने वालों (Drop out) की दर बहुत अधिक है और साक्षरता दर बहुत कम है, इन पाठों की भूमिका कहीं ज्यादा महत्वपूर्ण हो जाती है, इसलिए इनका मूल्यांकन बहुत सावधानी से किए जाने की ज़रूरत है। प्रस्तुत लेख में मैंने, मौजूदा हिंदी प्रवेशिकाओं का विश्लेषण किया है और पढ़ने की जो सामग्री वे उपलब्ध कराती हैं, उनकी गुणवत्ता को आँका है साथ ही चर्चा की है कि क्या वाकई ये पाठ छोटे बच्चों की पढ़ना-लिखना सीखने में मदद करते हैं।

पारंपरिक रूप से पढ़ने की संकीर्ण अवधारणात्मक समझ यह थी कि पढ़ना 'डिकोडिंग' की प्रक्रिया है, यानी लिखित भाषा का मौखिक (ध्वन्यात्मक) समानार्थी खोजना ही 'पढ़ना' है। साक्षर बनना सीखने के संदर्भ में जो प्रधान दृष्टिकोण था (पढ़ना सीखने के लिए तैयार होना) उसके अनुसार 'पढ़ना सीखने' को 'डिकोड करना' सीखने के रूप में देखा गया। ज़ाहिर तौर पर तब पढ़ना सीखने के लिए दिए जाने वाले निर्देशों का निहितार्थ था — 'डिकोडिंग' में निपुणता हासिल करना। पढ़ने से जुड़े हुए उपकौशल्यों में एक-एक करके निपुणता हासिल करने पर 'डिकोडिंग' में निपुणता मिल जाती थी। इसके अलावा पढ़ना सीखते समय भाषा के प्रयोगात्मक पक्ष की बजाय उसके औपचारिक पक्ष पर ज़ोर देने की प्रवृत्ति थी (सलज़बी और टील, 1986)।

यदि सामग्री की दृष्टि से देखें, तो इसका अर्थ यह है कि इन प्रवेशिकाओं के पाठों को अक्षर तथा ध्वनियों के इर्द-गिर्द रचा गया था और बच्चों से यह अपेक्षा की गई थी कि वे अक्षर व ध्वनि के बीच तालमेल बैठाने में महारत हासिल करें तथा शब्दों

को 'डिकोड' करने (उनका अर्थ समझने) के लिए अक्षरों और ध्वनि को मिलाना सीखें। इस तरह के सामग्री-निर्माण के पीछे यह मान्यता थी कि 'पढ़ना सीखना' नीचे से ऊपर जाने की प्रक्रिया (Bottom-up approach) है, जिसमें छोटे-छोटे टुकड़ों से एक समग्र बनता है और कोई भी अलग-अलग टुकड़ों को क्रमशः सीखकर समग्र को सीख सकता है।

हाल के वर्षों में पढ़ने के इस नज़रिए को चुनौती दी गई है। एक वैकल्पिक नज़रिए 'नवोन्मेषी/उदीयमान साक्षरता' (Emergent literacy) ने प्रधानता हासिल की है, जो कि पढ़ने और विकास की एक भिन्न और व्यापक अवधारणा पर आधारित है। साक्षरता अब केवल 'डिकोडिंग' के रूप में ही नहीं, बल्कि पढ़ने की पूरी क्रिया के रूप में देखी जाती है, जिसमें समझना भी शामिल है। मेसन और सिन्हा, 1993; नवोन्मेषी साक्षरता का नज़रिया ऐसे अर्थपूर्ण पाठों से संवाद करने की वकालत करता है। पढ़ना-लिखना सीखना, जिसमें असल उद्देश्यों के साथ-साथ आनंद भी मिले। यह नज़रिया भाषा के केवल ध्वनि पक्ष पर ध्यान नहीं देता, बल्कि भाषा के सभी पक्षों (अर्थ संबंधी, वाक्य-विन्यास संबंधी और आकृति-ध्वनि संबंधी) पर बल देता है।

इस बात का अनुदेशात्मक निहितार्थ यह है कि बच्चे सीखने की प्रक्रिया में सार्थक रूप से शामिल हों, न कि ध्वनियों को क्रमबद्ध रूप से सीखने की निपुणता हासिल करें, जैसा कि पहले का नज़रिया था। इस प्रकार के सीखने को बढ़ावा देने के लिए अनेक प्रामाणिक क्रियाकलाप भी सुझाए गए हैं। हीबर्ट, 1994; के अनुसार प्रामाणिक क्रियाकलाप बच्चों को आनंद और आपसी बातचीत के लिए साक्षरता का तत्काल प्रयोग करने में मदद करते हैं। ये स्कूलों में साक्षर बनाने वाले निर्देशों के ढर्रे पर चलने वाले क्रियाकलाप नहीं हैं, जिनमें साक्षरता के भविष्य का किसी ऐसे उपयोग के मकसद से टुकड़ों में अभ्यास कराया जाए, जिसे परिभाषित नहीं किया गया हो (पृ. 391)। इसके साथ ही पढ़ने-लिखने को सीखना, तब अधिक आसान हो जाता है जब वह समझ-बूझ युक्त हो, दिलचस्प हो और प्रासंगिक हो। (गुडमैन, 1986) इस नज़रिए में सहज भाषा के ऐसे पाठों के इस्तेमाल का सुझाव दिया गया है, जिनका अंदाज़ा लगाया जा सके और वे दिलचस्प भी हों, लेकिन उनकी भाषा पहले की तरह बनावटी किस्म की न हो।

प्रस्तुत लेख में, नवोन्मेषी साक्षरता के नज़रिए से हाल ही में प्रकाशित हिंदी की दस प्रवेशिकाओं का विश्लेषण किया गया है। विश्लेषण के पहले चरण में पाठों की

संरचना और उनमें पढ़ना-लिखना सीखने को लेकर जो पूर्व धारणाएँ काम कर रही हैं, उनकी पहचान की गई है। विश्लेषण का दूसरा चरण इन पाठों की विषयवस्तु, शैली और रोचकता के स्तर का आकलन करता है।

पाठों की संरचना

इनके विश्लेषण से पता चलता है कि पारंपरिक ध्वनि पद्धति पर ज़रूरत से ज़्यादा निर्भरता है। प्रवेशिकाओं के सभी अध्याय कुछ खास-खास वर्णों (विशेष रूप से स्वरों) के इर्द-गिर्द गढ़े गए हैं। सामान्यतः वे हिंदी वर्णमाला के क्रम में दिए गए हैं, शायद ही कहीं वह क्रम बदला है। सभी प्रवेशिकाओं में, अध्यायों की शुरुआत शब्दों की सूची (कभी-कभी चित्रों के साथ) से होती है। शब्दों का चयन ध्वनियों की समानता के आधार पर किया गया है और विषयवस्तु के हिसाब से उनका आपस में कोई जुड़ाव नहीं है। उदाहरण के तौर पर— (क) कार, भात, सागर, सरकार, दमा, शाम, तलवार, साल और काला— ये शब्द एक ही पाठ में सूचीबद्ध हैं, क्योंकि उन सबमें ‘आ’ ध्वनि है; जैसे— कार में ‘आ’ की ध्वनि; (शिक्षा भारती, पृ. 12), (ख) मिठास, सितार, बारिश, पॉलिश, तकिया, बिलाव, दाहिना, लिफ़ाफ़ा, खटिया, टिकिया, नारियल, शनिवार, रविवार, साइकिल— इन शब्दों को एक ही पाठ में दिए जाने का आधार यही है कि इन सबमें ‘इ’ स्वर है (ज्ञान गंगा प्रवेशिका, पृ. 37)।

बच्चों को इन शब्दों को पढ़ना (उच्चारण करना) होता है और फिर उन्हें कुछ वाक्य पढ़ने के लिए दिए जाते हैं। शब्दों की सूची सामान्य रूप से काफ़ी लंबी होती है (एक ही प्रवेशिका में लगभग 84 शब्द)। शब्दों का चयन ध्वनि के आधार पर होता है न कि अर्थ के आधार पर। शब्दों में विषयगत जुड़ाव नहीं होता है और अर्थ के आधार पर भी वे असंबद्ध होते हैं, इसलिए पढ़ने का एकमात्र उद्देश्य यांत्रिक तरीके से ध्वनि का अभ्यास भर करना होता है। यदि कोई उन शब्दों को पढ़ने का प्रयास करता है तो नतीजा बहुत थकाने वाला और उबाऊ होता है।

अध्यायों में शब्दों की सूची के बाद कुछ वाक्य दिए गए हैं। इन वाक्यों की रचना उन वर्णों और स्वरों से की गई है, जिन्हें बच्चा तब तक सीख चुका होता है। इन वाक्यों में किसी वर्ण विशेष से बनने वाले लगभग सभी या अधिकतम शब्दों का प्रयोग करने का प्रयास किया जाता है। उदाहरण के लिए— सरला इधर आ। बाज़ार जाकर गाज़र का हलवा ला। माता का कहना मान। नमक मत खा। रमा अपना समय खराब मत कर। बाज़ार

जाकर बादाम ला (शिक्षा भारती प्रवेशिका, पृ. 13)। इन वाक्यों में अधिकतर शब्दों में 'आ' स्वर है, जबकि बाकी शब्द पिछले अध्यायों में सीखे जा चुके हैं। इनमें 'इ' या 'ओ' स्वर का इस्तेमाल नहीं हुआ है, क्योंकि वे आगे के अध्यायों में आएँगे। यहाँ ध्वनियों का अभ्यास और 'डिकोड' करना सीखना ही प्राथमिक उद्देश्य है। यह अधिक महत्वपूर्ण नहीं है कि पाठ का अर्थ क्या है? प्रायः वाक्य एक-दूसरे से जुड़े हुए नहीं हैं (इस पर आगे विस्तार से चर्चा की जाएगी)। कुछ पाठों में वर्ण-ध्वनि के साथ विषय-वस्तु का भी ध्यान रखा गया है, जैसे— बाल भारती शृंखला की किताबें।

चूँकि भाषा की उपज ध्वनि विशेष के द्वारा निर्देशित नहीं होती है, इसलिए उनके आधार पर बनाए गए पाठ बहुत ही असंतोषजनक बने हैं। विषय-वस्तु, शैली और रोचकता का विश्लेषण करने पर इन पाठों के साथ तीन प्रमुख समस्याएँ नज़र आती हैं— निरर्थकता, अस्वाभाविक भाषा और अरुचिकर/अप्रासंगिक विषय-वस्तु।

विषय-वस्तु की निरर्थक पाठ्यसामग्री

ध्वनि विशेष का इस्तेमाल करने की बाध्यता रहने के कारण पूरे पाठ के अर्थ को नज़रअंदाज़ कर दिया जाता है, जिसका नतीजा प्रायः अटपटे से पाठ से होता है। प्रत्येक पाठ में दिए गए वाक्यों को भी इसी तर्क के आधार पर गढ़ा जाता है। शब्दों की सूची और कभी-कभी वाक्यों का भी विषयवस्तु से कोई जुड़ाव नहीं होता है। उनके चयन का एकमात्र आधार ध्वनि होती है, अर्थ नहीं। पूरे पाठ की संरचना अर्थ के प्रति घोर उपेक्षा दर्शाती है। उपयुक्त ध्वनि योजना में वाक्य जब तक सटीक बैठते हैं, तब तक इससे कोई मतलब नहीं होता कि उन वाक्यों से कोई अर्थ निकल रहा है या नहीं।

अटपटे वाक्य

प्रवेशिकाओं में अटपटे वाक्यों के अनेक उदाहरण हैं। ध्वनि विशेष के प्रयोग की बाध्यता तथा अर्थ की पूर्ण अनदेखी के कारण, अजीबो-गरीब वाक्यों की रचना की गई है। उदाहरण के लिए—

- (क) प्रवेशिकाएँ 'अ' (जो कि स्वर भी है) वर्ण सिखाने वाले पाठ से शुरू होती हैं। उन्हें बिना मात्रा वाले शब्दों के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। उनमें भले ही संयुक्त व्यंजन न हों, लेकिन स्वर रहते हैं।

‘कहा। ईश कह’, ‘ओस कहा’ (बाल मंजरी, पृ. 13)

‘आम पर चढ़’, (दीपू हिंदी रीडर, पृ. 17)

‘एक औरत आई’, ‘वह छत पर गई खटमल पकड़ कर उतर आई’ (भाषा सागर प्रवेशिका, पृ. 20)

(ख) ‘इ’ पर आधारित पाठ— ‘गिलास सिर पर मत रखा’ (इंद्रधनुष स्वरमाला, पृ. 19)

(ग) ‘ओ’ पर आधारित पाठ— ‘मोटे घोड़े से डरो। छोटे-घोड़े से डरना उचित नहीं है।’ (भाषा बोध, पृ. 38)

(घ) ‘र’ पर आधारित पाठ— ‘सर्प मत बना’ (भाषा सागर प्रवेशिका, पृ. 14)

असंबद्ध पाठ

‘पाठों का विषयवस्तु से जुड़ाव होने के कारण भी निरर्थकता को बढ़ावा मिलता है।’ इसमें भी शब्दों और वाक्यों को गढ़े जाने का आधार ध्वनि है, अर्थ नहीं, चूँकि सभी वाक्य एक-दूसरे से पूरी तरह स्वतंत्र होते हैं। इसलिए पाठक को पढ़ते समय उनके संदर्भ से कोई सहायता नहीं मिलती है। यदि पाठक वाक्य को पढ़ भी पाए तो भी ये पाठ अर्थ-निर्माण में मददगार नहीं होते। जैसा कि आगे दिए गए उदाहरणों से स्पष्ट है—

(क) ‘अ’ स्वर पर आधारित पाठ— ‘ओस पर चला’ ‘पथ पर मत थका’ ‘जल थल नभ पर मत थका’ ‘अब चल यज्ञ करा’ (सरस शब्द बोध, पृ. 8)

(ख) ‘ई’ स्वर पर आधारित पाठ— ‘वीर बना’ ‘तीर चला।’ ‘गीत गा।’ ‘लड़की नदी पर गई’ ‘वह मछली लाएगी।’ ‘जलपरी की कहानी कह’, ‘लड़ाई मत करा’ ‘बकरी भागी।’ ‘हाथी आया।’ ‘लड़की गिरी।’ ‘चील उड़ी।’ ‘नानी की छड़ी निकल पड़ी।’ (हिंदी रीडर, पृ. 13)

आमतौर पर प्रवेशिकाओं के आरंभिक पाठों में असंबद्ध वाक्यों की संख्या अधिक है, क्योंकि उनमें सीमित स्वर वर्णों का इस्तेमाल किया जाता है।

अधूरी कहानियाँ

कभी-कभी कुछ वाक्य संबद्ध से दिखते हैं, लेकिन कहानी के तार जुड़े हैं या कहानी को आगे बढ़ाया जाए, इसकी बाध्यता लेखक महसूस नहीं करते हैं। उदाहरण के लिए—

(क) ‘उ’ स्वर पर आधारित पाठ— ‘एक कछुआ था।’ ‘वह यमुना नदी पर गया।’ ‘कछुआ पुल पर चढ़ गया।’ ‘वह बहुत धीमी चाल चला।’ ‘बुलबुल आ।’ ‘फुरफुर करती उड़ती जा।’ (शिक्षा भारती, पृ. 19)

इस प्रसंग में कहानी को अधूरा ही छोड़ दिया गया है। अंतिम दो वाक्यों का पहले के वाक्यों से कोई लेना-देना नहीं है, दुर्भाग्यवश ऐसे पाठों की कमी नहीं है। इन पाठों में अर्थ की जो अनदेखी की गई है, वह गंभीर चिंता का विषय है। पढ़ने का मतलब क्या है, उसे लेकर ये पाठ केवल गलत धारणा बना सकते हैं और कुछ नहीं। इन पाठों को पढ़ने में अवश्य ही कठिनाई होगी, क्योंकि पढ़ना तो अर्थ ग्रहण करने की क्रिया है और ये पाठ उसकी गुंजाइश ही नहीं रखते हैं।

शैली-कृत्रिम भाषा

(क) केवल ध्वनि पर ध्यान दिए जाने का नतीजा यह होता है कि भाषा का ढर्रा बड़ा बनावटी हो जाता है। वाक्य प्रायः टूटे-फूटे होते हैं और उनमें प्रवाह नहीं होता है। ऐसा आरंभिक पाठों में अधिक दिखता है, क्योंकि वहाँ चुनिंदा वर्णों के प्रयोग को लेकर दबाव अधिक होता है। वाक्यों की रचना सीमित ध्वनियों का इस्तेमाल करके ही होती है, जो तब तक सीखी जा चुकी होती है, 'आओ, खाना खाओ' पाठ का निम्नलिखित अंश इसी बात को दर्शाता है—

आओ, कमला आओ। आओ, मदन आओ। खाना बन गया। मीरा को साथ लाओ। आओ, खाना खाओ। सब मिलकर खाना खाओ। आओ, मीरा को साथ लाओ। आओ, खाना खाओ। माता जी दाल-चावल दो। लो मीरा, दाल-चावल लो। साग लो, चटनी लो। मदन, रोटी लो, रायता लो। खाना चबा-चबाकर खाओ। (बाल भारती, भाग-1 पृ. 36-37)

(ख) पाठ में लगातार परिवर्तन दिखाई देते हैं। उदाहरण के लिए, पाठ आदेशात्मक वाक्यों की शृंखला से बदलकर वर्णनात्मक वाक्य पर आ जाता है और फिर दोबारा आदेशात्मक वाक्यों की शृंखला शुरू हो जाती है। पाठों में ऐसा बार-बार दिखना सामान्य-सी बात है, जिसमें पढ़ने का अनुभव बड़ा बेतुका-सा होता है। उदाहरण के लिए, 'उ' स्वर पर आधारित पाठ देखिए—

पुल पर जा। गुमसुम न रहा। गुन-गुन मत कर। छुपकर बात मत सुन। कुली सामान लाया। दरवाजा खुला था। मुनमुन आवाज सुनकर आई। सामान दुकान का था। उसका भाई गुड़िया लाया था। वह बहुत खुश हुई। बुढ़िया कहानी सुनाती थी। गुलाब चुन। हापुड़ का साबुन ला। मुनमुन पुल पर बटुआ न रख। मुनि की कुटिया जा। बुढ़िया रुई लाई। कपड़ा बुन। (इंद्रधनुष स्वरमाला, पृ. 27)

यहाँ पाठ आदेशात्मक वाक्यों की शृंखला से शुरू होता है और वर्णनात्मक वाक्यों में तब्दील हो जाता है, उसके बाद फिर से आदेशात्मक वाक्यों पर लौट आता है।

(ग) हिंदी में कुछ ध्वनियों का लगातार बहुत अधिक प्रयोग नहीं होता है, जैसे 'ऋ'। फिर भी वर्णमाला में होने के कारण इस पर पाठ बनाए जाते हैं। उन पाठों में बहुत संस्कृतनिष्ठ हिंदी दिखती है, चूँकि शब्दावली के लिहाज़ से यह आसान नहीं है। इसलिए, हैरानी होती है कि बच्चे ऐसे पाठ का क्या अर्थ समझेंगे। उदाहरण के लिए— किसी से घृणा मत करो। तृण मृग का भोजन है। मृग वृक्ष पर नहीं चढ़ सकता। पृथ्वी के जीव-जंतुओं पर कृपा करो। किसी पर व्यर्थ दोष मत लगाओ। (ज्ञान गंगा प्रवेशिका, पृ. 66)

यह पाठ 'ऋ' ध्वनि पर आधारित है। इस ध्वनि का प्रयोग करने की अनिवार्यता के कारण बेहद संस्कृतनिष्ठ अनेक शब्द पाठ में इस्तेमाल किए गए हैं, जैसे— तृण, मृग, वृक्ष, व्यर्थ। इन सभी शब्दों के स्थान पर आसान से शब्द हिंदी में इस्तेमाल करने के लिए मौजूद हैं, जिनसे बच्चे भी अधिक परिचित हैं, लेकिन इन्हीं शब्दों का प्रयोग करने की आवश्यकता सिर्फ इसलिए है, क्योंकि इनमें 'ऋ' ध्वनि का प्रयोग हुआ है। इस ध्वनि को पाठ में जगह देने के लिए शब्दों से परिचय या उनकी कठिनता के स्तर की अनदेखी कर दी जाती है।

यह स्पष्ट है कि पाठ लिखते समय लेखक शैली की दृष्टि से पठनीयता को महत्व नहीं देते हैं। जिन दबावों के चलते वे पाठों की रचना करते हैं, उससे उनका लेखन अनिवार्य रूप से बनावटी हो जाता है। ज़ाहिर है कि ऐसे पाठों से पढ़ना-लिखना सिखाने में बाधा पड़ेगी, क्योंकि सहज, स्वाभाविक भाषा बच्चों को पढ़ते समय भाषा संबंधी अपने पूर्वज्ञान का इस्तेमाल करने में मदद करती है। भाषा का ऐसा स्वरूप, जिससे बच्चे पूरी तरह अपरिचित हों तथा जिसमें कोई प्रवाह न हो, बच्चों को साक्षर बनाने के साधनों से काटकर एकदम अलग कर सकता है। पढ़ना सीख रहे बच्चों को साक्षरता के ज़रिए, अपरिचित माध्यम एवं कठिन भाषा से जूझना होगा।

अप्रासंगिक या नीरस पाठ्यसामग्री

इसके लिए शायद ही कभी प्रयास किया जाता है कि कोई पाठ बच्चों के लिए प्रासंगिक हो या रोचक हो। जैसा कि पहले भी कहा जा चुका है कि सार्थक पाठों की रचना के लिए

बहुत कम प्रयास किया जाता है, इसलिए पाठों को अप्रासंगिक और नीरस होना ही है। जब किसी खास विषय पर भी पाठों की रचना की कोशिश की जाती है, तब भी वे शायद ही दिलचस्प होते हों, क्योंकि लेखन शैली और कथा-तत्व पर बहुत कम ध्यान दिया जाता है।

(क) अक्सर पाठों में आदेशात्मक वाक्यों की भरमार होती है, जैसे— ‘ओ’ स्वर पर आधारित पाठ का निम्नलिखित अंश इसी बात को दर्शाता है—

ढोल बजाओ। चोर भगाओ। शोर न मचाओ। पाठशाला चलो। किताब खोलो। बोलकर पढ़ो। देखकर लिखो। तोते को राम-राम रटने दो। कोट पहनो। टोपी पहनो। मोटर लाओ। (हिंदी रीडर पृ.19) लगभग सभी प्रवेशिकाओं में, इसी शैली में पाठ लिखे गए हैं। यह शैली बच्चों के ऐसे आडंबर को दर्शाती है, जिसमें बच्चे आदेशों का पालन करने के लिए विवश हैं। इसकी संभावना कम ही है कि ऐसे पाठ बच्चों की दिलचस्पी बढ़ाने वाले या पढ़ने लायक लगें।

(ख) कभी-कभी उनका लहजा बड़ा ही दार्शनिक और नैतिकतापूर्ण होता है। इसकी बहुत कम उम्मीद रहती है कि ऐसे पाठों में बच्चों को आनंद आएगा, जैसे— *निर्धन में ईश्वर के दर्शन कर। बर्फ़ की तरह निर्मल बन। निर्भय रह। शर्मनाक मार्ग से बच। जुर्म मत कर। बात का मर्म समझ।* (भाषा सागर प्रवेशिका, पृ. 14)

(ग) विषय-वस्तु से संगति रखने वाले पाठों तक में अक्सर न मज़ा रहता है और न ही रस। उनमें कथा-तत्व का अभाव रहता है और पाठ को रोचक बनाने की चिंता नहीं की जाती है। बाल साहित्य के मुकाबले ये पाठ बहुत कमज़ोर साबित होते हैं। इसकी उम्मीद कम ही है कि ऐसे पाठ को पढ़ने के लिए बच्चे उत्साहित होंगे, जिन्हें बच्चों के नज़रिए से तैयार नहीं किया गया हो या जिसमें उनकी दिलचस्पी की कोई सामग्री नहीं हो।

इन पाठों से पता चलता है कि ध्वनि के प्रति एकमात्र लगाव के कारण भाषा के अन्य पहलू अछूते रह जाते हैं। पढ़ने और साक्षर बनना सीखने की प्रक्रिया में जो मान्यता निहित है, वह पढ़ने (पढ़ने की तैयारी) को लेकर नवोन्मेषी/उदीयमान साक्षरता के आधुनिक विचारों के मुकाबले, पुराने विचारों के अधिक नज़दीक है। यह तर्क दिया जा सकता है कि ये पाठ पढ़ना-लिखना सीखने को बढ़ावा देने के बजाय उसे ही बाधित करते हैं। इससे बच्चों तक यही संदेश पहुँचता है कि पढ़ना एक निरर्थक और नीरस

गतिविधि है, जिसका न तो उनकी जिंदगी से कोई जुड़ाव है और जो न ही उस भाषा से मेल खाती है, जो भाषा वे पहले से जानते हैं। यह संदेश खासकर उन बच्चों के लिए खतरनाक है, जिनका स्कूल के बाहर साक्षरता से बहुत कम वास्ता पड़ता है और जो साक्षर बनने के लिए पूरी तरह से स्कूलों पर ही निर्भर हैं।

संज्ञानात्मक दृष्टिकोण से भी ये पाठ समस्याओं से घिरे हैं। पहले उपकौशलों को सीखना और फिर अर्थपूर्ण पाठों को पढ़ने के लिए उन्हें एक-एक कर जोड़ने का इंतजार करना, शायद ही पढ़ना सीखने का कोई समझपूर्ण तरीका है। पढ़ने के मुख्य प्रयोजन (मौजूदा संदर्भ में आनंद) की पूरी तरह अनदेखी कर दी गई। ये पाठ निश्चित ही बच्चों से यह अपेक्षा करते हैं कि वे पहले पढ़ना सीख लें तथा भविष्य में कभी उन कौशलों का प्रयोग करने की प्रतीक्षा करें।

हालाँकि साक्षरता एक महत्वपूर्ण मुद्दा है, फिर भी यह आश्चर्य की बात है कि साक्षरता को कारगर बनाने वाली प्रक्रियाओं को इतनी कठोरता से नज़रअंदाज़ किया गया है। ऐसा नहीं है कि सिद्धांत बनाने में प्रगति और साक्षर बनना सीखने में शोध, यहाँ तक कि इनसे जुड़े नज़रिए में आने वाले बड़े बदलाव, कोई हाल की घटनाएँ हैं। तब सवाल उठता है कि जिस देश में साक्षरता इतना बड़ा मुद्दा है, वहाँ इन बदलावों पर ध्यान आखिर क्यों नहीं दिया गया। साक्षरता संबंधी आधुनिक नज़रिए भारत में अनुदेशात्मक माहौल को आखिर प्रभावित क्यों नहीं कर पाए हैं, इसलिए, साक्षर बनना सीखने की प्रकृति पर चर्चा करने के लिए और स्कूल में इसे किसी तर्कसंगत बिंदु पर शुरू करने के लिए यह बहुत आवश्यक है कि नवोन्मेषी साक्षरता के नज़रिए के आधार पर ठोस परिवर्तन किए जाएँ। इसे भी फिर से परिभाषित करने की ज़रूरत है कि एक आसान पाठ का मतलब क्या है? यदि कोई पाठ एक समय में केवल एक ध्वनि पढ़ाने का लक्ष्य लेकर चलता है, तो वह पाठ आसान नहीं है। इस लेख में जो उदाहरण दिए गए हैं, वे तो निश्चित ही यह दर्शाते हैं कि ये पद्धति पाठ को बच्चों की पहुँच से दूर ले जाते हैं।

संदर्भ

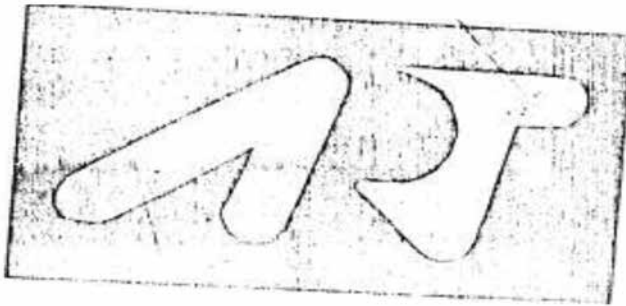
- एनसीईआरटी. 1988. नेशनल करिकुलम फ़ॉर एलिमेंट्री एंड सेकेंड्री एजुकेशन: अ फ़्रेमवर्क.
 एनसीईआरटी. विद्यालंकार, ए. एस. लुद्रा एंड एस. वर्मा. 1997. बाल भारती, भाग-1.
 नयी दिल्ली.
- कुमार के. 1952. व्हाट इज वर्थ टीचिंग?. ओरिएंट लांगमैन, नयी दिल्ली.
- गुडमैन, के. 1966. व्हाट्स होल इन होल लैंग्वेज? हेनीमन, पॉट्समाउथ. एनएच.
- जयश्री, आर 1998. बालमंजरी वर्णमाला. भारती भवन. पटना.
- ट्र्याल, डब्ल्यू. एंड इ सलज़बी. 1986. 'इंट्रोडक्शन इमर्जेंट लिटरेसी ऐज ए पर्सपेक्टिव फ़ॉर
 एजामिनिंग हाउ यंग चिल्ड्रेन बिकम राइटर्स एंड रीडर्स', इन डब्ल्यू ट्र्याल एंड इ. सलज़बी
 इमर्जेंट लिटरेसी: राइटिंग रीडिंग. पृष्ठ 7-25 एन.जे: ऐब्लेक्स नॉरवूड. 5
 (न/ न्ड). दीपू हिंदी प्रवेशिका. दीपू प्रकाशन. दिल्ली.
- (न/ न्ड). ज्ञान गंगा प्रवेशिका. सुमन प्रकाशन. नयी दिल्ली.
- प्राइमर्स, भाषा बोध. 1998 तीसरा कदम. नीता. नयी दिल्ली
- बख्शी. जी.डी. भाषा सागर प्रवेशिका. त्रिशिया पब्लिकेशन. सहारनपुर इंडिया.
- मसन, जे. एम. एंड एस. सिन्हा. 1993. इमर्जिंग लिटरेसी इन द अर्ली चाइल्डहुड ईयर्स: एप्लाइंग
 वायगात्सकियन मॉडल ऑफ़ लर्निंग एंड डेवलपमेंट. इन बी स्पेडेक (एडि.) हैडबुक ऑफ़
 रिसर्च ऑन द एजुकेशन ऑफ़ यंग चिल्ड्रेन मैकमिलन. पृष्ठ 137-150. न्यूयॉर्क.
- मल्होत्रा, एम. सरस शब्द बोध, होलीफ़ेथ इंटरनेशनल, नयी दिल्ली. इंडिया.
- मेहता आर. इंद्रधनुष स्वरमाला. दिल्ली श्री स्टार पब्लिकेशन्स. इंडिया.
- रानी, आर.—. 1991. हिंदी रीडर. पार्ट ओ. भारती भवन, पटना.
- बिकल, के. एंड ए डिग्रा. 1999. शिक्षा भारती प्रवेशिका, सोनी पब्लिकेशन्स. नयी दिल्ली.
- हेबर्ट, ई.एच. 1994. बीकमिंग लिटरेट थ्रू आथेंटिक टास्कस: एवीडेन्स एंड एडाप्टेशन. इन आर
 बी. रडल. एम. आर. रडल एंड एच. सिंगर (एडि.) थ्योरेटिकल मॉड्यूल एंड प्रोसेस ऑफ़
 रीडिंग. (4^थ एडि. पृष्ठ 391-413) आई.आर.ए., फ़्रेमवर्क.

5. पढ़ने के बारे में

—जूडिथ एम. न्यूमैन*

लंबे समय से अध्यापक विद्यार्थियों के 'पठन के प्रवाह' को लेकर चिंतित रहे हैं। यह स्पष्ट है कि विद्यार्थियों को उनके पूरे विद्यालयी जीवन के दौरान पठन के संबंध में निरंतर सुनियोजित निर्देश देते रहने की आवश्यकता है, क्योंकि अधिकांश विद्यार्थी पढ़ने के लिए दी गई विभिन्न पठन-सामग्री को शायद ठीक से समझ नहीं पाते। विद्यार्थियों के पठन-प्रवाह में सुधार अंग्रेजी या फिर भाषा कक्षाओं के शिक्षण पर ही निर्भर नहीं करता, बल्कि महत्वपूर्ण यह है कि पठन-निर्देशों को संपूर्ण पाठ्यचर्या में स्थान दिया जाए। पठन कौशल के विकास को प्रोत्साहित करने के लिए सोचना होगा कि हम निर्देशों को पाठ्यचर्या के अनुकूल कैसे बनाएं। साथ ही पठन-निर्देशों को विषयगत अध्यापन में समायोजित करने के उन तरीकों को भी खोजना होगा, जो विद्यार्थियों के पढ़ने के लिए आवश्यक पूर्वज्ञान विकसित करने में सहायक हों, जिससे विद्यार्थी वह सब पढ़ सकें जो हम उन्हें पढ़ने के लिए देना चाहते हैं।

चलिए पढ़ने की प्रक्रिया पर विचार करने की शुरुआत करें। आम धारणा यह है कि पठन-प्रक्रिया की शुरुआत लिखित सामग्री से होती है। आकृति 5.1 को ध्यान से देखें। पहली नज़र में आकृति समझ में नहीं आती। ऐसा क्यों है? इस पृष्ठ को देखने से हमारी आँखें तो सूचना ग्रहण कर रही हैं पर फिर भी कुछ ऐसा है जो छूट गया है। यहाँ उन व्याख्यात्मक सूचनाओं का अभाव है, जिनका होना ज़रूरी था। यदि मैं आपसे यह कहूँ कि यह आकृति एक शब्द है तो आप में से कुछ लोग उसे शब्द के रूप में देखेंगे।



आकृति 5.1

*अ सक्सैसफुल वेब प्रोजेक्ट मैनेजर, वेबसाइट डेवलपर, एकेडमिक एडमिनिस्ट्रेटर एंड टीचर विद एक्सटेंसिव एंड वाइट-रेंजिंग एक्सपीरियंस इन पोस्ट सेकेंड्री एजुकेशन

यदि इसमें यह सूचना भी जोड़ दूँ कि यह शब्द काले रंग की पृष्ठभूमि पर सफ़ेद से लिखा गया है तो कुछ और लोग भी इसे समझ पाएँगे और हो सकता है कि आपको समझाने के लिए मुझे यह बताना पड़े कि यह शब्द 'ART' है और तब आप इस आकृति को पहचान पाएँगे।

यह उदाहरण देखने के संबंध में इस बुनियादी बात की ओर संकेत करता है कि 'देखना' मात्र एक दृश्यात्मक प्रक्रिया नहीं है— कोलर्स, 1969 और न ही पढ़ना। कुछ सूचनाएँ हम अपनी आँखों द्वारा लिखित सामग्री से प्रत्यक्ष रूप से ग्रहण कर लेते हैं। फ्रैंक स्मिथ, 1971 ने इसे 'दृश्यात्मक सूचना' कहा है, पर यह सूचना का एकमात्र स्रोत नहीं है। बहुत-सी सूचनाएँ हमारे मस्तिष्क में याददाश्त के रूप में संचित रहती हैं, जिनका हम पढ़ने के समय उपयोग करते हैं, चूँकि ये सूचनाएँ हमारी आँखों के सामने नहीं होती हैं, इसलिए स्मिथ इन्हें 'गैर-दृश्यात्मक सूचनाएँ' कहते हैं। हम जो कुछ भी पढ़ रहे हैं, उसे समझने के लिए लिखित सामग्री के प्रत्येक हिस्से को पहचानना अनिवार्य नहीं है। हमारी गैर-दृश्यात्मक सूचनाएँ (उदाहरण के लिए— परिवेश के बारे में हमारी जानकारी और भाषा व उसकी संरचना के बारे में समझ) लिखित सामग्री के प्रति दृष्टिकोण को प्रभावित करती हैं तथा हमारी समझ को बढ़ाने में विशेष योगदान देती हैं।

नीचे दिए गए लिखित चिह्न द्वारा इसे समझने की कोशिश करते हैं—

B

इस आकृति की समझ, उसके प्रयोग के संदर्भ पर निर्भर करती है। इस उदाहरण में देखें—

BLACK

यहाँ हम इसे एक अक्षर की तरह देखते हैं, जब यह इस प्रकार आए—

413-7609

हम इसे दो अंकों के रूप की तरह देखते हैं। दृश्यात्मक सूचना तो एक-सी ही है, परंतु अर्थ में अंतर का कारण गैर-दृश्यात्मक सूचनाएँ हैं।

सक्षम पाठक बनने की प्रक्रिया के दौरान पूर्वज्ञान के प्रयोग द्वारा सटीक, प्रासंगिक, मुद्रित संकेतों का चयन कैसे करें, यह कौशल विकसित होता है। पठन सामग्री पर हमें कितना ध्यान देना है, यह हर स्थिति में एक-सा नहीं रहता है। यदि हमारे पास गैर-दृश्यात्मक सूचनाएँ उपलब्ध हैं, तो मुद्रित सामग्री पर अपेक्षाकृत अधिक ध्यान देने की ज़रूरत नहीं होगी। इसके विपरीत यदि पूर्वज्ञान पर्याप्त नहीं है तो प्रत्येक पृष्ठ को पढ़ने के लिए अधिक समय व प्रयास की ज़रूरत होगी। पठन सामग्री के विषय में पहले से जितनी अधिक जानकारी होगी 'पढ़ना' उतना ही आसान हो जाएगा और पूर्व जानकारी जितनी कम होगी, समझना उतना ही कठिन होगा।

लिखित भाषा को समझने के लिए हमारे द्वारा प्रयुक्त अवधारणात्मक सूचनाएँ बहुत ही महत्वपूर्ण होती हैं। बहुत से विद्यार्थियों को चाहे वे छोटे हों या बड़े, विद्यालयों में दी जाने वाली सामग्री पढ़ने में कठिनाई आती है। ऐसा इसलिए नहीं है कि वे पढ़ना नहीं जानते, बल्कि ऐसा इसलिए है, क्योंकि उनके पास 'गैर-दृश्यात्मक सूचनाओं' का अभाव है। पर्याप्त गैर-दृश्यात्मक सूचनाएँ न होना एक आम बात है। निम्नलिखित अनुच्छेद पर गौर करते हैं—

In this example the modulation to E is a passing modulation. The suspension in the inside voice is helpful in avoiding the cadential effect at each final chord of the pattern. The first transposition moves down a major third and the second down a minor third, it being impossible to divide the interval of a perfect fifth (from the initial key, G-sharp, to the desired destination, C-sharp) into two equal parts (Piston, 1962.)

इस तरह 'ART' चिह्न व 13 की संख्या या B का आभास कराने वाले दो उदाहरण हमने देखे। इस अनुच्छेद को समझने के लिए जिस तरह की सूचनाएँ हमें चाहिए, वे इस पृष्ठ पर उपलब्ध नहीं हैं। इस अनुच्छेद को समझने के लिए हमें स्वर-संगति की कुछ जानकारी होना आवश्यक है। यद्यपि हमें यह आभास हो जाता है कि हम संगीत के बारे में पढ़ रहे हैं, परंतु स्वर-संगति को समझने के लिए प्रयुक्त पारिभाषिक शब्दों की जानकारी के अभाव में पाठ का अर्थ हमारे लिए रहस्य ही बना रहता है।

महत्वपूर्ण बात यह है कि हमारा सक्षम पाठक होना या न होना और पाठ से जुड़ पाना, मुख्य रूप से हमारे पूर्वज्ञान पर निर्भर करता है। एक सक्षम पाठक भी पढ़ते समय

कठिनाई महसूस कर सकता है, अगर उसके पास पूर्वज्ञान कम हो या न हो। स्थिति इसके विपरीत भी हो सकती है, यानी कम सक्षम पाठक भी आसानी से पढ़ सकते हैं यदि वे किसी परिचित विषय पर पढ़ रहे हों।

दृश्यात्मक और गैर-दृश्यात्मक सूचना के बीच का यह अंतर निर्देशों को किस प्रकार प्रभावित करता है ?

हम यह जानते हैं कि पूर्वज्ञान के साथ पाठ पढ़ना आसान होता है। यह सुनिश्चित कर लें कि पढ़ने से पहले उनके पास पर्याप्त विषयगत पूर्वज्ञान है। हम विद्यार्थियों के लिए पठन को सरल कर सकते हैं, अगर हम उन्हें पूर्वज्ञान अर्जित करने के लिए प्रेरित करें, चूँकि हमारी समझ नयी-नयी जानकारी को पूर्वज्ञान से जोड़ने की योग्यता पर निर्भर करती है, इसलिए हमें विद्यार्थियों को पढ़ने के लिए ज़रूरी अवधारणात्मक पृष्ठभूमि विकसित करने में सहायता करनी चाहिए।

हम विद्यार्थियों की पूर्वज्ञान विकसित करने में किस प्रकार मदद कर सकते हैं, इसके कई तरीके हो सकते हैं। हमारे निर्देशों के विकल्प इस बात पर आधारित होंगे कि विद्यार्थी पहले से कितना जानते हैं। कुछ स्थितियों में विद्यार्थियों का सामान्य ज्ञान समझ बनाने के लिए पर्याप्त होता है। ज़रूरत इस बात की है कि विद्यार्थियों का ध्यान उस तरफ़ दिलाया जाए जो वे पहले से जानते हैं। यह करने के लिए एक उपयोगी तरीका यह होगा कि विद्यार्थियों द्वारा विषय पर सामूहिक चर्चा करवाकर उन्हें अपने पास उपलब्ध जानकारी से अवगत करवाया जाए। इससे वे सक्रिय रूप से पढ़ने में सक्षम होंगे। सामूहिक चर्चा के दौरान जो जानकारीयाँ उभरकर आएँगी, पढ़ना उनके द्वारा संचालित होगा। सामूहिक चर्चा के दौरान उठाए गए सवाल उन्हें जवाब खोजने के लिए पढ़ने को प्रेरित करेंगे।

आमतौर पर शिक्षण, विद्यार्थियों को नया ज्ञान विकसित करने में मदद देने से संबंधित होता है। कई स्थितियों में व्यावहारिक, जीवनोपयोगी अनुभव प्रदान करना अधिक सहायक सिद्ध हो सकता है। यदि विद्यार्थियों को जीव-जंतुओं को पास से ध्यानपूर्वक देखने व उनकी प्रजातियों को विश्लेषित करने का अवसर पहले मिला हो तो वे जीव-जंतुओं के वर्गीकरण के पाठ को आसानी से पढ़ सकेंगे। गणित की पुस्तकें उन विद्यार्थियों को अधिक सरलता से समझ में आएँगी, जिन्होंने गणित की अवधारणाओं को प्रत्यक्ष रूप से समझा है। इसी तरह इतिहास के कठिन अध्याय को समझना सरल हो जाएगा यदि इसके पूर्व, काल विशेष से संबंधित उपन्यास को पढ़ा जाए या उस काल विशेष पर कोई फ़िल्म देखी जाए अथवा काल विशेष से संबंधित वस्तुओं का अध्ययन किया जाए और उन पर चर्चा की जाए।

पूर्वज्ञान अर्जित करने का एक अन्य तरीका 'पढ़ना' भी है। एक विषय से संबंधित जानकारी दूसरे विषय को पढ़ने में सहायक हो सकती है। हम जो जानकारी पहले पढ़कर हासिल करते हैं, वह आगामी पाठों के लिए आधार बनती है। कभी-कभी किसी जटिल विषय को पढ़ने से पहले उस पर लिखा कोई सरल अंश, जटिल अनुच्छेद को पढ़ने में सहायक हो सकता है। जहाँ विचार जटिल हों और समझने में कठिन हों वहाँ कई स्रोतों द्वारा प्राप्त जानकारीयों का इस्तेमाल विद्यार्थियों की उस विषय के प्रति आम समझ बनाने में सहायक हो सकता है। यह सहायक सामग्री उन इतर पुस्तकों से भी प्राप्त हो सकती है, जो विद्यार्थियों को प्रत्यक्षतः नहीं पढ़नी हैं। आवश्यकतानुसार यह अध्यापकों द्वारा भी लिखी जा सकती है।

विद्यार्थियों में पठन-प्रवाह विकसित करने के लिए शब्दों की पहचान या शब्द विश्लेषण से कहीं आगे ध्यान देने की आवश्यकता है। यदि हम पाठ को पढ़ने से पहले उसे समझने और अर्थ-ग्रहण करने में विद्यार्थियों की सहायता करें तो हम उनके पठन कौशल को कहीं अधिक प्रभावित कर सकते हैं। हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि पाठक के पास गैर-दृश्यात्मक सूचनाओं की मात्रा ही पठन को कठिन या सरल बनाती है। यदि हम विद्यार्थियों में किसी पूर्वज्ञान को सुनिश्चित किए बिना उन्हें पढ़ने के लिए कहते हैं, तब हम उनके लिए पठन को कठिन बनाते हैं। यदि हम विद्यार्थियों का ध्यान उनके द्वारा अर्जित पूर्वज्ञान की ओर आकर्षित करें, पूर्व अर्जित अवधारणाओं पर चर्चा करें और इस बात का अनुमान लगा सकें कि हम कहाँ पहुँच सकेंगे साथ ही हम उन्हें मूर्त अनुभव उपलब्ध कराने के लिए समय निकाल सकें, उन्हें उसी विषय पर विविध पठन-सामग्री उपलब्ध करा सकें तब हम पठन को आसान बना सकेंगे।

अब तक हमने गैर-दृश्यात्मक सूचनाओं व पूर्वज्ञान को सामान्य स्तर पर समझने की कोशिश की है। अब हमें उसकी विशिष्ट प्रकृति की ओर ध्यान देना होगा। अब हमें भाषा के संकेत तंत्र का, जो कि भाषा की समझ में सहायक है, विश्लेषण करना होगा। चलिए, एक वाक्य से शुरुआत करते हैं—

Jimmy lived in a small

मान लीजिए, यह वाक्य हमें पृष्ठ की अंतिम पंक्ति में मिला। पृष्ठ पलटने से पहले ही हमें इस वाक्य के अगले शब्द का पूर्वानुमान होने लगता है। उदाहरण के लिए— जैसा कि हम जानते हैं कि या तो संज्ञा होगी या विशेषण, क्योंकि दूसरे शब्द; जैसे— क्रिया, क्रिया विशेषण, कारक आदि विशेषण के बाद नहीं आते हैं। वाक्य कुछ इस तरह का नहीं होगा—

Jimmy lived in a small eat

या

Jimmy lived in a small of

हमारी उम्मीद किसी स्थान के नाम, निवास स्थान के नाम या ऐसे ही किसी वर्णनात्मक शब्द की होगी—

Jimmy lived in a small white

अगले शब्द के संज्ञा या विशेषण होने का पूर्वाभास, हमारे भाषागत ज्ञान का हिस्सा है। शब्दों का पूर्वानुमान करने की क्षमता वाक्य-संरचना के हमारे ज्ञान पर आधारित है। भाषा प्रयोग करने के ये व्याकरणिक नियम हमें अपनी सहज बुद्धि से प्राप्त होते हैं।

हम यह भी जान जाते हैं कि अगला शब्द 'एलीफेंट' या 'टेलीफोन' नहीं होगा और न ही संभवतः यह 'सबमरीन' होगा, क्योंकि इस संदर्भ में यह अर्थसंगत नहीं है, भले ही यह संज्ञा है और न ही ये उन स्थानों की ओर इंगित कर रहे हैं, जहाँ सामान्यतः लोग रहते हैं। हमारा भाषाई ज्ञान व उनके अर्थों का पूर्वज्ञान, हमारे शब्दों के चयन को सीमित करता है। अगर हम इसी उदाहरण में कुछ और जोड़ें—

Jimmy lived in a small c.

अब हम संभावित उत्तर के कुछ और अनुमान लगा सकते हैं, क्योंकि हम जानते हैं कि सामान्यतः अंग्रेजी भाषा में 'c' के बाद अगले वर्ण कभी भी B, F, या, G नहीं हो सकते। परन्तु 'C' के बाद S या n, h, i, या r की हम अपेक्षा कर सकते हैं। हमारा अंग्रेजी भाषा वर्तनी, विषयक सहज ज्ञान भाषा के पढ़ने और लिखने से अर्जित होता है और यह हमें शब्दों के क्रम का पूर्वानुमान लगाने में मदद करता है—

cabin.

Jimmy lived in a small church.

clearing.

craft.

दूसरे शब्दों में, पढ़ने की क्रिया में हम भाषा-संरचना, वाक्य-विन्यास, अर्थविज्ञान, वर्तनी विषयक अपने ज्ञान का प्रयोग करते हैं। वाक्य-विज्ञान हमें वाक्यों की संरचना का ज्ञान देता है, जिससे हमें शब्दों के संबंध का पता चलता है और हमारा व्याकरणिक चयन सीमित हो जाता है। शब्दार्थ एवं अर्थों के ज्ञान का निर्माण 'अर्थविज्ञान' कहलाता है और अर्थगत संकेत (Semantic cues) सीमित संरचना में उपयुक्त अर्थों का अनुमान लगाने

में सहायक होते हैं। किसी भाषा में सामान्यतः पाए जाने वाले वर्तनी संबंधी पैटर्न 'वर्तनी विषयक विज्ञान' के अंतर्गत आते हैं। ये हमें विशिष्ट शब्दों के चयन के अनुमान लगाने में सहायता करते हैं।

सूचना के इन स्रोतों, यानी भाषिक संकेत-व्यवस्था का उपयोग दृश्यात्मक सूचना के साथ संबंध जोड़ने के लिए किया जाता है। हम जितना अधिक वाक्य संबंधी, अर्थ संबंधी और वर्तनी विषयक ज्ञान का उपयोग करते हैं, हमें मुद्रित सामग्री पर उतना ही कम निर्भर रहना पड़ता है। ऐसा इसलिए है, क्योंकि हम पूर्वानुमान लगा सकते हैं। हम पढ़ते समय भाषिक संकेत व्यवस्था का उपयोग पूर्वानुमान करने, अपनी अपेक्षाओं की पुष्टि करने के लिए करते हैं और इस तरह हम नयी जानकारीयों और पूर्व जानकारीयों को समायोजित करते हैं।

It was still dark but there was a faint suggestion of a grey luminosity in the east as we felt our way through the bordering poplar bluffs to be the slough.

Through the blurred screen of leafless trees, I behold the living silver of the slough, miraculously conjured out of the dark mists. The shimmering surface was rippled by the slow, waking movements of the green-winged teal.

As the dawn approached, the red glare of the morning sun fell on the immaculate mirror of the slough; and then the ducks came to the pond with a great whoosh. They came in such numbers that it seemed the slough would be too small to hold them all.

इस गद्यांश में शब्द 'Slough' ऐसा शब्द नहीं है, जिसे हममें से बहुतों ने पहले नहीं जाना होगा। हम अपने वाक्य-विन्यास के ज्ञान के आधार पर यह बता सकते हैं कि यह शब्द 'संज्ञा' है, क्योंकि उसके आगे 'The' लगा है, जो संज्ञा का सूचक है। हम इस शब्द के अर्थ के बारे में भी कुछ कह सकते हैं। हम यह भी बता सकते हैं कि यह जगह पेड़ों से घिरी हुई है, जिसमें अभी पत्ते नहीं हैं, क्योंकि या तो अभी सर्दी है या वसंत की शुरुआत है।

इसकी सतह पर बतखों के तैरने से हलचल हो रही है। अर्थविज्ञान (Symanctic) के संकेतों से हम यह समझ सकते हैं कि यह स्थान किसी प्रकार का कोई सरोवर या छोटी झील होगी।

हममें से बहुतों ने, इस शब्द को कभी सुना नहीं होगा, परंतु इस उदाहरण के बाद हमें इसके उच्चारण के बारे में कुछ अंदाज़ा हो जाता है। यह Cough या Though या Rough या Plough या Though में से किसी एक की तरह हो सकता है। इसके उच्चारण की अनिश्चितता हमें इसके अर्थ को जानने से नहीं रोकती है। अर्थ समझने के लिए उच्चारण का ज्ञान ज़रूरी नहीं है, क्योंकि अर्थ का निर्माण हम अर्थविज्ञान एवं भाषिक संकेत की सहायता से कर चुके होते हैं।

यह उदाहरण इस बात पर बल देता है कि शब्दों के उच्चारण पर ध्यान देने से वे समझने के महत्वपूर्ण कार्य से भटक जाते हैं। किसी शब्द को एक अस्थायी उच्चारण दे देना हर स्थिति में संभव है और वाक्य रचना एवं अर्थज्ञान से जुड़े संकेत शब्दों के प्रति हमारी समझ बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

अक्सर निर्देश इस पूर्व धारणा पर आधारित होते हैं कि यदि हम किसी शब्द को बोल सकते हैं, तब हम उसे समझ भी लेंगे। ऐसा उस स्थिति में तो संभव हो सकता है कि हमने कोई शब्द कभी सुना हो और हम उसे पहचानते भी हों, लेकिन कई ऐसे भी शब्द होते हैं, जिनका प्रयोग हमने पहले कभी नहीं सुना होता, उनका उच्चारण भर कर लेना हमें समझने में मदद नहीं करेगा। पढ़ने से पहले हम वाक्य-विन्यास और अर्थ संकेत द्वारा अर्थ का अनुमान लगाते हैं और पढ़ते समय हम पूर्वज्ञान की पुष्टि करते हुए नए ज्ञान को अर्जित करते हैं।

हम पठन संबंधी निर्देशों के लिए भाषा संकेत व्यवस्था का उपयोग किस प्रकार कर सकते हैं?

मैं, बल देना चाहता हूँ कि मैं, इस बात का समर्थन नहीं करता कि हम अपने विद्यार्थियों को भाषिक संकेत व्यवस्था के बारे में औपचारिक तरीके से पढ़ाएँ, क्योंकि मैं, विश्वस्त नहीं हूँ कि इस प्रकार के ज्ञान को स्पष्ट करने से उन्हें कोई विशेष लाभ होगा। जिस प्रकार धारा प्रवाह पढ़ने के लिए भाषिक संकेत व्यवस्थाओं के बारे में बात कर पाना आवश्यक नहीं है, उसी प्रकार बातचीत करने के दौरान हम जो करते हैं, उसका विश्लेषण व वर्णन करने से हम अच्छे वक्ता नहीं बन जाते हैं। शिक्षकों के लिए पढ़ने की प्रक्रिया को समझना महत्वपूर्ण है, जिससे वे ऐसी निर्देशात्मक स्थितियाँ रच सकें, जिनमें विद्यार्थी अपने पास उपलब्ध विस्तृत ज्ञान का प्रयोग करने के लिए उत्साहित हों।

वास्तव में, हम इस बात को महसूस ही नहीं कर पाते कि हमारे अनेक विद्यार्थी बहुत सटीक रूप से वाक्य-विन्यास संकेत-व्यवस्था का प्रयोग करते हैं। विद्यार्थियों से अपने प्रश्नों के सही उत्तर पा लेने पर हम यह मान लेते हैं कि उन्हें वे सब अवधारणाएँ समझ में आ गई हैं, जो हम सिखाना चाहते हैं, लेकिन वे बिना समझे भी, सही शब्द क्रम, व्यावहारिक शब्द, विभक्ति प्रधान शब्द और विराम-चिह्नों का प्रयोग करके उत्तर तो दे सकते हैं, उनमें समझ का फिर भी अभाव रहता है। उदाहरण के लिए—

In scrangle, wizzets were crailing because most furples were glinking a targ of pranialism. This targ of pranialism was the result of many pranial fwumps wanting their own persts.

Why were wizzets in Scrangle crailing?

Because most furples were glinking a targ of pranialism.

Why was there a targ of pranialism?

Because many pranial fwumps wanted their own persats.

Is the following situation, in which students are asked to read and answer questions about the text, very different?

In Europe, tensions were rising because most countries were experiencing a surge of nationalism. This surge of nationalism was the result of many national groups wanting their own governments (Tait and Mould, 1973. P. 307).

प्रश्न— *Why were tensions in Europe rising?*

उत्तर— *Because most countries were experiencing a surge of nationalism.*

प्रश्न— *Why was there a surge of nationalism?*

उत्तर— *Beacuse many national groups wanted their own governments.*

These answers may be demonstrating an ability to manipulate syntactic structure and not an understanding of the concepts.

ये 'उत्तर' वाक्य-संरचना को नियंत्रित करने की योग्यता को प्रदर्शित करते हैं पर किसी संकल्पना की समझ को नहीं बताते हैं।

यदि हमें विद्यार्थियों को भाषिक संकेत-व्यवस्था के बारे में औपचारिक रूप से नहीं बताना है, तब हम एक निपुण पाठक बनने में उनकी मदद कैसे कर सकते हैं? हम इसकी शुरुआत इस बात पर जोर देकर कर सकते हैं कि पठन-क्रिया में 'पढ़ने' की हर स्थिति का लक्ष्य 'समझना' है। हम उनकी मदद यह विश्वास दिलाकर कर सकते हैं कि गद्यांश का आशय समझने के लिए उन्हें प्रत्येक शब्द को पहचानना ज़रूरी नहीं है। हमें विद्यार्थियों को भाषिक संकेत व्यवस्था के प्रयोग के प्रति जागरूक बनाने और निरर्थक प्रयोग से जुड़े निर्णय लेने में भी उनकी सहायता करनी चाहिए।

पाठक किस तरह के निर्णय ले सकते हैं, यह समझना भी ज़रूरी है। गैर-दृश्यात्मक सूचनाओं का एक और पक्ष, मुख्य रूप से सहज बोध से जुड़ा है। जब हमारा सामना किसी अपरिचित चीज़ से होता है, तब हम अपने आप से यह नहीं कहते कि अब हम क्या करें? जब हम पढ़ते हैं, तब हम यह निर्णय करते हैं कि कब हमें पीछे जाना है, कब हमें पुनः प्रयास करना है और कब कैसे आगे बढ़ते रहना है? इस तरह के निर्णयों को पठन रणनीति (Reading strategies) कहते हैं— गुडमैन एवं बर्क, 1980।

पठन रणनीतियाँ आधारभूत रूप से तीन तरह की होती हैं। पहला, हम पूर्वानुमान लगाते हैं कि आगे क्या आ रहा है। दूसरा, हम अपने अनुमानों की पुष्टि करते हैं और जब हमारी अपेक्षाएँ ठीक नहीं होती हैं, तब उन्हें सुधारते हैं। हम नयी जानकारियों को मौजूदा ज्ञान के साथ एकीकृत करके आगे बढ़ाते हैं।

पूर्वानुमान लगाने की रणनीति कुछ या सभी संकेत-व्यवस्थाओं से उपलब्ध सूचनाओं के आधार पर अपेक्षाओं को जन्म देती है। रणनीतियों की पुष्टि इस बात से होती है कि जो हम पढ़ रहे हैं उसका कुछ अर्थ निकल रहा है या नहीं। एकीकरण करने की रणनीति में पढ़ने के दौरान अपने पूर्वज्ञान में नए अर्थों को शामिल करने की जटिल प्रक्रिया शामिल है। हम अपरिचित शब्दों के अर्थों, जटिल विचारों और संबंधों को एकीकृत करते हैं। हम प्रत्येक संकेत-व्यवस्था से प्राप्त जानकारी के आधार पर अनुमान लगाते हैं, उसकी पुष्टि

करते हैं और सभी संकेत व्यवस्थाओं को आधार बनाकर एकीकृत करते हैं। चलिए, इस अनुच्छेद को देखते हैं —

... का नाम सुनकर अक्सर लोगों के रोंगटे खड़े हो जाते हैं।

(साँप, मकड़ियाँ, जोंक, हत्या, युद्ध, महँगाई)

यह दुर्भाग्यपूर्ण है, क्योंकि ये ज्यादातर नुकसान न पहुँचाने वाले और रोचक प्राणी होते हैं।

(हत्या, युद्ध और महँगाई प्राणी न होने के कारण काट दें)

मादा, इंसानों की तरह ही अपने बच्चों की देखभाल करती है।

(शायद साँप करते हों, जोंक और मकड़ियाँ तो अंडे देकर चली जाती हैं।)

अपने बच्चों को उनके जीवन के पहले दो सप्ताह तक रखती है।

(मुझे नहीं लगता कि मादा साँप अपने बच्चों को साथ रखती है।)

सभी स्तनधारी, जीवों की तरह ही अपने बच्चों को दूध पिलाती हैं और ध्यान रखती हैं।

(साँप स्तनधारी नहीं होते हैं)

जो शिशु दो सप्ताह का हो जाता है उसके पंख उड़ने के लायक हो जाते हैं।

(स्तनधारी पशु, पंख — चमगादड़?)

एक के पंख अनोखे होते हैं। वह असल में एक पतली त्वचा है, जो उसके हाथ, शरीर और पैर तक फैली होती है।

(चमगादड़)

(मुझे यह नहीं पता था)

.....की उड़ने की आदतें आश्चर्यजनक होती हैं, हालाँकि वे रात के अँधेरे में उड़ते हैं फिर भी किसी चीज़ से नहीं टकराते।..... अँधेरे में देख नहीं सकते पर उनके पास एक विशेष इंद्रिय होती है, जो उन्हें किसी भी चीज़ से टकराने से पहले सचेत कर देती है।

अनुच्छेद यह दर्शाता है कि हम कैसे अनुमान लगाने, पुष्टि करने तथा एकीकृत करने की रणनीतियों का प्रयोग करते हैं। इस तरह के अनुच्छेद पढ़ने से हम यह समझ पाते हैं कि पाठ को समग्रता में देखने से अर्थ का निर्माण होता है। मुद्रित सामग्री में नमूनों के आधार पर पाठक अपने अनुमान को पुष्टि करता है और आगे आने वाले अर्थ का अनुमान लगाता चलता है।

अनुच्छेद से प्राप्त जानकारी के आधार पर संभावित अर्थों की पुष्टि या अपुष्टि की जाती है। विभिन्न संभावनाओं को जाँचने के बाद—साँप, मकड़ियाँ, महँगाई और पंखों के संदर्भ से हम यह महसूस करते हैं कि हम चमगादड़ों के बारे में पढ़ रहे हैं। चमगादड़ एकमात्र स्तनधारी हैं जो उड़ सकते हैं। इस जानकारी के आधार पर हम रिक्त स्थान के शब्द के अर्थ को स्थापित करते हैं। अनुच्छेद का शेष हिस्सा अर्थ की पुष्टि करता है, साथ-साथ नयी जानकारी की प्रतिपुष्टि और उन्हें एकीकृत करने का अवसर प्रदान करता है। यह प्रक्रिया निरंतर और परस्पर सामंजस्य के साथ दोनों स्तरों पर काम करती है।

हम प्रवाहमय पठन कौशल विकसित करने में विद्यार्थियों की सहायता किस प्रकार कर सकते हैं? अपरिचित शब्दों के अवरोध से जूझने में मदद करना इसका एक मुख्य उद्देश्य होना चाहिए, क्योंकि अधिकतर कमजोर पाठक यह सोचते हैं कि पढ़ना एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें हर शब्द की सही पहचान की जाती है। वे आमतौर पर अपरिचित बिंदुओं/शब्दों पर रुक जाते हैं। ऐसी परिस्थिति में उनमें से कई पाठक उसे 'बोलने की' असफल कोशिश करते हैं और इस दौरान वे यह भूल जाते हैं कि वे क्या पढ़ रहे थे। हमें विद्यार्थियों को यह समझाना होगा कि संपूर्ण अर्थ प्रत्येक शब्द को पहचानने पर निर्भर नहीं करता। हमें उन्हें महसूस कराना होगा कि किसी अपरिचित शब्द का सामना करने पर वे अनेक विकल्प चुन सकते हैं। वे भी सक्षम पाठकों की तरह ही—

- वे इस अपेक्षा में पढ़ना जारी रख सकते हैं कि आगे आने वाले हिस्से शायद उन्हें कुछ और जानकारी उपलब्ध कराएँगे।
- वे एक सार्थक शब्द को तब तक स्थापित करने की कोशिश कर सकते हैं, जब तक कि कोई और जानकारी उसे बदलने को न कहे।
- वे यह देखने के लिए पुनर्पठन करने की कोशिश कर सकते हैं कि कुछ ऐसा न छूट गया हो, जो अर्थ-निर्माण में मदद कर सकता हो।
- वे तत्काल कोई निर्णय न लेने का फैसला कर आगे पढ़ते रहें और यदि महत्वपूर्ण हो तो बाद में इस अपरिचित अंश की ओर लौट सकते हैं।

दूसरे शब्दों में, हमें विद्यार्थियों को अनुमान लगाने, पुष्टि करने तथा एकीकरण करने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए।

अपरिचित स्थिति में विद्यार्थियों को अर्थपूर्ण प्रतिस्थापन सिखाने के लिए समानार्थक प्रतिस्थापन (Synonym substitution) नामक गतिविधि विशेष रूप से उपयोगी हो सकती है— गुडमैन एवं बर्क, 1980। इस गतिविधि में पाठकों को किसी भी अपरिचित अंश को सार्थक अंश से बदलने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। इसमें संदर्भ से अर्थ बनाने पर बल दिया जाता है।

विद्यार्थियों को अर्थविज्ञान (Semantic) और वाक्य-विन्यास (Syntactic) को एकीकृत कर एक यथोचित विकल्प देने के लिए बाध्य किया जाता है। यह गतिविधि दर्शाती है कि विद्यार्थियों की गैर-दृश्यात्मक जानकारी, पाठ की व्याख्या करने में प्रयोग की जा सकती है। यह भाषा के बृहद खंडों पर कार्य करने के लिए भी प्रोत्साहित करती है। यहाँ मुद्रित सामग्री पर निर्भर रहने के बजाय अर्थ पर अपना ध्यान केंद्रित करने में विद्यार्थियों की मदद की जाती है।

यह गतिविधि छोटे समूहों के साथ अधिक प्रभावी ढंग से की जाती है। सबसे पहले प्रत्येक विद्यार्थी को मौन पठन के लिए कहा जाता है। फिर प्रत्येक समूह पाठ को एक साथ पढ़ते हैं। उन्हें प्रत्येक रेखांकित शब्द के लिए कम-से-कम दो विकल्प लिखने के लिए कहा जाता है और उन पर बाद में चर्चा की जाती है। विद्यार्थियों द्वारा पाठ की समझ बनाने के दौरान अर्थ-निर्माण की चर्चा इस गतिविधि का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष है, क्योंकि यहाँ विद्यार्थी पाठ की व्याख्या करने का प्रयास करते हैं। यह परिचर्चा उन्हें यह समझने के योग्य बनाती है कि अर्थ संप्रेषण के कई तरीके हो सकते हैं। जिन विद्यार्थियों को पढ़ने में विशेष दिक्कतें आती हैं, उनके लिए किसी परिचित कहानी या परी कथा का अंश देना उपयोगी रहता है। अधिक प्रवीण पाठकों के लिए किसी पाठ्यपुस्तक से उचित अंश लिया जा सकता है। चलिए, इस गद्यांश को देखते हैं—

*The sea is our ecosystem of last resort. Destroy or seriously **impair** the oceans and we obliterate not only the diverse and bountiful life harboured there, but, **ultimately**, ourselves as well. A dead ocean portends a dead earth. Most marine experts are **profoundly** disturbed about this possibility. For millennia, man*

*believed that the sea was a bottomless pit into which his offal could be dumped endlessly because the oceans recycled the products of life on earth with ease. However, everytime we put something in or take something out, it has **an impact**. Despite its vast self-healing ability, scientists are learning how **vulnerable** the sea really is. (adapted from fisher, 1977).*

अब हम शब्दों को बदलने का प्रयास करते हैं—

*The sea is our ecosystem of last resort. Destroy or seriously **impair** (spoil, damage, injure) the oceans and we **obliterate** (wipe out, exterminate, destroy) not only the diverse and bountiful life **harboured** (which lives, which is sheltered or protected) there but **ultimately** (finally, in the end, eventually), ourselves as well. A dead ocean portends (means, threatens, fore shadows) a dead earth. Most marine experts are profoundly disturbed about this possibility.*

*For millennia, man believed that the sea was a bottomless pit into which his **offal** (garbage, waste, rubbish) could be dumped endlessly because the oceans recycled the products of life on earth with ease. However, everytime we put something in or take something out, it has an **impact** (an ability), scientists are learning few **vulnerable** (fragile, defenseless, open to damage) the sea really is.*

ध्यान में रखें कि यह ज़रूरी नहीं है कि बदलाव एक ही शब्द का हो। हमने जो पढ़ा है उसे समझने के प्रयास में हमें कभी-कभी पूरे मुहावरे या वाक्य को पुनर्व्यवस्थित करने की ज़रूरत पड़ती है। यह क्रिया पाठ में किसी अपरिचित अंश को परिचित अंश से बदलने को वैधता प्रदान करती है। इससे विद्यार्थियों को अपरिचित शब्दों के प्रति उनके डर पर काबू पाने में सहायता मिलती है।

एक और गतिविधि है, जिसका उद्देश्य भी इसी तरह का है कि विद्यार्थियों को कुछ अपरिचित शब्द, वाक्य, अनुच्छेद, यहाँ तक कि पूरे पाठ को प्रभावी ढंग से समझने, व्यवस्थित करने में सहायता मिल सके। (डोरोथी वॉत्सन द्वारा विकसित '*Reader Selected Miscues*', मिसौरी विश्वविद्यालय)। यह गतिविधि 'विद्यार्थियों' को पाठक के रूप में अपरिचित वस्तुओं से सामना होने पर, उन्हें अनेक विकल्पों के उपलब्ध होने के बारे में जागरूक कराती है।

विद्यार्थियों को एक अनुच्छेद देकर उसे मौन रूप से पढ़ने को कहा जाता है। ऐसा करते समय उन अंशों को रेखांकित करने को कहा जाता है, जो उन्हें समझ में न आ रहे हों या जिन पर उनके मन में सवाल हों। पढ़ने के उपरांत वे एक-एक कर अपने रेखांकित भाग पर चर्चा करते हैं। रेखांकित अंशों में क्या महत्वपूर्ण है और क्या नहीं, क्या उनकी समझ को प्रभावित करता है एवं क्या नहीं? उस पर विचार करने के लिए उन्हें प्रोत्साहित किया जाता है। इस चर्चा के दौरान विद्यार्थियों को इस बात के लिए भी प्रोत्साहित किया जाता है कि वे स्पष्टीकरण के लिए पुनर्पाठ करें। इस गतिविधि के लिए तथ्यात्मक या काल्पनिक पाठ्य-सामग्री का उपयोग किया जा सकता है।

यह गतिविधि दर्शाती है कि पढ़ने में अर्थ-निर्माण निहित है। सामाजिक आदान-प्रदान से विद्यार्थियों को यह जानने में सहायता मिलती है कि पढ़ने से सभी लोग एक जैसा अर्थ नहीं निकालते हैं और उनकी व्याख्या उनके पूर्वज्ञान से निर्धारित होती है। यह चर्चा आम सहमति बनने और अस्पष्ट भाग के सामूहिक रूप से अर्थ-निर्मित करने के अवसर देती है। गतिविधि यह भी बताती है कि समझने के लिए पृष्ठ पर लिखे हर शब्द को पहचानना ज़रूरी नहीं है। यह विद्यार्थियों को यह भी बताती है कि किसी अपरिचित अंश का अर्थ, संपूर्ण को समझ लेने पर निर्मित कर सकते हैं। पाठकों द्वारा चुने गए अपसंकेत '*Reader Selected Miscues*' की गतिविधि न समझने '*Not understanding*' को वैधता प्रदान करती है। यह अपरिचित को समझने के लिए समझे हुए का प्रयोग करने की इच्छा विकसित करने में सहायता करती है।

हमारा सरोकार सिर्फ विद्यार्थियों को अपरिचित शब्दों की रुकावटों से निकालना ही नहीं है, बल्कि जिन जटिल विचारों और संबंधों के बारे में वे पढ़ रहे हैं, उन्हें एकीकृत करने में मदद करना भी है। इंडियन यूनिवर्सिटी के जेरोम हर्स्ट (Jerome Harste) द्वारा विकसित, कुछ कहो '*Say Something*' गतिविधि विद्यार्थियों को उनके ज्ञान और पाठ में दी जानकारी के बीच का संबंध ढूँढ़ने में सहायता करती है। इस गतिविधि में विद्यार्थी

अपने साथी चुनते हैं। प्रत्येक विद्यार्थी के पास पाठ्य-सामग्री की एक प्रति होती है। पढ़ने से पहले विद्यार्थी यह तय कर लेते हैं कि वे कैसे पढ़ेंगे— मौखिक, बारी-बारी से, एक साथ या मौन और वे कितना पढ़कर रुकेंगे और प्रतिक्रिया देंगे, इसके बाद विद्यार्थी पढ़ते हैं और पूर्वनिर्धारित स्थान पर 'कुछ कहने' के लिए रुकते हैं। यह 'कुछ' उनके सवाल हो सकते हैं जिन पर वे बातचीत कर सकते हैं, पढ़े हुए पर प्रतिक्रिया हो सकती है या अन्य स्रोतों से प्राप्त ऐसी जानकारी हो सकती है जो पढ़े हुए का समर्थन या उसका प्रतिवाद करे। पढ़कर चर्चा कर लेने के बाद अन्य विद्यार्थी जोड़ों के साथ अपनी अंतर्दृष्टि और व्याख्याओं का आदान-प्रदान कर सकते हैं।

कुछ कहो '*Say Something*' विद्यार्थियों को एक अंश में दी गई सूचना को अपने पूर्वज्ञान से जोड़ने के लिए पढ़ने का अवसर देती है। पढ़ते समय चर्चा, विद्यार्थियों को यह समझने का अवसर प्रदान करती है कि दूसरे विद्यार्थी, लिखित भाषा का क्या अर्थ निकालते हैं। ज्ञान की यह साझेदारी समझ के विकास में सहायक होती है।

कोलंबिया, मिसौरी विश्वविद्यालय की एक शिक्षक, कैरोल गिलिस (Carol Gillis) द्वारा विकसित एक अन्य गतिविधि भी इसी उद्देश्य को पूरा करती है— अनुमान लगाओ, पढ़ो, प्रतिक्रिया दो, सवाल पूछो (Estimate, Read, Respond, Question)। इस गतिविधि में विद्यार्थी चयनित सामग्री को सरसरी नज़र से देखने से शुरुआत कर अनुमान लगाते हैं कि वे कुछ थोड़ी-बहुत समझ के साथ कितना पढ़ सकेंगे। इसके पीछे कारण यह है कि विद्यार्थियों को यह देखने दें कि अक्सर वे जितना अनुमान लगाते हैं, उससे कहीं ज्यादा समझते हैं। इसके बाद वे चयनित सामग्री पढ़ते हैं। विद्यार्थी यह तय कर सकते हैं कि वे स्वतंत्र रूप से पढ़ेंगे, जोड़े बनाकर पढ़ेंगे, मौखिक या मौन पठन करेंगे, चर्चा के लिए रुकेंगे या सीधे पूरा पढ़ेंगे। अब वे पाठ के विषय में उनके विचार से उन्होंने क्या सीखा इस पर प्रतिक्रिया व्यक्त कर दोहराते और चर्चा करते हैं।

इस बिंदु पर विद्यार्थी सामग्री के किसी पक्ष से संबंधित एक सामान्य प्रश्न लिखते हैं, जिसमें उनकी रुचि होती है या जहाँ उन्हें लगता है कि अर्थ अस्पष्ट है। वे साथी से प्रश्नों का आदान-प्रदान करते हैं और प्रश्नों के मौखिक या लिखित उत्तर देते हैं। एक बार फिर यह गतिविधि विद्यार्थियों को, जो वे जानते हैं और जो उन्होंने उस पाठ विशेष से सीखा, इसके बीच का संबंध समझने में सहायता करती है।

इन सारी गतिविधियों के द्वारा मैंने जो कहना चाहा, उसमें सामान्य रूप से 'समझ' केंद्र में है। इस संदर्भ में यह महत्वपूर्ण है कि हम यह सवाल उठाएँ, जिसका संबंध अनेक

शिक्षकों से है। क्या यह ज़रूरी नहीं है कि विद्यार्थी सही-सही पढ़ने लायक बनें? ज्यादातर शिक्षक इसका आशय विद्यार्थियों की इस योग्यता को मानते हैं कि पृष्ठ पर जो कुछ है, वे उसे सही-सही दोहरा सकें। इसका उत्तर यह है कि कोई लेख क्या कहना चाहता है कि इसकी व्याख्या लोगों तक पहुँचने के लिए है, मुद्रित सामग्री को ध्यान से देखने की नहीं, अपितु लिखित भाषा के गैर-दृश्यात्मक सूचना के संपादन की आवश्यकता है।

प्रत्येक गतिविधि में इस बात पर बल दिया है कि पढ़ना एक व्याख्यापरक प्रक्रिया है। जैसे ही विद्यार्थी निरंतर पढ़ने वाला पाठक बनता है, वह यह ज़रूरी सवाल पूछने का जोखिम उठाना सीखता है कि 'क्या इसका मेरे लिए कुछ अर्थ है?' वह सही शब्द की कम से कम परवाह करने और सृजनात्मक अर्थ की ज़्यादा से ज़्यादा परवाह करना सीखता है। वह मुद्रित सूचनाओं पर निर्भर नहीं रहना चाहता और इसे सूचना का एकमात्र स्रोत नहीं मानता। इसकी बजाय वह भाषा और दुनिया की अपनी जानकारी के आधार पर पाठ्य-सामग्री को परखता है। संबंधित सूचना, चाहे उसकी पुष्टि हो या न हो— वह उसी के आधार पर अर्थ का निर्माण करता है। वह व्याख्या करने और अर्थ पूरा करने का काम करते हैं। सामाजिक संवाद, जो प्रत्येक गतिविधि का अविभाज्य पक्ष है, व्याख्याओं की तुलना का साधन उपलब्ध कराता है और पाठ से भी जोड़ता है। हमें यह समझने की ज़रूरत है कि लेखक का आशय, आपसी आदान-प्रदान और व्याख्याओं की तुलना से पता चलता है।

एक शिक्षक के नाते हमें ध्यान रखना चाहिए कि ये विद्यार्थी ही हैं, जिन्हें खुद अर्थ का निर्माण करना है। एक समान अनुच्छेद को पढ़ने वाले दो अलग-अलग व्यक्ति कभी एक जैसी व्याख्या पर नहीं पहुँच सकते। हमारी व्याख्याएँ हमारे पूर्व ज्ञान से प्रभावित होती हैं और इसीलिए एक-दूसरे से भिन्न होती हैं। हमारी भूमिका अपने विद्यार्थियों पर अपनी व्याख्याएँ लादना नहीं, अपितु उन्हें अपनी अवधारणाओं के निर्माण में सहायता करना है। यदि हम चाहते हैं कि हमारे विद्यार्थी, प्रवाह के साथ पढ़ने वाले पाठक बनें तो हमें उन्हें अपरिचित शब्दों और संकल्पनाओं को जानने के विभिन्न तरीके अपनाने के लिए प्रोत्साहित करना होगा। हम उनकी मदद इस प्रकार करें, ताकि वे संदर्भ, संकेतों (वाक्यगत तथा वाक्य विन्यासगत) के प्रति अधिक से अधिक सचेत रहें और एक तदर्थ आशय का निर्माण कर सकें। ज़रूरी यह भी है कि हम विद्यार्थियों से पाठ के बारे में विस्तार से पूछने से पहले उसके संदर्भ में सामान्य समझ बनाने के लिए निर्देशित करें।

अगर हम विशिष्ट बातों पर बल देते हैं तो बहुत संभव है कि वे शब्दार्थ जानने तक ही सीमित रह जाएँगे। हमें इस तरह की गतिविधियों का आयोजन करना चाहिए, जिसमें विद्यार्थी गलती होने पर भी, बिना संकोच के पूछ सकें।

नीचे दी गई भाषा-कहानी, कहानी का एक ऐसा उदाहरण है, जिसमें हम यह देख सकते हैं कि हमें पढ़ने के बारे में विद्यार्थियों की समझ के विकास के लिए उनकी किस प्रकार सहायता करनी चाहिए। मैं एक बार पाँचवीं कक्षा के एक विद्यार्थी के साथ पढ़ रहा था, जिसे स्कूल में किसी तरह की परेशानी थी। मैंने उसे पढ़ने के लिए एक अनुच्छेद दिया, जिसमें कई शब्द छोड़ दिए गए थे। उसने अनुच्छेद लिया, उसे देखा और कहा— ‘मैं इसे नहीं पढ़ सकता, इसमें कुछ शब्द छोड़ दिए गए हैं।’ और मैंने सलाह दी कि किसी तरह कोशिश करो। उसने मुझे इस तरह देखा, जैसे मैं कोई मूर्ख हूँ। इसके बाद उसने पढ़ना शुरू किया और जब उसने पढ़ना समाप्त किया, तब मैंने पूछा, ‘बताओ तुमने यह कैसे किया?’ अपने चेहरे पर आश्चर्य के भाव के साथ उसने कहा—‘ये शब्द मेरे दिमाग से अपने-आप निकल आए।’

संदर्भ

- कोलर्स, पी. 1969. *रीडिंग इज ओनली इन्सीडेंटली विजुअल*. इन गुडमैन, के. एस. एंड जे.टी. फ्लेमिंग (एडि.) *साइको लिंग्विस्टिक एंड द टीचिंग ऑफ़ रीडिंग*. इंटरनेशनल रीडिंग एसोसिएसन. नेवार्क (डेल.)
- गुडमैन, वाई. एंड सी. बर्क. 1980. *रीडिंग स्ट्रेटजीस—फ़ोकस आन कम्प्रिहेन्सन*. हॉल्ट राइनहार्ट एंड विंस्टन, न्यूयार्क.
- टेट, जीई. एंड वी. मोल्ड. 1973. *वन डोमिनियन*. सेकेंड एडि. मैकग्राहिल रियर्सन लिमिटेड. टोरन्टो.
- पिस्टन, डब्ल्यू. हारमोनी. 1962. थर्ड एडि. डब्ल्यू. डब्ल्यू. नॉर्टन एंड को. न्यूयार्क.
- फ़िशर, ए. 1977. *द लिविंग सी*. इंटरनेशनल वाइल्ड लाइफ़. 7 (3). पृष्ठ 4–10.
- स्मिथ, एफ़. 1971. *अंडरस्टैंडिंग रीडिंग*. होल्ड राइनहार्ट एंड विंस्टन. न्यूयार्क.

6. पढ़ना कैसे सिखाया जाए

—जी. ब्रायन थॉम्पसन*

शिक्षण के दो मुख्य पहलू हैं— प्रेरणात्मक एवं सूचनात्मक। प्रेरणात्मक पहलू का संबंध सीखने वाले की निश्चितता और सीखने के प्रति उसकी लगन को बढ़ावा देने से है। सूचनात्मक पहलू का संबंध उसके ज्ञान और कौशल को विस्तार देने से है। शिक्षण के संबंध में जो समीक्षा यहाँ प्रस्तुत की गई है, उसका संबंध शिक्षण के दूसरे पहलू से है, जो चुनिंदा आधुनिक शोधों पर ऐतिहासिक और अंतर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य को प्रस्तुत करती है। इस लेख में स्कूल के प्रारंभिक वर्षों में बच्चों की स्वाभाविक प्रगति पर बल देने के साथ-साथ बच्चों को पढ़ना सीखने में आने वाली समस्याओं का भी जिक्र किया गया है।

प्रारंभिक विकास

उन्नीसवीं सदी से लगभग तीन हजार वर्ष पहले से वर्णमाला पद्धति 'पढ़ना' सिखाने की मूलभूत पद्धति रही है। इस पद्धति में बच्चों को सबसे पहले वर्णमाला के अलग-अलग अक्षरों की पहचान कराई जाती थी। इसके बाद दो अक्षर वाले शब्दांश, जैसे— 'ab, eb, ib, ob, ub, ba, be, bi, bo, bu, ac, ...' आदि सिखाए जाते थे। इस पद्धति में इन अक्षरों को एक-एक करके मौखिक रूप से नाम देना और फिर शब्दांश के रूप में उच्चारण करना सिखाया जाता था। इसी प्रक्रिया के सहारे बच्चा पहले छोटे शब्द और फिर छोटे-छोटे गद्य पढ़ने लगता था, जो उस समय के शैक्षणिक उद्देश्यों में अपने महत्त्व के आधार पर चुने जाते थे, उदाहरण के लिए— लॉर्ड प्रेयर या क्रीडा। बच्चे अगर कोई शब्द नहीं जानते थे, तो उसके हिज्जे करते थे और बाद में पूरे शब्द पढ़ते थे (डेविस, 1973)।

उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध में वर्णमाला पद्धति (Alphabetic Method) का महत्त्व कम होने लगा— स्मिथ, 1965। न्यूजीलैंड, जहाँ साक्षरता बहुत कम थी, वहाँ सदी के अंतिम दशक में शिक्षण-पद्धति पर एक पुस्तक प्रकाशित की गई (फर्नी, 1895)। इस पुस्तक में वर्णमाला पद्धति के तीन विकल्प प्रस्तावित किए गए, पहला विकल्प था—स्वनिक पद्धति (Phonic method), जिसमें बच्चों को प्रत्येक अक्षर की सबसे सामान्य ध्वनि सिखाई जाती थी, उदाहरणार्थ— ब (B के लिए) 'Buh' का उच्चारण। यदि बच्चों को कोई मुद्रित शब्द मालूम नहीं होता था, तो उन्हें सिखाया जाता था, कि पहले प्रत्येक

* सीनियर रिसर्च एसोसिएट, स्कूल ऑफ़ एजुकेशन स्टडीज़ विक्टोरिया यूनिवर्सिटी ऑफ़ विलिंगटन, न्यूजीलैंड

वर्ण की ध्वनि का सिलसिलेवार उच्चारण करें और उसके बाद अनुमान के आधार पर ध्वनियों को जोड़कर ऐसा शब्द बनाएँ जो पहचान में आ सके। दूसरा विकल्प था— ‘देखो और बोलो’ (Look and Say)। इस पद्धति में बच्चों को सिखाया जाता था कि पूरे एक शब्द को एक इकाई के रूप में देखें तथा पढ़ें और इसके अलग-अलग अक्षरों पर ध्यान न दें। फ़र्नी ने जिस तीसरे विकल्प को शिक्षकों द्वारा अपनाए जाने पर बल दिया था, वह तीनों पद्धतियों के ‘सर्वोत्तम बिंदुओं’ को जोड़कर बना तरीका था। इस वैकल्पिक पद्धति में पहले वर्ण लिखाए जाते थे, फिर ‘देखो और बोलो’ पद्धति को अपनाया जाता था और इसके बाद स्वनिक पद्धति (Phonic Method) को अपनाते हुए जहाँ ज़रूरत होती थी, वर्णों की ध्वनियों का भी ज्ञान कराया जाता था (फ़र्नी, 1895)।

उन्नीसवीं सदी के बाद से पढ़ना सीखने के प्रति झुकाव कभी विश्लेषणात्मक स्वनिक पद्धति (Phonic Method) तो कभी लचीले ‘देखो और बोलो’ (Look and Say) पद्धति के बीच रहा। 16वीं सदी में आइकलसेमर (Ickelsamer) द्वारा जर्मन भाषा की पढ़ाई के लिए स्वनिक पद्धति और हार्ट द्वारा अंग्रेज़ी भाषा की पढ़ाई के लिए वर्णमाला पद्धति की तुलना में कहीं अधिक स्वाभाविक पद्धति के रूप में प्रतिपादित किया गया। फिर भी स्वनिक पद्धति को 19वीं सदी से पहले अधिक लोकप्रियता नहीं मिली। यही हाल ‘देखो और बोलो’ पद्धति का हुआ, जो जर्मनी में लुबीनस द्वारा 17वीं सदी के शुरू में विकसित की गई और बाद में कोमेनियस द्वारा इस्तेमाल में लाई गई (डेविस, हैडजुक और एलर, 1973–1992) अध्याय 24।

19वीं सदी के अंत में ‘देखो और बोलो’ पद्धति की तुलना में वाक्य-पद्धति को विश्व भर में अधिक स्वीकार किया गया, लेकिन अमेरिका ने ‘देखो और बोलो’ पद्धति की अनुशंसा की। इस पद्धति के पक्ष में तर्क यह था कि भाषा की पहचान पूर्ण इकाइयों के रूप में की जानी चाहिए, जो विचारों को अभिव्यक्त करती हैं, अतः पढ़ना सिखाने की शुरुआत अक्षरों अथवा शब्दों से नहीं, बल्कि वाक्यों की इन पूर्ण इकाइयों के अर्थपूर्ण पठन से की गई (स्मिथ, 1965)।

इस क्षेत्र में किए गए कार्य और प्रमुख योगदान

साक्षरता से जुड़ी गतिविधियों की संबद्धता

उन्नीसवीं सदी की शुरुआत से लेकर लगभग तीन दशकों तक अमेरिका की वाक्य-पद्धति की तुलना में विश्व भर में कहानी कथन पद्धति (Story Method) ज़्यादा लोकप्रिय

रही। बच्चों के 'पढ़ना' सीखने की शुरुआत प्रामाणिक साहित्य की कहानियाँ सुनने से हुआ करती थी। जब तक बच्चा कहानी के मौखिक रूप से परिचित नहीं हो जाता था, उससे लिखित सामग्री पढ़ने की कोशिश नहीं करवाई जाती थी (स्मिथ, 1965)। उसके बाद 1960 और 1970 के दशकों में 'पढ़ना' सीखने की 'भाषा अनुभव प्रणाली' (Language experience Approach) का कई अंग्रेजी भाषी देशों में प्रभाव बना रहा। इस प्रणाली में पठन को बच्चे द्वारा पहले से ही हासिल किए गए भाषा-कौशलों के विस्तार के रूप में देखा गया था। साथ ही इस प्रणाली में अर्थपूर्ण संप्रेषण के रूप में पठन के उद्देश्य पर विशेष बल दिया गया था।

आज की 'समग्र भाषा पद्धति' (whole Language Approach) अंशतः इस भाषा-अनुभव का ही परिणाम है। इस समग्र भाषा-प्रणाली में अर्थपूर्ण संप्रेषण और साक्षरता संबंधी उन गतिविधियों की संपूर्णता और अखंडता पर अधिक बल दिया जाता है, जिसमें बच्चे सक्रिय रूप से भागीदार रहते हैं। पढ़ना, सीखने का आरंभ करने वाले पाठकों सहित सभी पाठकों को प्रामाणिक साहित्य पढ़ने की सलाह दी जाती है— गुडमैन 1980। वास्तव में, आजकल यही पद्धति इंग्लैंड, अमेरिका, कनाडा और न्यूजीलैंड में अलग-अलग स्वरूपों में प्रभावकारी है (हाज़ुक और एलर, 1992)। रूस में एक प्रायोगिक पठन कार्यक्रम विकसित किया गया है, जिसका उद्देश्य साहित्य को कला मानते हुए पाठकों को शिक्षित करना है (हाज़ुक और एलर, 1992, अध्याय 20)। हैरिस, 1993 ने अमेरिकी संदर्भ में पठन-निर्देशों की साहित्य-आधारित पद्धतियों से उत्पन्न हुए मुद्दों की समीक्षा की। इस पद्धति में साहित्य पर इतना बल दिया गया कि इसे 'समग्र साहित्य पद्धति' कहना ज्यादा बेहतर होगा।

स्टाहल और मिलर, 1989 ने अमेरिका के उन अध्ययनों का विश्लेषण किया है, जिनमें भाषा-अनुभवों की पठन उपलब्धियों की और समग्र भाषा कार्यक्रम (Whole Language Programmes) की तुलना 'बेसल रीडर' कार्यक्रम से की गई। 'बेसल रीडर', कार्यक्रम अपेक्षाकृत कम प्रामाणिक और चरणबद्ध पाठ्यसामग्री पर बल देता है। इसमें विश्लेषणात्मक शिक्षण-पद्धति का अधिक इस्तेमाल किया जाता है, जो स्वनिम और संदर्भ रहित शब्दों पर आधारित है।

इस संबंध में एक रोचक निष्कर्ष सामने आया कि इस संदर्भ में की गई गहन शोधों ने इनमें से किसी भी शिक्षण-पद्धति के पक्ष में प्रमाण प्रस्तुत नहीं किए। इन परिणामगत

तुलनाओं में वे मुद्दे, जैसे— पाठकों द्वारा पाठ का स्वयं मूल्यांकन करना और साहित्य के प्रति कला के रूप के प्रतिक्रिया करना आदि शामिल नहीं किए गए।

यहाँ एक प्रमुख मुद्दा यह है कि क्या बच्चे अपने स्कूल के प्रारंभिक वर्षों में इतने सक्षम होते हैं कि वे अपने पठन-अनुभवों के लिए किसी मानदंड को व्यवहार में ला सकें और जाँच की ऐसी प्रक्रिया बना सकें, जो साहित्यिक कृति पर उनकी राय को पुष्ट करने में सहायक हो। क्या वे इस योग्य होते हैं कि अपने पठन-अनुभवों को एक स्पष्ट उद्देश्य का रूप दे सकें और इन्हें अलग-अलग परिप्रेक्ष्य से जोड़ सकें। पिंगेंट (Pinsent) ने पठन-अनुभवों पर बच्चों के विचार संबंधी शोध साहित्य की समीक्षा की। उन्होंने यह समीक्षा विषय-वस्तु, लेखक और अन्य पाठकों के दृष्टिकोण से की। शोध-समीक्षा के परिणाम यह इंगित करते हैं कि दस वर्ष की उम्र से बच्चों को साहित्यिक मूल्यांकन करने की शुरुआत करवाई जा सकती है। इस उम्र से इस प्रकार का शिक्षण उनके लिए लाभदायक होगा, जो साहित्य के कला रूप के प्रति उनकी आलोचनात्मक प्रतिक्रिया के विकास में सहायक हो सके।

शब्द पहचान

बीसवीं सदी में लगातार विश्लेषणात्मक और वैश्विक पद्धतियों की विशेषताओं के बारे में यह बहस जारी रही कि बच्चों को लिखित शब्दों की पहचान सिखाने का तरीका क्या हो? यह एक-दूसरे से अति भिन्न वर्ण-विन्यासों (Alphabetic Orthographies) वाली भाषाओं, जैसे कि अत्यधिक व्यवस्थित 'सर्बो-क्रोएशियन' और 'हंगुल' (दक्षिण कोरिया की), काफ़ी हद तक नियमित जर्मन और रूसी (डाउनिंग, 1988) अध्याय 2, वर्ण-विन्यास तथा अंग्रेज़ी वर्ण-विन्यास, जिसमें कुछ गूढ़ वाक्य-विन्यास संबंध थे, आदि के लिए चर्चा का मुद्दा बना हुआ है। चीनी भाषा के पठन-शिक्षण में भी यह अहम मुद्दा है कि वह 'पढ़ना' सिखाने के लिए उस विश्लेषणपरक तरीके का इस्तेमाल करे, जो एक तरह के उच्चारण अथवा और एक तरह की दृश्य-संरचना वाली लिपियों/अक्षरों को मिलाते हुए चलता है अथवा दूसरी अधिक व्यापक पद्धति अपनाए, जिसमें अक्षरों की पहचान एक अर्थपूर्ण संदर्भ में छोटी-छोटी कहानियों के माध्यम से करवाई जाती है (हाजुक और एलर, 1992) अध्याय 4।

वैकल्पिक ध्वनिपरक पद्धतियों को इसलिए लागू किया गया, ताकि बच्चों को ऐसे तरीके बताए जा सकें, जिनमें वे अपरिचित लिखित शब्दों को पहचानना सीख सकें। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में 1920 तक ध्वनि-अक्षर संबंध को अनेक बार शब्दों के सामान्य

अक्षर-ध्वनि का निदर्शन करते हुए सिखाया जाता रहा है। उदाहरण के लिए, 'Sun', 'Saw', 'Sat' आदि मुद्रित शब्द दिखाकर शिक्षक द्वारा प्रत्येक शब्द का उच्चारण पहली ध्वनि को खींचते हुए किया गया, जो तीनों शब्दों में समान है। एक-एक स्वनिम (phoneme) से बड़ी वर्तनी वाली संरचना का भी इस्तेमाल किया गया, जैसे— शिक्षक ने पहले 'at' ध्वनि-संकेत से परिचित करवाया और फिर बताया कि कैसे उसमें अन्य अक्षर जोड़कर 'Sat', 'Bat', 'Fat' आदि शब्द बनाए जाते हैं। इस प्रकार की विश्लेषणपरक स्वनिक (Phonic) की परख गेट्स, 1928 ने अपने अध्ययनों में की।

सीखने की गति को प्रभावित करने वाली स्वनिक पद्धति शिक्षण-कार्यक्रमों की तुलना समग्र भाषा-प्रणाली कार्यक्रमों से की जाती रही है। जिनमें इस तरह की बातों पर, थोड़ा या बल नहीं दिया जाता। उदाहरण के लिए (फूरमन, फ्रांसिस, नोवी और लिबरमेन, 1991)। दुर्भाग्य से ऐसे अध्ययनों में विभिन्न पद्धतियों के बीच के अनेक वैकल्पिक बिंदुओं को शामिल नहीं किया गया, जैसे— शब्द-भंडार की विभिन्नता, उनके सिखाए जाने की गति, शिक्षकों पर प्रभाव, शिक्षण-समय, शिक्षण आरंभ करते समय विद्यार्थियों का स्तर।

हाल ही के कुछ अध्ययन अब उपलब्धि के परिणामगत स्तरों पर उतना ध्यान न देकर इस बात की जाँच कर रहे हैं कि जब पाठक एक ही स्तर की पठन-उपलब्धि हासिल कर चुके होते हैं, तब क्या विभिन्न शिक्षण-पद्धतियों के बीच प्रक्रियाओं अथवा सीखने के तरीकों में अंतर आता है (जॉन्सन, थॉम्पसन, फ़्लैचर-फ़्लिन तथा हॉलीगन, 1995, अध्याय, 3)। उदाहरण के लिए— कानैली, जॉन्सटन और थाम्पसन ने पाया कि पाँच-छह साल के बच्चे, जिन्हें स्वनिक पद्धति और कहानी सुनाकर मिली-जुली प्रणाली के माध्यम से सिखाया गया था, वे समग्र भाषा कार्यक्रम वाले बच्चों की तुलना में पूरी तरह अपरिचित चीज़ों, नियमित, छद्म शब्दों, जैसे— 'Blum' को ज़्यादा अच्छी तरह से पढ़ पाए, परंतु अनियमित वर्ण-ध्वनि व्यवहार वाले सामान्य शब्दों, जैसे— 'Sword' को कम कुशलता से पढ़ पाए। स्वनिक पद्धति के माध्यम से पढ़ाए गए बच्चे समझ के साथ पढ़ने के लिहाज़ से फ़ायदे में रहे। जिसका कारण यह हो सकता है कि पढ़ने की धीमी गति की वजह से वे शब्द की बारीकियों पर अधिक ध्यान दे सके होंगे।

शब्दों की पहचान के लिए समग्र भाषा-प्रणाली (Whole Language-Approach) के पक्षधर आमतौर पर यह सलाह देते हैं कि शिक्षक बच्चों को इस बात के लिए प्रेरित करें कि वे पढ़े गए पाठ के संदर्भ से अर्थ का अनुमान लगाएँ। शोधों से काफ़ी हद तक यह सामने आया है कि वस्तुतः इसका उलटा होता है और परिचित शब्दों की पहचान करने

में पाठकों द्वारा संदर्भ को कम ही महत्व दिया जाता है (परफ्रेड्री, 1995)। अपरिचित नए शब्दों को पढ़ने में विशेष तौर पर शुरुआती दौर के पाठकों को संदर्भ से कुछ लाभदायक सूचना तो अवश्य मिलती है (निकल्सन, 1991)। परंतु अक्सर इसके साथ-साथ पाठक को अक्षर-ध्वनि द्वारा प्राप्त सूचना का भी इस्तेमाल करना पड़ता है। यह सिद्ध हो चुका है कि न्यूजीलैंड में समग्र भाषा-पद्धति के माध्यम से पढ़ाए गए बच्चों के साथ ऐसा ही हुआ है (टंमर और चैपमैन, 1997)। पठन-कौशल के विकास के दौरान बच्चे जिन प्रक्रियाओं से गुजरकर शब्दों को पहचानना सीखते हैं, उनके बारे में संचित प्रमाणों से। पठन-शिक्षण संबंधी अनुशंसाएँ लाभकारी हो सकती हैं (एहरी 1994)।

वर्णमाला सिद्धांत

पढ़ने की शुरुआत के लिए 16वीं सदी में जर्मनी में आइकलसेमर (Ickelsamer) ने शिक्षकों से आग्रह किया कि वे यह देखें कि इंसान ने सबसे पहले 'पढ़ना' कैसे सीखा होगा और यह भी देखें कि अक्षर ज्ञान देने से पहले बच्चों को यह सिखाएँ कि कैसे उच्चारित शब्दों को दिमाग में स्वनिम इकाइयों (Constituent phoneme) में विभाजित करके देखा जा सकता है (डेविस, 1973)। पिछली सदी के मध्य में रूस में उशिन्स्की (Ushinsky) ने 'हिस्टोरिक मेथड' की अनुशंसा की। यह तरीका इस बात पर आधारित था कि वर्णक्रम व्यवस्था का तथाकथित आविष्कार कैसे हुआ। डाउनिंग और बर्नबे, 1988 की समीक्षा भी देखें। चूँकि, यह आविष्कार उस अमूर्त ध्वन्यांश की खोज पर निर्भर करता है, जो किसी भाषा के बोल-चाल के शब्दों का हिस्सा होते हैं, अतः बोले जाने वाले शब्दों के इस पहलू को सीखना बच्चे के 'पढ़ना' सीखने की ओर पहला कदम होता है, उदाहरण के लिए— बच्चों को स्वनिम की पहचान एक विशेष आरंभिक ध्वनि पर आधारित मौखिक शब्दों को चुनकर करवाई जाए, जैसे— 'k' से शुरू होने वाले कई मौखिक शब्दों का चयन करें और फिर प्रस्तुत मौखिक शब्दों के पहले स्वनिम और आखिरी स्वनिम की पहचान करें। यह 'हिस्टोरिक मेथड' व्यवहार में संतोषजनक रूप से लागू नहीं हो पाया, हालाँकि रूस में 1960 और 1970 के दशकों में एल्कोनिन द्वारा प्रतिपादित पठन-अनुदेशन, यानी पढ़ने से संबंधित हिदायतें देने के कुछ ऐसे ही नए तरीके विकसित किए गए (डाउनिंग, 1973, 1988) अध्याय 22।

वर्णमाला सिद्धांत का ज्ञान कि शब्दों में अक्षर व्यवस्थित रूप से शब्दों की ध्वनियों में आते हैं— यह अक्षर ध्वनि ज्ञान से बढ़कर है। उदाहरण के लिए, जैसे बच्चे यह सीख

सकते हैं कि 'Buh' अक्षर, ब, 'B' के लिए एक अनुकूल ध्वन्यांकन है। फिर भी यदि वे 'Job' और 'Crab' जैसे शब्दों में विद्यमान समान स्वनिम को नहीं पहचान पाते तो यह नहीं माना जा सकेगा कि उन्होंने वर्णमालीय सिद्धांत सीख लिया है। सामान्य प्रगति के लिए यदि 'पढ़ना' सीखने की शुरुआत में इस सिद्धांत का ज्ञान आवश्यक माना जाता है तो शिक्षक को यह सुनिश्चित करना होगा कि स्वनिम की पहचान बच्चों को शिक्षण के शुरुआत में ही करवाई जाए। ऐसे ज्ञान के लिए क्या तब तक इंतजार किया जाए, जब तक बच्चा अपने आप ऐसा करना नहीं सीख जाता या फिर शिक्षण में स्पष्ट तौर पर इसका अभ्यास करवाया जाए?

ऑस्ट्रेलिया में बायर्न और फ़ील्डिंग बार्न्सले, 1995 ने बताया कि स्वनिम स्वरूपों का ज्ञान स्कूली शिक्षण शुरू होने से पहले चार साल की उम्र से शुरू कर बारह हफ्ते तक करवाया जा सकता है, हालाँकि दो-तीन वर्षों की स्कूली शिक्षा के बाद के परीक्षण में पाया गया कि शब्दों को अक्षर की ध्वनि से जोड़कर पढ़ने वाले इस समूह का प्रदर्शन दूसरे नियंत्रित समूह के मुकाबले बेहतर नहीं था। (नियमित हिज्जों वाले निरर्थक शब्दों को यह समूह ज़रूर बेहतर पढ़ सका)। इसके विपरीत बाल और ब्लैचमैन, 1991 ने सिद्ध किया कि स्वनिम पहचान के साथ अक्षरों की ध्वनि का प्रशिक्षण सात हफ्तों तक दिया गया, तो पाँच वर्ष के बच्चों को इससे लाभ हुआ और वे नियमित हिज्जों वाले सामान्य शब्दों (अक्षर-ध्वनि शिक्षण के आधार पर रचित) को आसानी से पढ़ सके।

इस अध्ययन में अमेरिका के किंडरगार्डन कार्यक्रम के बच्चों को शामिल किया गया था, जिन्हें व्यवस्थित पठन-निर्देश नहीं दिए गए थे। यह बात संभवतः आश्चर्यजनक है कि यह लाभ उस स्थिति में भी पाया जा सका, जब अपरिचित नए शब्दों की पहचान में बच्चों को वर्णमाला के सिद्धांत का इस्तेमाल करना नहीं सिखाया गया था। हो सकता था कि व्यवहार में लाने की रणनीतियों का शिक्षण, परिणामों में और बेहतरी लाता। टंमर और चैपमैन ने इस 'मेटाकॉग्नेटिव अप्रोच', यानी परासंज्ञानात्मक प्रणाली की व्याख्या की है, जो अपरिचित शब्दों की पहचान में बच्चों के सुनियोजित ज्ञान से संबंध रखती है।

समझकर पढ़ना

बच्चों के अधिकांश कौशल जिन्हें समझ के साथ पढ़ने (Reading Comprehension) के अंतर्गत रखा जाता है, इसका भी पठन के साथ कोई सीधा संबंध नहीं देखा गया। (थॉम्पसन, टंमर और निकल्सन, 1993) यहाँ प्रमुख मुद्दा यह है कि सुस्पष्ट शिक्षण द्वारा

मुद्रित पाठ को समझने के कौशल को बढ़ावा दिया जा सकता है अथवा नहीं। कई देशों में यह बहस का मुद्दा रहा है। उदाहरण के लिए, जापान में समझ के साथ पढ़ने की कई प्रणालियाँ अधिक सुस्पष्ट और विश्लेषणात्मक रही हैं, जबकि कुछ वैश्विक रूप से व्यापक रही हैं (डाउनिंग, 1973)। वर्ष 1980 से अमेरिका में समझ के साथ पढ़ना सिखाने के उस नमूने में अधिक रुचि ली जाती रही, जिनमें बच्चों को कई रणनीतियों से परिचित करवाया जाता है और यह बताया जाता है कि उन विधियों का कब और क्यों इस्तेमाल किया जाए (डोल, डफी, टोहलर और पियर्सन तथा फ्रीलिंग, 1991)। अमेरिका में कई शोधकर्ताओं ने यह सुनिश्चित करने का प्रयास किया है कि क्या ऐसे तरीके वास्तव में सिखाए भी जा सकते हैं और क्या विद्यार्थी उसी विषय-क्षेत्र की अपरिचित सामग्री पर उन तरीकों को सफलतापूर्वक लागू भी कर सकता है? कुछ ही अध्ययन इस प्रकार के हैं, जो प्रणाली-विज्ञान के सघन मानदंडों के समीप हों (प्रेसली आदि सब, 1989) रैपनेल और वोन्नाकॉट, 1985; ने पाया कि नौ वर्षीय बच्चों को यह सिखाया जा सकता है कि समझ को जाँचने वाले प्रश्नों के लिए सूचना, पाठ में भी सुस्पष्ट हो सकती है। वह पाठ के अलग-अलग भागों से प्राप्त सूचना के आधार पर अनुमानित भी की जा सकती है और यह भी हो सकता है कि इसके लिए पाठक को अपने पूर्वज्ञान का सहारा लेना पड़े। ड्यूइज, कार और पेटबर्ग, 1987; ने पाया कि दस वर्षीय बच्चों को यह सिखाया जा सकता है कि पाठगत सूचना को अपने ज्ञान से कैसे समन्वित करें और (कुछ हद तक यह भी कि) पाठ की संरचना पर कैसे ध्यान दें?

समझ के साथ पढ़ना सीखने की इस प्रणाली को लेकर कई शंकाएँ और आपत्तियाँ हैं। एक तो यह कि यदि बच्चों में पढ़ने के प्रति रुझान है और वे अपनी समझ के ऊपर के पाठ को नहीं पढ़ रहे हैं तो इस प्रकार के तरीकों के प्रशिक्षण की कोई आवश्यकता ही नहीं रह जाती (कार्वर, 1987)। दूसरी आपत्ति यह है कि विभिन्न तरीकों का इस्तेमाल कब और कहाँ किया जाए— इस उलझन में पड़कर हो सकता है कि वह (पाठक) पाठ की समझ पर सही तरह ध्यान न दे सकें (पियर्सन और फ्रीलिंग, 1991)। एक और आपत्ति यह है कि ये पद्धतियाँ कक्षा में शिक्षक और विद्यार्थियों के बीच बहुत एकतरफ़ा-सी रही हैं और इनमें दोतरफ़ा शिक्षण अथवा शिक्षकों की विद्यार्थियों के प्रति जवाबदेही आदि का स्थान नहीं रह जाता है। प्रेसली, 1992 और अन्य ने इस खास आपत्ति के समाधान के रूप में एक ऐसी शिक्षण-विधि के बारे में बताया है, जो विचारों के सार मात्र की चिंता तक

सीमित न रहकर पाठकों की अलग-अलग प्रकार की व्याख्याओं और उनकी संवेगात्मक तथा कलात्मक प्रतिक्रियाओं को भी उचित स्थान देती है।

भावी दिशाएँ

अब ऐसा महसूस किया जाने लगा है कि शुरुआती पाठक वर्णक्रम सिद्धांत को कई अलग-अलग तरीकों से ग्रहण और इस्तेमाल कर सकता है। विद्यार्थी, अपरिचित लिखित शब्दों को 'बोलने' के लिए अक्षर-ध्वनि-सिद्धांत को सामान्यतः पढ़ाए गए उदाहरणों के रूप में इस्तेमाल कर सकता है। दूसरा तरीका यह है कि शुरुआती पाठक वर्णमाला सिद्धांत के अपठित उदाहरण अपने आप (स्व-शिक्षण) ही समझ ले या अक्षर-ध्वनि क्रम के संबंध को स्वाभाविक रूप से पठन शब्द भंडार में शामिल करते चले। उदाहरण के लिए 'Sit', 'Cat', 'Not' जैसे शब्दों में अंतिम अक्षर और ध्वनि समान है। 'Ball', 'Fall', 'Wall' इनमें कुछ अक्षर भी समान हैं और ध्वनियाँ भी। अक्षर-ध्वनि नमूनों के इस स्व-अर्जित ज्ञान के सहारे बच्चा नए शब्दों को पहचानना सीख सकता है (थॉम्पसन, कॉटेल और फ़्लैचर-फ़्लिन, 1996; थॉम्पसन और निकल्सन)। वर्णक्रम सिद्धांत के इस्तेमाल का एक तीसरा तरीका भी है। विद्यार्थी मिलते-जुलते शब्दों का सहारा ले सकता है। उदाहरण के लिए, अपरिचित शब्द 'Hump' की पहचान के लिए वह तत्काल 'Jump' शब्द का इस्तेमाल कर सकता है। बच्चे की सादृश्य संकेतकों के इस्तेमाल की क्षमता पर हाल ही के अध्ययन के आधार पर शुरुआती पाठकों को मिलते-जुलते शब्दों या सादृश्यमूलक शब्दों द्वारा शिक्षण देने पर सहमति बनी हुई है। दुर्भाग्य से इसके पक्षधरों ने इस विदित साक्ष्य की उपेक्षा की है कि शुरुआती पढ़ाई के स्तर पर मिलते-जुलते शब्दों द्वारा शिक्षण अक्षर-ध्वनि शिक्षण की तुलना में कम प्रभावी होता है। (सलिवन, ओकाडा और नीड्रमेयर, 1971) शब्द-पहचान में सादृश्यों के प्रभावी और सुविधाजनक इस्तेमाल के लिए बच्चे को पहले अपने पठित-शब्द-ज्ञान से मिलते-जुलते शब्द ढूँढ़ निकालने होंगे। विद्यार्थी का जब तक पठित शब्द ज्ञान भंडार विस्तृत नहीं होगा तब तक सादृश्यता का इस्तेमाल सीमित ही होगा।

स्वनिक शिक्षण (Phonics teaching) बच्चों को वर्णक्रम या वर्णमाला सिद्धांत के कुछ सीमित उदाहरणों की ही जानकारी दे पाता है। अभी तक यह स्पष्ट नहीं हो सका है कि इस प्रकार का शिक्षण बच्चों को पहले न सीखे गए सिद्धांतों के उदाहरणों को अपने आप सीख सकने में कितना उपयोगी सिद्ध हो सकता है। अंग्रेज़ी की जटिल वर्तनी के

संदर्भ में अक्षर-ध्वनि संबंधों के असीमित नमूनों पर एक-एक कर ध्यान देना शिक्षक और विद्यार्थी दोनों के लिए ही समस्याजनक होगा। वैसे तो इनके 'पैटर्न' की जानकारी से जुड़ी 'स्व-शिक्षा' कुछ हद तक स्वाभाविक रूप से प्रत्येक पाठक में पाई ही जाती है। भविष्य में किए जाने वाले अध्ययन शिक्षक के पुनरीक्षण-कार्य को सुनिश्चित करने के लिए किए जाने चाहिए कि विद्यार्थी को कब विश्लेषणपरक शिक्षण दिया जाए या नहीं दिया जाए और किसी विद्यार्थी विशेष के लिए कितना शिक्षण या निर्देश आवश्यक है। इसके अतिरिक्त यह भी सामने आना चाहिए कि इस प्रकार के विश्लेषणपरक शिक्षण के परिणामों को विद्यार्थी पठन संबंधी गतिविधियों में किस प्रकार प्रभावी ढंग से व्यवहार में ला सकते हैं।

संदर्भ

- ऐरी, एल.सी. 1994. डेवलपमेन्ट ऑफ़ द एबिलिटी टू रीड वर्ड्स—अपडेट. इन आर.बी. रडल, एम.आर. रडल एंड एच. सिंगर (एडि.). *थ्योरेटिकल मॉडल्स एंड प्रोसेसेस ऑफ़ रीडिंग (फोर्थ एडिशन)*. पृष्ठ 323–358. इन्टरनेशनल रीडिंग असोसिएशन, नेवार्क, डेलावर
- कार्वर, आर.पी. 1987. *शुड रीडिंग कॉम्प्रिहेन्सन स्किल्स बी टॉट?*. इन जे.ई. रेडैन्स एंड आर.एस. बालड्विन (एडि.). *रिसर्च इन लिटरेसी—मर्जिंग पर्सपेक्टिव्स. थर्ड-सिक्स्टी इयरबुक ऑफ़ द नेशनल रीडिंग कॉन्फ़ेन्स*. पृष्ठ 115–126. नेशनल रीडिंग कॉन्फ़ेन्स, राचेस्टर, न्यूयॉर्क.
- गुडमैन, वाय. एम. 1989. *रूट्स ऑफ़ द होल लैंग्वेज मूवमेन्ट. एलीमेंट्री स्कूल जर्नल*. 90, पृष्ठ 113–127.
- गेट्स, ए.जे. 1928. *न्यू मेथड्स इन प्राइमरी रीडिंग*. ब्यूरो ऑफ़ पब्लिकेशन्स, टीचर्स कॉलेज इन कोलंबिया यूनिवर्सिटी, न्यूयॉर्क.
- जॉन्सटन, आर.एस., जी.बी. थॉम्पसन, सी.एफ. फ्लेचर-फिलन एंड सी. हॉलीगन. 1995. *द फंक्शन्स ऑफ़ फोनोलॉजी इन द अक्विजिशन ऑफ़ रीडिंग—लेक्सिकल एंड सेन्टेन्स प्रोसेसिंग. मेमरी एंड कॉग्निशन*. वॉल्यूम 23, पृष्ठ 749–766.
- टन्मर, डब्ल्यू.ई. एंड जे.डब्ल्यू. चैम्पमैन, इन प्रेस. *लैंग्वेज प्रिडिक्शन स्किल, फोनोलॉजिकल रिक्विजिट एबिलिटी एंड बिगनिंग रीडिंग*. इन सी. हल्मी एंड आर.एम. जोशी (एडि.). *रीडिंग एंड स्पेलिंग—डेवलपमेन्ट एंड डिसऑर्डर, लॉरेन्स एर्लबाम असोसिएट, हावे, यूनाइटेड किंगडम*.

- डॉउनिंग जे.ए. (एडि.). 1973. *कम्पेरिटिव रीडिंग—क्रॉस नेशनल स्टडीज ऑफ़ बिहैवियर एंड प्रोसेसेस इन रीडिंग एंड राइटिंग*. मैकमिलन, न्यूयॉर्क.
- . 1988. *कॉग्निटिव सायकॉलजी एंड रीडिंग*. इन द यूएसएसआर, नॉर्थ हॉलैंड, एम्सटर्डम. (ट्रान्सलेशन ऑफ़ रशियन राइटिंग्स फ्रॉम द 1930 टू 1980.)
- डेविट्ज, पी., ई.एम. कार्र. एंड जे.पी.पेटबर्ग. 1987. *इफेक्ट्स ऑफ़ इन्फेरेन्स ट्रेनिंग ऑन कॉम्प्रिहेन्सन एंड कॉम्प्रिहेन्सन मॉनिटरिंग*. *रीडिंग रिसर्च क्वार्टर्ली*. वॉल्यूम 22, पृष्ठ 99–121.
- डेविस, डब्ल्यू.जे.एफ. 1973. *टीचिंग-रीडिंग इन अर्ली इंग्लैंड*. पिटमैन, लंदन, यूके.
- डोल, जे.ए. (एडि.), जी.जी. डफी, एल.आर.रोलर एंड पी.डी. पियर्सन. 1991. *मूविंग फ्रॉम द ओल्ड टू द न्यू—रिसर्च ऑन रीडिंग कॉम्प्रिहेन्सन इन्सट्रक्शन*. *रिव्यू ऑफ़ एजुकेशनल रिसर्च*. वॉल्यूम 61, पृष्ठ 239–264.
- थॉम्पसन, जी.बी., डी.एस. कॉट्रेल एंड सी.एम. फ्लेचर-फ्लिन. 1996. *सब-लेक्सिकल आर्थोग्रैफिक फोनोलॉजिकल रिलेशन्स अर्ली इन द अक्विजिशन ऑफ़ रीडिंग—द नॉलेज सीरीस अकाउन्ट*. *जर्नल ऑफ़ एक्सपेरिमेन्टल चाइल्ड साइकॉलॉजी*. वॉल्यूम 62, पृष्ठ 190–222.
- , डब्ल्यू.डी. टनर एंड टी. निकोल्सन (एडि.). 1993. *रीडिंग अक्विजिशन प्रोसेसेस, मल्टीलिंगुअल मैटर्स, क्लीवडन, यूनाइटेड किंगडम*.
- निकोल्सन, टी. 1991. *डू चिल्ड्रन रीड वर्ड्स बेटर इन कॉन्टेक्स्ट ऑर इन लिस्ट्स? अ क्लासिक स्टडी रिविजिटेड*. *जर्नल ऑफ़ एजुकेशनल साइकॉलॉजी*. 83, पृष्ठ 444–450.
- परफेड्टी, सी.ए. 1995. *कॉग्निटिव रिसर्च कैन इनफार्म रीडिंग एजुकेशन*. *जर्नल ऑफ़ रिसर्च रीडिंग*. वॉल्यूम 18, पृष्ठ 106–115.
- पियर्सन, पी.डी. एंड एल. फीलिडिंग. 1991. *कॉम्प्रिहेन्सन इन्सट्रक्शन*. इन आर. बार्, एम.एल. कामिल, पी.बी. मोसेंतल एंड पी.डी. पियर्सन (एडि.). *हैंडबुक ऑफ़ रीडिंग रिसर्च*. वॉल्यूम 2, पृष्ठ 815–860. लॉन्गमैन, व्हाइट प्लेन्स, न्यूयॉर्क.
- प्रिसली, एम., एल.एम. लिनिन्शिक, एच. डायली, एम. स्मिथ एंड एच. केक. 1989. *अ मेथडोलॉजिकल एनालिसिस ऑफ़ एक्सपेरिमेन्टल स्टडीज ऑफ़ कॉम्प्रिहेन्सन स्ट्रेटजी इन्सट्रक्शन*. *रीडिंग रिसर्च क्वार्टर्ली*. वॉल्यूम 24, पृष्ठ 458–470.
- . पी.बी. एल-दिनारी, आई. गैस्किन, टी. स्कडर, जे.एल. बर्गमैन, जे. अलमासी एंड आर. ब्राउन. 1992. *बियॉन्ड डाइरेक्ट एक्सप्लेनेशन—ट्रान्सैक्शनल इन्सट्रक्शन ऑफ़ रीडिंग कॉम्प्रिहेन्सन स्ट्रेटजीज*. *एलीमेन्ट्री स्कूल जर्नल*. वॉल्यूम 92, पृष्ठ 513–555.
- फार्नी, आर.सी. 1895. *मैनुअल ऑफ़ स्कूल मेथड*. व्हाइटकॉम्ब एंड टॉम्ब्स, क्राइस्ट चर्च, न्यूजीलैंड.

- फोरमैन, बी.आर., डी.जे. फ्रैन्सिस, डी.एम. नोवी एंड डी. लिबरमैन. 1991. हाउ लेटर-साउंड इन्सट्रक्शन मिडिएट्स प्रोग्रेस इन फर्स्ट ग्रेड रीडिंग एंड स्पेलिंग. जर्नल ऑफ एजुकेशनल साइकॉलॉजी. वॉल्यूम 83, पृष्ठ 456-469.
- ब्यर्न, बी एंड आर. फील्डिंग-बार्न्सले. 1995. इवॉल्यूशन ऑफ़ अ प्रोग्राम टू टीच फोनिमिक अवेयरनेस टू यंग चिल्ड्रेन—अ टू एंड श्री इयर्स फॉलोअप एंड अ न्यू प्री-स्कूल ट्रायल. जर्नल ऑफ़ एजुकेशनल साइकॉलॉजी. वॉल्यूम 87, पृष्ठ 488-503.
- बाल, ई.डब्ल्यू. एंड बी.ए.ब्लैकमैन. 1991. डज फोनिम अवेयरनेस ट्रेनिंग इन किंडरगार्टेन मेक अ डिफ़रेंस. इन अर्ली वर्ड रिकॉग्निशन एंड डेवलपमेन्टल स्पेलिंग? रीडिंग रिसर्च क्वार्टर्ली. वॉल्यूम 26, पृष्ठ 49-66.
- रेपल, टी.ई. एंड सी.ए. वॉनकॉट. 1985. हाइटनिंग फोर्थ-ग्रेड स्टूडेन्ट्स सेन्सिटिविटी टू सोर्सेस ऑफ़ इन्फॉर्मेशन फॉर आन्सरिंग कॉम्प्रिहेन्सन क्वेश्चन्स. रीडिंग रिसर्च क्वार्टर्ली. वॉल्यूम 20, पृष्ठ 282-296.
- स्टाल, एस.ए. एंड पी.डी. मिलर. 1989. होल लैंग्वेज एंड लैंग्वेज एक्सपीरियन्स अप्रोचस फॉर बिगनिंग रीडिंग—अ क्वान्टिटेटिव रिसर्च सिंथेसिस. रिव्यू ऑफ़ एजुकेशनल रिसर्च. वॉल्यूम 59, पृष्ठ 87-116.
- स्मिथ, एन.बी. 1965. अमेरिकन रीडिंग इन्सट्रक्शन. इन्टरनेशनल रीडिंग. असोसिएशन, नेवार्क, डेलावर.
- सलिवन, एच.जे., एम. ओकाडा एंड एफ.सी. निदरमेयर. 1971. लर्निंग एंड ट्रान्सफर अंडर टू मेथड्स ऑफ़ वर्ड-अटैक इन्सट्रक्शन. अमेरिकन एजुकेशनल रिसर्च जर्नल. वॉल्यूम 8, पृष्ठ 227-239.
- हृदयुक जे. एंड डब्ल्यू. एलर (एडि.) 1992. इन्टरनेशनल हैंडबुक ऑफ़ रीडिंग एजुकेशन. ग्रीनवुड प्रेस, वेस्टपोर्ट कनेक्टिकट. काउंटी
- हैरिस, वी.जे. 1993. लिटरेचर बेस्ड अप्रोचेस टू रीडिंग इन्सट्रक्शन. इन एल. डार्लिंग-हैमॉन्ड (एडि.). रिव्यू ऑफ़ रिसर्च इन एजुकेशन, वॉल्यूम 19, पृष्ठ 269-297. अमेरिकन एजुकेशनल रिसर्च असोसिएशन, वॉशिंगटन डी.सी.

7. पठन

—सी. पीटर रस्सेल*

हम पढ़ना कैसे सीखते हैं?
पढ़ते समय हम क्या देखते हैं?
बाएँ से दाएँ क्यों पढ़ना चाहिए?
पढ़ने की गति को कैसे तेज़ किया जा सकता है?
और वह भी बिना अर्थ को खोए?
पढ़ने की सर्वोत्तम पद्धति कौन-सी है?

सन् 1950 के पहले अंग्रेज़ी की अधिकतर पढ़ाई 'वर्णमाला पद्धति' से करवाई जाती थी। इस पद्धति में सबसे पहले बच्चे अंग्रेज़ी वर्णमाला के छब्बीस अक्षर सीखते हैं। इसके बाद उन्हें वर्णमाला के प्रत्येक अक्षर की विशिष्ट 'ध्वनि' का ज्ञान कराया जाता है, साथ ही उन्हें यह ध्यान दिलाया जाता है कि कभी-कभी एक अक्षर की एक से अधिक ध्वनियाँ भी हो सकती हैं, जैसे— 'Civil' (सिविल) शब्द में 'C' की ध्वनि 'स' से है। तो 'Cavil' (कविल) में 'क' से। इसी प्रकार दो अलग-अलग अक्षरों की ध्वनि भी कभी-कभी एक होती है, जैसे— 'Jib' का अक्षर 'J' और 'Gib' का अक्षर 'G' दोनों एक ही ध्वनि देते हैं— 'J' की। इसके बाद बच्चे ध्वनियों को एक साथ जोड़कर पहले शब्दांश अक्षर, यानी (Syllables) और फिर आसान शब्द बनाना सीखते हैं।

यहाँ तक सिखाने की यह प्रक्रिया 'ऊँचा बोलकर' की जाती है, जिससे अध्यापक यह जान पाता है कि बच्चे ध्वनि का सही उच्चारण कर रहे हैं या नहीं। इसके बाद उन्हें 'चुप रहकर' पढ़ना सिखाया जाता है। इसमें बच्चे पहले शब्दों को इस तरह बोलते हैं, मानो अपने से बात कर रहे हों। इसके बाद वे उन्हें बिना आवाज़ निकाले 'चुप' रहकर बोलते हैं। अंत में बिना ओंठ हिलाए पढ़ना सीखते हैं। हो सकता है कि वे अब भी अँगुली नीचे रखकर शब्दों को पढ़ते हों, इसलिए इस पद्धति के आखिरी चरण में उन्हें इस बात के लिए प्रेरित किया जाता है कि वे बिना शब्द के नीचे अँगुली रख केवल आँखों से देखकर पढ़ें।

आगे की प्रगति के लिए धीरे-धीरे बच्चों को और कठिन पुस्तकें पढ़ने को दी जाती हैं, जिनसे उनका शब्द-भंडार और व्याकरण का ज्ञान विकसित हो सके और उम्मीद की जाती है कि (जूनियर हाईस्कूल, यानी आठवीं कक्षा) तक आते-आते, वे काम में आने

*सी.पीटर रस्सेल— इंस्टिट्यूट ऑफ़ निओटिक साइंस वर्ल्ड बिजनेस एकेडमी एंड ऑफ़ दि फ़िडरहर्न फ़ाउंडेशन
एंड एन ऑनरि मेम्बर ऑफ़ दि क्लब बुडापेस्ट

वाली अधिकतर सामग्री को पढ़ने योग्य हो जाएँ। दुर्भाग्य से इस पद्धति में कई दोष हैं। एक बड़ी समस्या अक्षरों और उनकी ध्वनियों के बीच के जटिल संबंध को लेकर पैदा होती है, जिससे बच्चे की सीखने की गति धीमी पड़ जाती है। जैसा कि एक भाषा अध्यापक ने बताया कि 'Ay' (ऐ) से 'Apple' (एप्पल) 'Bee' (बी) से 'Book' और 'Sea' (सी) से 'Confusion' (कन्फ्यूजन) होता है।

1950 के बाद अनेक ऐसी तकनीकें विकसित की गईं, जिन्होंने 'वर्णमाला पद्धति' की कमियों को दूर करने की कोशिश की। इनमें सर्वाधिक प्रयोग में आने वाली पद्धति 'देखो-बोलो पद्धति' (Look-Say method) है। इससे बच्चे को किसी भी परिचित वस्तु जैसे कि 'कप का चित्र' दिया जाता है और उसके नीचे बड़े-बड़े अक्षरों में उसका नाम यानी 'कप' लिखा होता है। यहाँ शुरुआत में बच्चों को वर्णज्ञान नहीं, बल्कि आसान शब्द और उनसे जुड़ी ध्वनियों तथा उनके अर्थ बताए जाते हैं। कुछ दूसरी पद्धतियों में, सामान्य अक्षर के साथ अतिरिक्त चिह्न जोड़ दिए जाते हैं, जिससे अक्षरों और उनकी ध्वनियों में सीधे संबंध स्थापित किया जा सके। 'आरंभिक अंग्रेजी वर्णशिक्षण' (Initial Teaching Alphabet) में वर्णमाला के छब्बीस अक्षरों के अतिरिक्त अठारह और चिह्नों को जोड़ दिया जाता है, ताकि भाषा का अधिकांश ध्वन्यात्मक दायरा उसमें समा सके। 'स्वरभेद चिह्नीकरण पद्धति' (Diacritical Marking System) में सामान्य वर्णों के साथ-साथ अतिरिक्त चिह्न का प्रयोग किया जाता है, जो हमें शब्दों के उच्चारण से परिचित कराते हैं। 'कलर सिस्टम' नामक ऐसी ही पद्धति में सामान्यतः प्रयोग में आने वाले 26 वर्णों का प्रयोग किया जाता है और हर अक्षर 48 रंगों में से किसी रंग को दर्शाता है। इसमें प्रत्येक रंग एक ध्वनि को दर्शाता है। वर्तमान में प्रचलित पद्धति में हर पद्धति के अच्छे पहलुओं को, जैसे— चित्रों, रंगों, संयोजन आदि को सम्मिलित किया जाता है, जिससे सीखने में मदद मिलती है।

निःसंदेह इन सभी पद्धतियों की अपनी उपयोगिताएँ हैं, पर ये केवल शब्दों और वर्णों की पहचान तक सीमित हैं। ये न तो बच्चों की चुप रहकर पढ़ने की गति बढ़ाने में सहायक हैं, न ही प्रभावपूर्ण तरीके से पढ़ने में सहायक हैं और न ही पढ़े हुए को याद रखने में सहायक होती हैं।

बच्चे पढ़ना सीख गए हैं, यह तभी माना जा सकता है, जब वे बिना ओंठ हिलाए और बिना अक्षरों पर अँगुली रखे पढ़ सकें, परंतु मस्तिष्क की दृश्यात्मक सूचनाओं को संगृहीत करके बनाए रखने के अर्थों में, वे अच्छे पाठक नहीं कहलाएँगे।

हममें से अधिकांश, यहाँ तक कि वयस्क लोगों को भी पढ़े जाने वाले शब्द सुनाई देते हैं। ऐसा नहीं है कि हम वास्तव में उन्हें 'उच्चारित' करने या 'बोलने' की हद तक जाते

हों, लेकिन उनकी 'ध्वनि' जरूर साथ रहती है। ज्यादातर लोग दो सौ से तीन सौ शब्द प्रति मिनट तक ही 'सुन' पाने की क्षमता रखते हैं और यह अनुपात उनकी सामान्य पठन गति की सीमा बन जाता है।

हमें यह सिखाया ही नहीं जाता कि लिखे हुए को दृश्य रूप में कैसे पढ़ें? यदि ऐसा हो तो हमारी पढ़ने की गति प्रति मिनट कई हजार शब्दों तक हो सकती है। साथ ही हमें यह भी नहीं सिखाया जाता कि जो पढ़ा है, उसे समझने और याद रखने की योग्यता को कैसे अधिक से अधिक बढ़ाया जाए? पढ़ना सीखने को अक्षर पहचानने और उनका शब्दों में प्रयोग मात्र समझा जाता है और जबकि वास्तव में यह सारी प्रक्रिया 'पढ़ने की प्रक्रिया' का पहला चरण मात्र है।

'Raeding' शब्द आंग्ल-सैक्सॉन शब्द 'Raedan' से बना है, जिसका अर्थ 'स्वयं को सलाह देना' है। इसका यह मतलब नहीं है कि पृष्ठ पर बने चिह्न को बस पहचान लिया जाए और उनसे बनने वाले शब्दों को जान लिया जाए। इसका अर्थ, पढ़े गए शब्दों के अर्थ और उनकी सार्थकता के बारे में 'स्वयं को सलाह देने' की क्षमता रखना है। बुज़ान (Buzan) नामक विद्वान ने 'पठन' की ऐसी ही व्यापक व्याख्या देते हुए, उसमें सात चरणीय प्रक्रिया का समर्थन किया है—

1. दृष्टिगत सामग्री को आँखों द्वारा आत्मसात किया जाना।
2. अक्षरों और शब्दों की पहचान करना।
3. समझना, पढ़े जाने वाले शब्दों को पूरे अनुच्छेद के अर्थ से जोड़कर देखना।
4. बोध, पढ़ी गई सूचना का अपने संपूर्ण ज्ञान से तालमेल बिठाना।
5. सूचना का अच्छे और सही ढंग से अपनी स्मृति में संचयन।
6. जरूरत के अनुसार उस सूचना को प्रयोग में ला पाना।
7. सूचना का प्रभावी तौर पर इस्तेमाल और सफलतापूर्वक उसे अन्य लोगों तक पहुँचा सकना, साथ ही अपने तक भी, यानी विचारों में स्पष्टता लाना।¹

इस व्याख्या के अनुसार देखा जाए तो हम पाएँगे कि 'पढ़ने' की अधिकांश सामान्य पद्धतियों में पहले दो चरणों पर ही ध्यान दिया जाता है। बोध-परीक्षण में कुछ हद तक तीसरे और चौथे चरण का भी आकलन कर सकते हैं, परंतु पठन सामग्री को कैसे सही तरह से समझा जाए अथवा सही समय पर उसका उपयोग कैसे सुनिश्चित किया जाए, इस बारे में बच्चों को कम सहायता दी जाती है।

आँख एवं उसकी क्रिया

हम कैसे पढ़ते हैं— यह जानने के लिए और पढ़ने के ढंग में सुधार लाने के लिए हमें पहले थोड़ा-बहुत यह समझना होगा कि आँख कैसे काम करती है।

आँख तक पहुँचने वाला प्रकाश लेंस के माध्यम से रेटिना पर केंद्रित होता है। रेटिना हजारों-करोड़ों छोटी-छोटी प्रकाश के प्रति संवेदनशील कोशिकाओं से बना होता है। यह कुछ वैसा ही है, मानो अमेरिका की पूरी आबादी को एक डाक टिकट के आकार में समेट दिया गया हो। शंकु के आकार वाली कुछ कोशिकाएँ, कुछ विशेष रंगों के प्रति संवेदनशील होती हैं, जब कि छड़ के आकार वाली कुछ अन्य कोशिकाएँ प्रकाश की सामूहिक तीव्रता के प्रति। ये कोशिकाएँ रेटिना पर फैले स्नायु-तंत्र से जुड़ी होती हैं और यह स्नायु-तंत्र सीधे मस्तिष्क को सूचना भेजता है। वास्तव में देखा जाए तो रेटिना मस्तिष्क से जुड़ा हुआ ही है। उसे मस्तिष्क के विस्तार के रूप में ही देखा जाना चाहिए।

रेटिना का केंद्रबिंदु जिसे 'फोविया' (Fovea) कहते हैं, एक छोटा सा स्थान है, जहाँ कोशिकाएँ अधिक सघन होती हैं। यहाँ दो हजार शंकु कोशिकाएँ एक मिलीमीटर वर्ग के दसवें हिस्से से भी छोटे स्थान में समाई होती हैं। फोविया पर पड़ने वाली आकृतियाँ रेटिना पर अन्यत्र पड़ने वाली आकृतियों से कहीं ज्यादा स्पष्ट और बारीकी लिए होती हैं। जब हम किसी चीज़ पर सीधी नज़रें डालते हैं तो उससे आने वाला प्रकाश सीधे फोविया पर पड़ता है। फोविया एक बार में पूरे का एक बटे चालीस हजारवें हिस्से से भी कम देखता है। यदि आप एक छपी पंक्ति को दो फुट की दूरी से देखें तो इस पंक्ति के केवल तीन अक्षर उस दृष्टि के केंद्र में आ सकेंगे और एक बार में हम उतने ही अक्षर अच्छी तरह से देख सकते हैं। चित्र फोविया से जितने दूर होते हैं उतने धुँधले हो जाते हैं। हमें इस दृश्य-क्षेत्र की परिधि पर उसका हल्का-सा आभास ही हो पाता है।

आकृति 7.1 में आँख का एक स्पष्ट रेखाचित्र दर्शाया गया है। रेटिना में करोड़ों (कई हजार लाख) प्रकाश संवेदी कोशिकाएँ होती हैं। इनमें से अधिकांश फोविया के इर्द-गिर्द मौजूद होती हैं। यह उस दृश्य क्षेत्र का केंद्र-बिंदु होता है, जहाँ हमारी दृष्टि सबसे ज्यादा स्पष्ट होती है। यहाँ इनकी सघनता पच्चीस हजार कोशिकाएँ प्रति वर्ग मिलीमीटर होती है।

वास्तव में हम जिन वस्तुओं को प्रत्यक्ष देख रहे होते हैं, वे हमें उतनी ही स्पष्ट दिखाई देती हैं। इस कथन के दो महत्वपूर्ण निहितार्थ हैं—



आकृति 7.1

1. लिखित सामग्री को पढ़ते हुए हमारी आँख को पंक्ति से अन्य भागों पर भी नज़र डालते हुए चलना चाहिए, जिससे उन्हें भी फोविया के केंद्र में ला सकें।
2. प्रत्येक वस्तु को स्पष्ट देखने के लिए यह ज़रूरी है कि हमारी आँख पढ़ते हुए, सेकंड के बहुत छोटे हिस्से के लिए रुके, ताकि फोविया पर उभरी छवि कुछ देर वहाँ रह सके और दोबारा दिमाग को संप्रेषित की जा सके।

इस प्रकार हमारी आँखें छोटे-छोटे टुकड़ों में सूचनाओं को ग्रहण करती हैं। इस प्रक्रिया के बीच में वे कुछ नहीं देख रही होतीं। वे इस अल्पविराम में सिर्फ़ एक बिंदु से दूसरे बिंदु तक पहुँचती हैं। हम इस प्रक्रिया को इसलिए महसूस नहीं कर पाते हैं, क्योंकि यह हमारे मस्तिष्क में घटित होती है। एक के बाद एक सूचनाओं को एकीकृत करने का कार्य बिना रुकावट चलता रहता है।

सन् 1879 में पेरिस विश्वविद्यालय के प्रोफ़ेसर जवल (Javal) वह पहले व्यक्ति थे, जिन्होंने हमें बताया कि हमारी आँखें प्रवाहमय तरीके से नहीं चलती हैं। जवल ने इन गतिविधियों को 'Saccades' कहा है। फ्रेंच भाषा में इसका मतलब झटका देना है। तब से मनोवैज्ञानिकों ने आँखों की इन गतिविधियों को 'Saccadic Eye Movement' कहना शुरू कर दिया। यह विरल ही है कि आँखें आधे सेकंड से ज़्यादा किसी जगह पर स्थिर रह सकें।

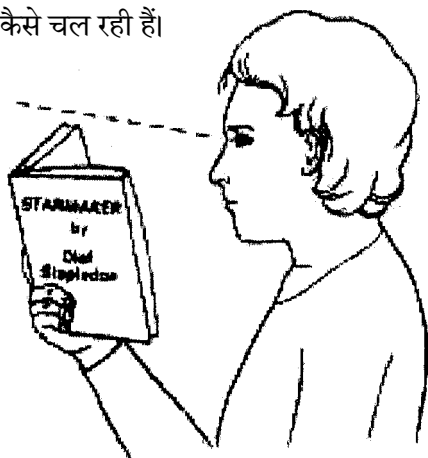
भले ही हमें लगता हो कि आँखें पूर्णतः स्थिर हैं (जैसा कि अभी आप इस वाक्य के समाप्त होने पर महसूस करेंगे) पर जबकि वास्तव में आपकी आँखें एक बिंदु के इर्द-गिर्द घूम रही होती हैं। अगर आँख इस तरह लगातार एक जगह से दूसरी जगह स्थानांतरित न हो तो उस स्थिति में छवि तुरंत ही धुँधली होकर गायब हो जाएगी।

पढ़ते समय आँखों की क्रिया

सन् 1908 में एडमंड ह्यूई (Edmund Huey) ने पढ़ने में आँखों के संचालन, इस दौरान रुकने और कई तरहों के समायोजनों पर पहली बार महत्वपूर्ण कार्य किया जो कि 'The Psychology and Padagogy of Reading' के नाम से पुस्तक रूप में प्रकाशित हुआ।² तब से लेकर आज तक यह पढ़ने के संदर्भ में सबसे वृहद और उपलब्ध शोध है।

ह्यूई ने पाया कि हमारी आँखें एक समायोजन से दूसरे समायोजन तक पहुँचने में सेकंड का चौथाई भाग लगाती हैं। इस प्रकार ये प्रति सेकंड चार समायोजनों तक सीमित रहती हैं। सामान्य पाठक के लिए प्रत्येक समायोजन में दो या तीन शब्द लग जाते हैं। इस तरह देखें तो हम पाएँगे कि इस लेख की पंक्तियों को पढ़ने के दौरान संभवतः तीन से छह समायोजन पाठकों को करने पड़ेंगे। इस तरह के विरामों और इन समायोजनों में लगने वाला वक्त उस पाठ्यसामग्री और व्यक्तिगत दक्षता दोनों पर निर्भर करेगा। जो पाठक जितना दक्ष होगा वह एक ही समायोजन में अधिक से अधिक सामग्री ले लेगा।

पढ़ने के दौरान आँखों की गति देखने के लिए अपने मित्र को आकृति 7.2 की तरह किताब पकड़कर पढ़ने के लिए कहिए, ताकि आप यह देख पाएँ कि एक-एक पंक्ति को पढ़ते हुए उसकी आँखें कैसे चल रही हैं।



आकृति 7.2 — किसी को पढ़ते देखते हुए उसकी आँखों की गति का अवलोकन करें।

हमारी आँखें सेकंड के सौवें हिस्से में ही दृश्यात्मक सूचनाएँ ग्रहण कर तत्क्षण मस्तिष्क को संप्रेषित कर देती हैं। मस्तिष्क उन सूचनाओं का चौथाई या आधे सेकंड के भीतर प्रक्रियायन कर उन्हें पहचान लेता है। जब मस्तिष्क में यह घटित हो रहा होता है,

उसी समय हमारी आँखें अगले या उसके आगे के समायोजन बिंदुओं की ओर बढ़ जाती हैं, उसके साथ देखने लगती हैं। इस प्रकार हम यह पाते हैं कि हमारी आँखें हमारे सचेत/सक्रिय पठन से एक दो शब्दांश अक्षर आगे ही होती हैं।

हालाँकि, सबसे स्पष्ट बोध फ़ोविया में घटित हो रहा होता है और जो छवियाँ फ़ोविया के केंद्र में नहीं रह गई, वे सब भी दिख तो रही होती हैं, लेकिन वे साफ़ नज़र नहीं आतीं। केंद्र से हटी हुई यह दृष्टि 'परिधीय दृष्टि' कहलाती है। इसे ही हम अपनी आँखों के कोरों से देखना कहते हैं।

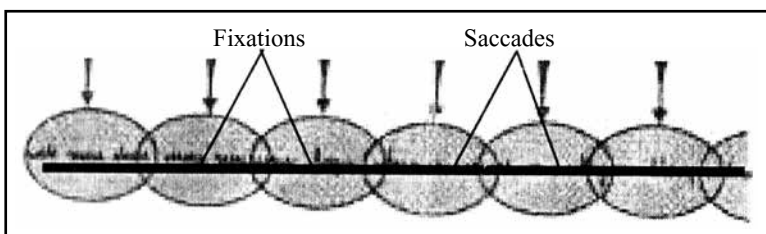
पढ़ने के दौरान यह परिधीय दृष्टि ही सबसे महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही होती है। समायोजन के बिंदु से आगे दिख रहे शब्दों को आँखें आंशिक रूप से देख रही होती हैं और वे उन्हें मस्तिष्क तक संप्रेषित कर देती हैं। इसी अस्पष्ट धुँधली छवि के आधार पर आगे क्या संभावित है, हमारा मस्तिष्क आँखों को बताता है कि आगे कहाँ बढ़ना है? इस तरह पढ़ते समय शृंखला में आँखें लगातार पंक्ति-दर-पंक्ति नहीं चलतीं, अपितु बीच में कई निरर्थक शब्दों को छोड़ते हुए उस लिखित सामग्री में सबसे महत्वपूर्ण समझे जाने लायक भागों पर अपना ध्यान केंद्रित करती हैं।

कई पाठक पढ़ते समय पंक्ति-दर-पंक्ति निरंतरता बनाकर नहीं रख पाते। वे बहुत बार अपने द्वारा पढ़े गए शब्दों और पंक्तियों पर वापस लौटते हैं। इस तरह बार-बार पीछे की तरफ़ जाने को प्रतिगमन (Regression) कहते हैं। आमतौर पर जो पाठक जितना कुशल होता है उसके पढ़ने में प्रतिगमन उतना ही कम होता है। लगभग पाँच हजार पाठकों पर किए गए एक शोध में यह पाया गया कि बच्चों द्वारा आँखों की क्रिया में प्रतिगमन पच्चीस प्रतिशत था और वयस्कों में यह पंद्रह प्रतिशत था।³ इनमें से बहुत सी प्रतिगमन गतिविधियाँ गैर-ज़रूरी और अवाँछनीय थीं। यह इस कारण नहीं था कि उन्हें कम समझ में आ रहा था या वे कम ग्रहण कर पा रहे थे, बल्कि उन्हें पढ़ते समय पीछे कुछ छूट जाने का डर था।

ह्यूई ने पाया कि यह समायोजन अक्सर उन छपी हुई पंक्तियों के बिल्कुल बीचों-बीच केंद्रित होता है। हम जब अपनी आँखें किसी नयी पंक्ति की तरफ़ ले जाते हैं, तब वे उसे पहले शब्द से शुरू न करके उसके एक या दो शब्द छोड़ देती हैं। इस उपक्रम में हमारा मस्तिष्क अच्छी तरह से अंदाज़ा लगा लेता है कि पिछली पंक्ति से क्या अर्थ मिल रहा है। वह उस परिधीय दृष्टि से बस यह देखता है कि छोड़ दिए गए शब्द क्या वही हैं, जिनका उसने अंदाज़ा लगाया था। बिल्कुल इसी तरह वह पंक्ति की समाप्ति से एक-दो शब्द पहले ही समायोजन करने लगता है और उस परिधीय दृष्टि का उपयोग कर देखता है कि क्या अंतिम शब्द बिल्कुल वही है, जिसकी उसने अपेक्षा की थी।

बाएँ से दाएँ क्यों पढ़ें?

हम जो भी वस्तु अपने बाएँ (दृष्टि-क्षेत्र) तरफ़ देखते हैं, उसकी छवि आँख के दाएँ रेटिना पर पड़ती है। दायाँ रेटिना इस छवि को हमारे मस्तिष्क के दाएँ हिस्से तक संप्रेषित कर देता है। इसी प्रकार हमारी आँख का दायाँ दृष्टि-क्षेत्र उन छवियों को हमारे मस्तिष्क के बाएँ हिस्से में संप्रेषित कर देता है। हमारे मस्तिष्क का बायाँ हिस्सा शाब्दिक कार्यों में ज्यादा सक्षम है, इसलिए जो भी छवि हमारी आँख के दाएँ दृष्टि-क्षेत्र पर पड़ती है, वह बाएँ हिस्से पर पड़ने वाली छवियों के मुकाबले कई गुना तेज़ी से प्रक्रमण में संलग्न हो जाती है।



आकृति 7.3 — मुद्रित सामग्री को पढ़ते हुए आँखें छोटे-छोटे चरणों में चलती हैं और हर समायोजन के समय वे दृष्टि-क्षेत्र के केंद्र-बिंदु पर केंद्रित होती हैं।

कई प्रयोगों से यह सत्यापित भी हुआ है कि जब शब्द बहुत थोड़ी देर के लिए दाएँ और बाएँ दृष्टि-क्षेत्र पर फ़्लैश किए जाते हैं, उस स्थिति में जो शब्द दाएँ क्षेत्र की तरफ़ दिखाए जाते हैं, बाएँ दृष्टि-क्षेत्र की अपेक्षा पहले पहचान लिए जाते हैं।⁴

अगर कोई व्यक्ति बाईं से दाईं दिशा की ओर कुछ नया पढ़ता है, उस समय आगे आने वाली अपठित सामग्री को आंशिक रूप से हमारे मस्तिष्क के बाएँ हिस्से को संप्रेषित किया जा चुका होता है। बायाँ हिस्सा इस तरह के शाब्दिक प्रक्रमण में विशेषज्ञता रखता है। इसी प्रकार जब हम किसी अपठित सामग्री को दाएँ से बाएँ पढ़ना शुरू करते हैं, तब हमारे मस्तिष्क के दाएँ हिस्से में प्रक्रिया आरंभ होती है, चूँकि वह शब्द संबंधी कार्यों में इतना निपुण नहीं है, इसलिए हमारा मस्तिष्क यह अंदाज़ा बेहतर ढंग से नहीं लगा पाता कि आगे क्या संभावित है।

यह अप्रत्यक्ष रूप से हमें बताता है कि वे भाषाएँ जो बाएँ से दाएँ तरफ़ लिखी जाती हैं, पढ़ने में अपेक्षाकृत सरल होती हैं। इस संदर्भ में हुए कई अध्ययनों में यह दिखाया गया है कि बाएँ से दाएँ तरफ़ पढ़ना सिर्फ़ 'पठन' को ही प्रभावी नहीं बनाता, बल्कि यह मस्तिष्क के लिए भी उतना ही बेहतर है। वे पाठक जो बाएँ से दाएँ पढ़ते हैं उनके मस्तिष्क के दोनों हिस्से अधिक निपुणता के साथ आपस में कार्य करते हैं।



आकृति 7.4— किसी पृष्ठ को पढ़ते समय सामान्यतः आँख की क्रिया पृष्ठ के मध्य पर केंद्रित रहती है।

वे शब्दों को एकीकृत करने के साथ-साथ स्थानिक क्रियाओं को भी बेहतर कर पाते हैं। वहीं दूसरी तरफ़, दाएँ से बाएँ की दिशा में पढ़ने वाले पाठकों के मस्तिष्क के दोनों हिस्से एक साथ बेहतर काम नहीं कर पाते हैं।⁵

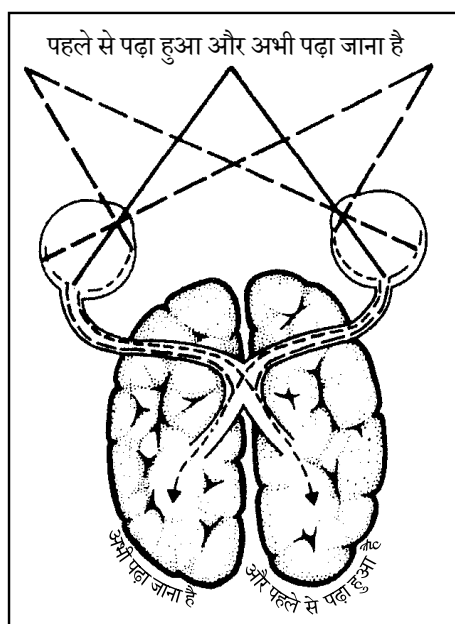
पहचान

मस्तिष्क को दृश्यात्मक सूचनाएँ प्राप्त होने के बाद, उन्हें 'पहचानना' और अर्थ देना अनिवार्य होता है। जैसे ही सूचनाएँ मस्तिष्क के पीछे दृश्यात्मक कॉर्टेक्स (Visual Cortex) को प्राप्त होती हैं, उसी क्षण उनका आकृति विश्लेषण शुरू हो जाता है। डेटा, सेकंड के सौवें हिस्से से भी कम समय में विभक्त होकर पंक्ति, वक्रों, कोणों के मूलभूत अवयवों में बदल जाते हैं।

अक्षर की पहचान काफ़ी हद तक इसी तरह होती है। कई प्रयोगों से यह साबित हुआ है कि जब पर्दे पर कुछ अक्षर दिखाए जाने के बाद व्यक्ति से पूछा जाता है कि वे अक्षर क्या थे तो गलती अक्सर उन अक्षरों की पहचान में होती है जिनकी आकृतियों में कुछ समानता होती है, जैसे अंग्रेज़ी के अक्षर P को B या F मान लिया जाना।⁶ आकृति की पहचान से संबंधित अगला प्रमाण इस बात से मिलता है कि अक्षरों की शृंखला में से जब कोई व्यक्ति एक अक्षर को पहचानने का प्रयास करता है और यदि बाकी अक्षर उसी से मिलती-जुलती आकृति वाले होते हैं तो अक्षर पहचानने में ज़्यादा समय लगता है।⁷

हालाँकि, आकार-विश्लेषण यह नहीं समझा पाता कि अलग-अलग प्रकार से लिखा गया अंग्रेज़ी का 'A' अक्षर के रूप में ही क्यों पहचान लिया जाता है। जबकि एक टाइपसेट

से दूसरे में तबदील किए जाने पर अक्षर का स्वरूप काफ़ी बदल जाता है। इससे ऐसा लगता है कि अक्षरों की पहचान उनके मूल रूप में उन्हें अपने में पूर्ण मानकर भी की जाती है। केवल अक्षर ही एक संपूर्ण इकाई के रूप में नहीं पहचाने जाते, बल्कि कुछ सामान्य शब्द भी एक इकाई मानकर पहचाने जाते हैं। सन् 1886 में ही यह खोजा जा चुका था कि लोग ऐसी अक्षर-शृंखलाओं को, बेहतर पहचान लेते हैं, जो भले ही कुछ देर के लिए ही उनके सामने आती हैं पर जिनसे सार्थक शब्द निर्मित हो सकते हैं।⁸ यह भी देखने में आया है कि यदि व्यक्ति शब्द से इतनी दूरी पर हो कि अलग-अलग अक्षर दिखाई न पड़ते हों, तो भी वह शब्द को एक इकाई के रूप में पहचान लेता है।⁹ शब्दों की पहचान तब भी की जा सकती है, जब वे परिधीय दृष्टि के अंतर्गत आते हों, परंतु उनके अलग-अलग अक्षर धुंधले दिखने के कारण पहचाने न जा सकते हों।¹⁰ अक्षरों की तरह ही वे शब्द जिनका अपना विशिष्ट आकार होता है, सामान्य आकार वाले शब्दों से जल्दी पहचाने जा सकते हैं।



आकृति 7.5— किसी पंक्ति को पढ़ने का 'दृष्टि प्रक्रियायन' संबंधी स्कीमेटिक आरेख जो पढ़ा जाना है, वह परिधीय दृष्टि से देखा जाता है और वह मस्तिष्क के बाएँ भाग द्वारा विश्लेषित किया जाता है।
ऐसा करने से हमारा मस्तिष्क अगले सबसे बेहतर समायोजन बिंदु का अंदाज़ा लगा पाता है,
जिससे पढ़ना प्रभावी हो जाता है।

पूर्व में यह बताया जा चुका है कि तात्कालिक स्मृति की अवधि सूचना की विषयवस्तु पर निर्भर न होकर 'खंडों' (Chunks) की संख्या पर निर्भर करती है। पढ़ते समय भी ऐसा ही होता है। जब हम पढ़ते हैं तो लगभग पाँच 'खंडों' को एक समय में आत्मसात करते हैं। यह 'खंड' एक अक्षर, एक वर्ण, एक शब्द अथवा एक वाक्यांश भी हो सकता है। सामग्री जितनी अर्थपूर्ण होगी, उतनी आसानी से वह समझी जा सकेगी और उसके 'खंडों' का आकार भी उतना बड़ा होगा। 'krplztgf' जैसे बेतरतीब अक्षर समूह का हर अक्षर धीरे-धीरे पढ़ा जाता है। 'Bidnolleck' जैसे निरर्थक शब्द जिनका स्वरूप अंग्रेजी शब्दों से मिलता है, एक-एक अक्षर करके नहीं पढ़े जाते, अपितु शब्दांशों के रूप में पढ़े जाते हैं। *'The differentiated effects of temporal neocortical resections on overtrained and non-overtrained visual habits in monkeys (sic)'* यह वाक्यांश, जिसे समझना मुश्किल है, शब्द-दर-शब्द पढ़ा जाएगा, लेकिन एक सरल अनुच्छेद को शब्दों और वाक्यांशों के 'खंडों' में बाँटकर पढ़ा जाएगा।

निरर्थकता

मुद्रित भाषा का काफ़ी अंश ऐसा होता है, जिसके छूट जाने पर भी अर्थ में कोई विशेष अंतर नहीं आता। प्रत्येक अक्षर का अधिकतर भाग इसी किस्म का होता है और यदि इसकी बनावट का कुछ भाग गायब भी हो तो पदबंध समझ में आ जाता है। मस्तिष्क को यह पता होता है कि रेखाओं और घुमावों की एक विशिष्ट संरचना सामने आने वाली है और वह पूरी सामग्री के सामान्य अर्थ के आधार पर उन अक्षरों को समझ लेता है। यह इसी निरर्थकता का परिणाम है कि दवाई-विक्रेता किसी डॉक्टर के नुस्खे को समझ पाते हैं। आमतौर पर बहुत-से लोग डॉक्टर के लिखे गए पर्चे को इसलिए नहीं पढ़ पाते, क्योंकि वे असंख्य संभावनाओं के बीच से सही शब्द तलाशने की कोशिश करते हैं। वही दवाई-विक्रेता को यह शब्द कुछ एक-सौ शब्दों में ही ढूँढ़ना होता है। इसका अर्थ यह हुआ कि लिखित शब्द में सूचना कम होती है और अधिकांश हिस्सा निरर्थक होता है।

अक्षरों के अंश ही नहीं, पूरे का पूरा अक्षर तक भी छोड़ा जा सकता है। 'Sntncs wtht vwls cn b rd, and so can th.se wi.h eve.y fif.h let.er mi.sing' इसी तरह बिना अर्थ गँवाए हर शब्द का पाँचवाँ अक्षर हटाया जा सकता है। किसी वाक्य-विशेष का व्याकरणीय ढाँचा और उसका सामान्य अर्थ पाठक को आगे आने वाली सामग्री का पूर्वाभास कराने में सहायक होते हैं। एक वाक्य जो ऐसे शुरू होता है 'हम ज़रूरत से ज़्यादा

[illegible]

कौशलपूर्ण पठन

- प्रतिगमन हटाकर
- स्थिरण-केंद्र के दायरे में विस्तार लाकर

- परिधीय दृष्टि के अधिकाधिक इस्तेमाल द्वारा
- निरर्थकता का अधिक से अधिक उपयोग करके
- अभिप्रेरणा में वृद्धि करके
- सामग्री का पूर्वालोकन करके
- मस्तिष्क के दाएँ हिस्से को बाएँ हिस्से जितना ही इस्तेमाल करके

तीव्र पठन की आरंभिक तकनीकें 'टैकिस्टोस्कोप' (Tachistoscope) प्रशिक्षण पर आधारित थीं। टैकिस्टोस्कोप एक ऐसा यंत्र है जो, चित्र को बहुत थोड़ी देर के लिए प्रलेश करता है। तीव्र पठन तकनीक में टैकिस्टोस्कोप, छपी पंक्ति के कुछ शब्दों की तेज़ी से हल्की-सी झलक दिखाकर अगले शब्दों पर पहुँच जाता है। इसमें प्रतिगमन की कोई गुंजाइश नहीं रहती है, चूँकि हर अगले प्रलेश में थोड़े ज़्यादा शब्द लिए जाते हैं, पाठक को मजबूरन दृष्टि के प्रत्येक स्थिरण में ज़्यादा इकाइयों को समझना पड़ता है। इस तकनीक के इस्तेमाल द्वारा व्यक्ति की पढ़ने की गति 250 शब्द प्रति मिनट से बढ़ाकर 500 या 600 शब्द प्रति मिनट की जा सकती है।

पढ़ने की गति दोगुनी करना एक बड़ी महत्वपूर्ण उपलब्धि लग सकती है, परंतु वास्तव में यह वृद्धि उतनी बड़ी भी नहीं। एक अभ्यस्त पाठक आधुनिक तकनीकों के इस्तेमाल द्वारा 2000 या उससे भी अधिक शब्द प्रति मिनट पढ़ सकता है। इस 'टैकिस्टोस्कोप' पद्धति की दो कमियाँ हैं— एक तो यह परिधीय दृष्टि का विकास नहीं कर पाती, दूसरे अनेक उन शोधों को इस्तेमाल में नहीं लाती, जो पढ़ी गई सामग्री की पहचान और उसकी समझ की प्रक्रिया से संबंध रखते हैं।¹¹

दृश्य संचालक

दृश्य संचालक एक तरह का संकेतक (Pointer) है, जैसे— पेंसिल की नोक अथवा अँगुली का सिरा, जिसे मुद्रित पंक्ति के नीचे रखकर धीरे-धीरे सरकाते हुए पाठ पढ़ा जाता है। कुछ लोगों को ऐसा लग सकता है कि दृश्य संचालक का इस्तेमाल पीछे लौटने जैसा है। क्या हमें शुरू से ही स्कूल में यह नहीं सिखाया गया कि शब्दों के नीचे अँगुली रखकर पढ़ने से गति कम हो जाती है? फिर यह दावा कैसे किया जा सकता है कि इससे गति बढ़ती है?

अपनी अँगुली को तेज़ी से आगे-पीछे ले जाने की कोशिश करें। आप शायद देख सकेंगे कि प्रति सेकंड पाँच बार ऐसा किया जा सकता है। यह शब्दों पर आँख के फिसलने

की गति से दस गुना अधिक है, इसलिए यह कहा जा सकता है कि अँगुली या दृश्य संचालक के प्रयोग से गति धीमी नहीं पड़ती है। बच्चों को ऐसा करने से इसलिए रोका जाता है, क्योंकि प्रत्येक शब्द के नीचे दृश्य संचालक रोककर पढ़ने से गति धीमी पड़ेगी। हर शब्द पर दृश्य संचालक रोककर पढ़ने के बजाय, यदि पंक्ति के नीचे से उसे निर्विघ्न चलाया जाए तो यह गति में वृद्धि ही करेगा।

एक दृश्य संचालक पठन-क्रिया को तीन तरह से लाभ पहुँचाता है—

1. आँखें एक बार दृश्य संचालक की मदद से पढ़ने की अभ्यस्त हो जाएँ तो बार-बार फालतू में पीछे का पाठ देखने से बचा जा सकता है।
2. दृश्य संचालक को जान-बूझकर ज्यादा तेजी से सरकाकर आँखों की गति भी बढ़ाई जा सकती है।
3. प्रति सेकंड चार या पाँच बार दृष्टि समायोजित होती है। आँखें तेजी से चलने लगे तो वे प्रत्येक स्थिरण के साथ ज्यादा शब्द ग्रहण करेंगी। इससे पठन सामग्री अधिक अर्थपूर्ण हो सकेगी और जल्दी समझने की क्षमता में वृद्धि होगी।

व्यावहारिक परिस्थितियों में इस प्रकार इस्तेमाल किए जाने पर दृश्य संचालक पढ़ने की गति को सामान्यतः 50 प्रतिशत बढ़ाता पाया गया है।¹² एक अध्ययन में समान रूप से यह पाया गया है कि दृश्य संचालक के प्रयोग से प्रतिगमन (प्रति दस शब्द वह 1.37 से 0.77 तक हो गया) आधा हो जाता है। इसके साथ ही समायोजन की दर (Span of fixation) भी साठ प्रतिशत (2.15 शब्दों से बढ़कर 3.50 शब्द) तक बढ़ जाती है। इन दोनों सुधारों को साथ रखने पर पढ़ने की गति 274 शब्द प्रति मिनट से बढ़कर 465 शब्द प्रति मिनट तक पहुँच जाती है।¹³ इस तरह यह उस स्तर तक अभी से पहुँच गया है, जहाँ टैकिस्टोस्कोपिक प्रशिक्षण कुछ हफ्तों बाद पहुँचता है।

विस्तृत फ़ोकस

चूँकि, लिखित अंग्रेजी स्वयं में बहुत अधिक निरर्थकता लिए होती है, इसलिए पाठ्यसामग्री की बहुत सारी सूचनाएँ परिधीय दृष्टि से प्राप्त की जा सकती हैं। वे शब्द जिनके दिए गए संदर्भ में बार-बार आने की संभावना है, उन पर प्रत्यक्षतः दृष्टि डालकर जाँचने की आवश्यकता नहीं है। परिधीय दृष्टि किसी और स्थान पर स्थिर होने के बावजूद यह जाँच लेती है कि क्या संभावित है। इस कारण कई दक्ष पाठक पंक्ति-दर-पंक्ति पाठ को नहीं पढ़ते, बल्कि वे पृष्ठ के केंद्र के किनारे-किनारे पढ़ते चलते हैं और एक ही बार देखने पर उस पंक्ति का सार जान जाते हैं।

इस स्पष्ट दृष्टि का मुख्य क्षेत्र सिर्फ लंबवत ही नहीं बढ़ता, अपितु उसमें क्षैतिज विस्तार भी होता है। आमतौर पर हमें पता ही नहीं चलता कि पढ़ते वक्त जब हम पंक्ति में किसी शब्द को देख रहे होते हैं, बिल्कुल उसी क्षण हम स्पष्ट रूप से दो-तीन पंक्ति ऊपर और नीचे देख पाने में समर्थ होते हैं। बहुत तेज़ गति से पढ़ने वाले पाठक इसका प्रयोग करते हैं और वे एक ही बार में दो या उससे अधिक पंक्तियों पर नज़र डालते चलते हैं।

दृश्य संचालक इस परिधीय दृष्टि को विकसित करने में भी बहुत सहायक होते हैं। इन संचालकों को प्रत्येक पंक्ति के साथ चलाने के बजाय, आँखों के साथ पृष्ठ के मध्य भाग में लाकर उपयोग किया जा सकता है। लिखित भाषाओं में निहित उच्च निरर्थकता हमें यह स्वतंत्रता देती है कि हम अपूर्ण परिधीय सूचनाओं का उपयोग करने के बाद भी उतनी समझ बना लेते हैं, जितनी प्रत्येक शब्द या वाक्यांश पर ठहरकर उसे समझने की कोशिश करने के बाद की जाती है।

इस परिधीय दृष्टि का पूरा उपयोग करके ही दक्ष पाठक उस पाठ के बारे में अपनी सामान्य समझ को बेहतर तरीके से जान पाते हैं कि आगे क्या आने वाला है। साथ ही यह उनकी पठन गति को भी तीव्र करता चलता है। इतना ही नहीं इस विहंगम दृष्टि की सहायता से हम कथ्य की सामान्य समझ को भी और बेहतर तरीके से एकीकृत कर पाते हैं, इसीलिए बहुत से पाठकों ने यह पाया है कि जितनी जल्दी वे तीव्र-गति से पढ़ना शुरू करते हैं, उनकी ग्राह्यता भी बढ़ने लगती है और उन्हें अपने द्वारा पढ़ी जा रही सामग्री का बृहत्तर दृष्टिकोण पता लग जाता है और चूँकि वे तेज़ी से पढ़ रहे हैं, इसलिए उनकी अल्पकालिक स्मृति तुरंत पिछले पढ़े कई वाक्यों पर लौटती है और उन पढ़े गए शब्दों की उस संदर्भ में बृहत्तर समझ बनाती है।

समझ और गति को एक साथ जोड़ने में संदर्भ का महत्त्व तभी स्पष्ट हो पाएगा जब हम इस निम्नलिखित प्रसंग को पढ़ेंगे—

With hocked gems financing him, our hero bravely defied all scornful laughter that tried to prevent his scheme. "Your eyes deceive", he said. "It is like an egg, not a table". Now three sturdy sisters sought proof. Forging along, sometimes through calm vastness, yet more often over turbulent peaks

and valleys, days became weeks as many doubters spread fearful rumours about the edge. At last, from nowhere welcomed winged creatures appeared, signifying momentous success.

इस उदाहरण में प्रत्येक वाक्य पर्याप्त सरल है, व्याकरण भी इतना जटिल नहीं है और शब्द भी परिचित हैं। इन सबके बावजूद आपने पाया होगा कि आपकी पढ़ने की गति बहुत ही धीमी थी। ऐसा इसलिए है, क्योंकि आपको यह अंदाज़ा ही नहीं लग पाया कि यह गद्यांश किस संदर्भ में अपनी बात कर रहा है? और यदि आप इससे कोई सार्थक अर्थ निकाल लेते हैं तो ऐसा कई बार पढ़ने और ज़्यादा वक्त लगाकर हुआ होगा (या हो सकता है आपने पहले नीचे देखा हो), लेकिन एक बार जब आप यह जान जाते हैं कि उदाहरण अमेरिका की खोज करने वाले क्रिस्टोफ़र कोलंबस का है, तब आप इसे न केवल आसानी से पढ़ पाएँगे, बल्कि तेज़ गति से पढ़ते हुए उसे अच्छे ढंग से याद भी रख सकेंगे।

वाक्यों और शब्दों की निरर्थकता के संदर्भ में हम यह भी कह सकते हैं कि कभी-कभी पूरे पदबंध और यहाँ तक कि पूरे-पूरे वाक्य निरर्थक होते हैं। अक्सर ऐसे कही गई बात को सिर्फ़ विस्तृत कर रहे होते हैं या उसे दूसरे शब्दों में कहते हैं, हम ऐसे वाक्यों को बिना अर्थ खोए छोड़ सकते हैं। कुशल पाठक पाठ्यसामग्री में दिए गए सूत्रों-संकेतों को पकड़कर ऐसे संदर्भों, वाक्यों पर एक या दो बार सरसरी निगाह डालते हुए यह जान जाते हैं कि उन छोड़े गए वाक्यों में कोई नयी सूचना नहीं दी गई है। कई दक्ष पाठक प्रसंग/अनुच्छेद का पहला वाक्य ही पढ़ते हैं, क्योंकि प्रायः उसके पहले वाक्य में ही आगे वर्णित मुख्य विषय का संकेत रहता है। इसके बाद वे केवल एक या दो त्रुटि सुधारों के बाद उस खंड को परिधीय दृष्टि के साथ देखते जाते हैं।

इस प्रकार हम किस सीमा तक ऐसे अंशों को छोड़ सकते हैं। ये मुख्यतः पढ़ी जा रही पाठ्यसामग्री की प्रकृति पर निर्भर करता है। कई बार जटिल और संक्षिप्त प्रसंगों में यह ज़रूरी हो जाता है कि प्रत्येक पंक्ति को पढ़ा जाए। इसके विपरीत कई सामग्रियों में उनकी निरर्थकता के कारण हर अनुच्छेद को पढ़ने की भी ज़रूरत नहीं पड़ती। इस संदर्भ में सबसे महत्वपूर्ण बात है— पाठक का लचीला होना। जहाँ आवश्यकता हो वहाँ धीमी गति से पढ़ें और जहाँ सामग्री अनुमति दे और मन करे, वहाँ तेज़ गति से पढ़ें।

तीव्र-गति प्रशिक्षण

तीव्र-गति प्रशिक्षण में पाठक को पाठ्यसामग्री को उनके पढ़ने की सामान्य गति से कहीं ज्यादा तीव्र-गति से पढ़ने को बाध्य किया जाता है। प्रारंभ में पाठक को शारीरिक रूप से जितना संभव हो उतनी तेज गति से दृश्य संकेतक प्रयोग करने के लिए कहा जाता है और इस बात की चिंता नहीं की जाती कि उन्हें कितना समझ में आ रहा है। इसके बाद वह संकेतक को पंक्ति के साथ-साथ ऊपर से नीचे चलाता जाएगा। इस गति को वह हर मिनट तब तक तेज करता जाएगा, जब तक वह केवल एक सेकंड के लिए ही हर पन्ने पर रुके। इस गति से चलते हुए वह बहुत कम समझ पाएगा, लेकिन लगभग पाँच मिनट के तीव्र-गति-प्रशिक्षण के बाद जब पाठक दोबारा अपनी सामान्य गति से पढ़ेगा, तब वह पाएगा कि उसके पढ़ने की गति दोगुनी हो गई है, लेकिन वह अभी उसी या उससे बेहतर समझ के साथ ग्रहण कर रहा है।

यह प्रशिक्षण पढ़ने की पूर्व निर्धारित गति की आदत तोड़ता है। यह बिल्कुल वैसा ही है, जैसे किसी को राष्ट्रीय राजमार्ग पर काफ़ी समय तक 80 कि.मी. प्रति घंटा रफ़्तार से गाड़ी चलाने वाले के बाद गति को धीमा करके 30 कि.मी. तक लाने के लिए कहा जाए। इस पूरे उपक्रम में यदि उसे बिना गतिअवरोधक (स्पीडब्रेकर) को देखे यह करने के लिए कहा जाए तब संभवतः वह सोचेगा कि गाड़ी की गति 30 कि.मी. प्रति घंटा है, जबकि वास्तव में अभी भी वह 50 कि.मी. प्रति घंटा की गति पर चल रहा है।

इस तीव्र-गति प्रशिक्षण के दो और लाभ हैं, यह हमें पाठ के मुख्य बिंदुओं को देखने के लिए प्रोत्साहित करता है और दिमाग के दाएँ भाग को पढ़ने की प्रक्रिया में ले आता है।

जब हम तीव्र-गति प्रशिक्षण को शुरू करते हैं, तब हम किताब के हर पन्ने पर सिर्फ़ एक सेकंड ही बिता पाते हैं। सब कुछ धुँधला लगता है और कुछ भी समझ में नहीं आता, लेकिन कुछ ही देर बाद एक आश्चर्यजनक बात घटित होती है— पढ़ने की प्रक्रिया में आप पाते हैं कि वहाँ आए कुछ शब्दों को आप देख पा रहे हैं। यह अपने आप में कोई आश्चर्यजनक बात नहीं है। महत्वपूर्ण यह है कि जो शब्द चुने जा रहे हैं वे संज्ञा और क्रिया पद हैं। सचेत रूप से न पढ़ने के बावजूद इन शब्दों का चुना जाना यह दर्शाता है कि पृष्ठ पर लिखी अधिकांश सामग्री केवल एक सेकंड में हमारे मस्तिष्क द्वारा प्रक्रियायन में लाई जा रही है। पृष्ठ में से अर्थपूर्ण शब्दों को छाँट पाने की यह क्षमता उच्च गति-प्रशिक्षण से विकसित होती है। एक व्यक्ति पढ़ना सीखते समय बोल-बोलकर पढ़ना आसानी से बंद कर सकता है और बुदबुदाना छोड़ना भी इतना

मुश्किल नहीं है, लेकिन पढ़ते समय शब्द सुनने से रोक पाना कई व्यक्तियों के लिए बहुत कठिन होता है।

इस कारण उनके पढ़ने की गति 250 या कुछ और ज़्यादा शब्द प्रति मिनट तक सीमित रह जाती है। तीव्र-गति-प्रशिक्षण उनकी यह आदत छुड़वा सकता है। जब हम एक पृष्ठ पर केवल एक सेकंड ठहरेंगे, तब हमें बहुत कम शब्द सुनाई देंगे, लेकिन जब हम उन पन्नों को दृश्यात्मक रूप में लेते हैं, तब यह प्रक्रिया कई गुना तेज़ हो जाती है। इस प्रक्रिया में यह स्थानांतरण हमारे मस्तिष्क की बाईं तरफ़ होने वाली प्रक्रिया को दाईं तरफ़ ले आता है। जब हम धीमे हो जाते हैं और हमारे पढ़ने की गति सामान्य हो जाती है, तब हमारे मस्तिष्क का दायाँ हिस्सा क्रियाशील रहता है और शब्दों को दृश्यात्मक रूप में लेता रहता है। इससे हमारा पढ़ना कई गुना तेज़ हो जाता है। जब श्रवण से दृश्यात्मक पठन पर स्थानांतरण होता है तभी तीव्र-गति पठन संभव हो जाता है। सचमुच यह कहा जा सकता है कि जब तक यह स्थानांतरण नहीं होता तब तक हमने ठीक से 'पढ़ना' नहीं सीखा।

अमेरिका की नार्थवेस्ट यूनिवर्सिटी के फ़्लोरेंस शेल (Florence Schale) ने कुशल पठन की इन विभिन्न विधियों को समन्वित करके कई लोगों को इसमें प्रशिक्षण दिया है। उन्होंने पाया कि अधिकतर लोग सामान्यतः काफ़ी तेज़, यानी 2000 या उससे भी अधिक शब्द प्रति मिनट गति से पढ़ सकने में समर्थ हैं। 1500 लोगों पर किए गए एक अध्ययन में उन्होंने पाया कि 15 लोग ऐसे भी थे, जो सही प्रशिक्षण लेने के बाद प्रति मिनट 20,000 शब्द तक पढ़ सके और इस अत्यंत तीव्र-गति के साथ उनकी ग्राह्यता का स्तर भी 70 प्रतिशत अथवा उससे अधिक रहा। (70 प्रतिशत एक अच्छा प्रतिशत है— 'सामान्य' गति और 200 से 300 शब्द प्रति मिनट पढ़ने वाले शायद ही कभी इससे बेहतर कर पाते हों।) उच्चस्तरीय कौशल से युक्त पाठक पृष्ठ के मध्य में दृष्टि केंद्रित करते हुए पृष्ठ के दोनों कॉलम एक साथ पढ़ सकते हैं। वे पाठक यह दावा नहीं करते कि उनकी स्मृति 'फ़ोटोग्राफ़िक' है, परंतु उन्होंने यह ज़रूर बताया कि उन्हें मुख्य शब्द अलग से दिखाई दिए और वे इतने थे, जिससे वे अर्थ बना पाएँ। पंद्रह वर्षीय एक लड़की तो 80,000 शब्द प्रति मिनट की दर से देखने में कामयाब रही और वह भी 100 प्रतिशत समझ के साथ।¹⁴

अध्ययन में इसका प्रयोग

दो हजार या बीस हजार शब्द प्रति मिनट पढ़ पाने का कोई अर्थ नहीं है। यदि पता चले कि आधे घंटे बाद ही उसमें से 90 प्रतिशत सूचना भुला बैठे हैं, जैसा कि बुज़ान (Buzan) ने कहा है— 'पठन का अर्थ केवल यह नहीं कि सामग्री की पहचान हो जाए और उसे

आत्मसात कर लिया जाए, बल्कि पढ़ी गई सामग्री को समझना, उसका अर्थ निकालना, उसे याद रखना, समय पर उसे याद कर पाना और उसे समझा पाना भी उतना ही आवश्यक है।

अधिकांश लोग अपने द्वारा पढ़ी गई सामग्री को याद नहीं रख पाते। इसका प्रमुख कारण बचपन में उन्हें पढ़ने और याद रखने के संबंध में कोई मार्गदर्शन न मिलना है। सामान्यतः जो पद्धति अपनाई जाती है, वह ('शुरू करो और डटे रहो') 'स्टार्ट एंड स्लॉग' है। पाठक किताब का पहला पन्ना खोलता है और उसे शुरू से अंत तक पढ़ जाता है। कभी-कभी ऊबकर या थककर वह उसे बीच ही में छोड़ भी देता है, चूँकि अधिकतर किताबें पहले आवरण पृष्ठ के उलटी तरफ से शुरू होती हैं और अंतिम कवर के ठीक पहले खत्म होती हैं तो लगता भी यही है कि यह पद्धति सही है। 'एक रेखीय पद्धति' वास्तव में पाठक के समय और उसके ज्ञान को कुशलतापूर्वक उपयोग में नहीं ला पाती और उसके कई गंभीर नुकसान हैं जो निम्नलिखित हैं—

- पहले से ज्ञात सामग्री पढ़ने में समय बरबाद होता है।
- अध्ययन विशेष की दृष्टि से असंगत सामग्री पढ़ने में समय बरबाद होता है।
- पाठ के कई बड़े हिस्सों को पढ़ने में समय खराब जाता है, जबकि बाद में पता चलता है कि लेखक ने अध्याय का सार अध्याय के अंत में संक्षिप्त टिप्पणी के रूप में खुद ही दे दिया है।
- पाठ की समाप्ति तक पाठक को पूर्ण परिदृश्य ज्ञात नहीं हो पाता और कभी-कभी तो उसके बाद भी नहीं।
- संबंध बैठाने और संगठित करने में कौशल का अभाव ज़रूरत पड़ने पर, सूचना को वापस याद नहीं दिला पाता है।
- कोई भी शेष संचित सूचना अधिकांशतः अव्यवस्थित होती है। वह कभी-कभार ही पूरी किताब या पाठक के ज्ञान-भंडार से एकीकृत होती है।
- अभिप्रेरणा के अभाव में पाठक थक जाता है। वह जितना ज्यादा थकता है, उतनी कम कुशलता से पढ़ता है, उतना ही कम याद रख पाता है और उतना ही कम आगे पढ़ने के लिए प्रेरित हो पाता है।

'पठन' पर अनेक पुस्तकें लिखी जा चुकी हैं और लगभग सभी इस बात पर सहमत हैं कि किसी भी किताब को एक पूर्ण इकाई मानकर चलना चाहिए। पाठक को एक योजना और दृष्टिकोण के साथ पढ़ना शुरू करना चाहिए, ताकि उसे विषय की सामान्य जानकारी मिल सके। साथ ही उसे अपना लक्ष्य और उद्देश्य निर्धारित करके चलना चाहिए और

संगत हिस्सों का चयन तथा असंगत हिस्सों को रद्द करते हुए चलना चाहिए। पढ़ने का रेखीय तरीका बाज़ार जाकर व्यवस्थित रूप से हर गली की हर दुकान में घुसकर उसकी हर मंज़िल पर जाकर काम की चीज़ देखकर, ज़रूरत की चीज़ खरीदने जैसा है।

दूसरी ओर, संपूर्ण रूप से पढ़ना सामान्य रूप से खरीदने जैसा है। पहले जो चीज़ें चाहिए, उनकी सूची तैयार की जाती है, फिर मतलब की जगहों पर जाया जाता है। साथ में 'विंडो-शॉपिंग' करते चला जाता है, ताकि पता रहे क्या-क्या वस्तुएँ बिक रही हैं और फिर वे दुकानें चुन ली जाती हैं, जहाँ सब ज़रूरत का सामान मिलता है।

किसी भी प्रकार का अध्ययन शुरू करने में निम्नलिखित बातें उपयोगी साबित होंगी—

1. समयावधि की योजना बनाएँ— सीधे पढ़ना शुरू न करें, अपितु निश्चित करें कि क्या पढ़ना है और कितने समय में पढ़ना है।

2. विषय संबंधी अपने वर्तमान ज्ञान का पुनरावलोकन करें— इससे आने वाली सामग्री का अच्छा पूर्वानुमान हो जाएगा; जिससे सामग्री को बेहतर तरीके से याद रखने में सहायक 'मानसिक कड़ियाँ' (mental hooks) सतह पर आ जाएँ। इसका सर्वोत्तम तरीका अपने वर्तमान ज्ञान का मानसिक चित्र शीघ्र तैयार कर लेना है।

3. उद्देश्य निर्धारित करें— इससे सही मानसिक कड़ियाँ पहले ही तैयारी की स्थिति में आ जाती हैं। साथ ही यह संगत भागों के चयन और असंगत भागों को हटाने में सहायक होता है।

4. सामग्री का पूरा जायज़ा लें— इससे आपके उद्देश्य और लक्ष्य स्पष्ट हो जाते हैं और पढ़े जा रहे विषय का पूरा जायज़ा मिल जाता है। इसे 'वार्म-अप' इफ़ैक्ट (Warm-up Effect) अर्थात् तैयारी करना भी समझा जा सकता है। सामग्री का जायज़ा लेते समय पाठ को पढ़ें नहीं, अपितु इन्हें देखें—

शीर्षक एवं उपशीर्षक— ये गौण नहीं होते। इनके निहितार्थ पुस्तक के प्रति आपके दृष्टिकोण को प्रभावित कर सकते हैं।

- (i) **लेखक—** अगर इसके बारे में आप पहले ही से जानते हैं तो आपको इस बात का अंदाज़ा होगा कि पुस्तक किस स्तर पर लिखी गई है। तब आपको लेखक के संबंध में और अधिक परिचय की आवश्यकता नहीं पड़ेगी।

- (ii) *प्रकाशन तिथि*— इससे आपको पता चलेगा कि सामग्री अद्यतन (Up to Date) है अथवा नहीं। कुछ मामलों में यह जानना बहुत ज़रूरी होता है।
- (iii) *विषय-सूची*— इसे ध्यानपूर्वक पढ़ें। इससे आपको पुस्तक के ढाँचे की सामान्य जानकारी मिल सकेगी और आप जान सकेंगे कि कौन-सा भाग आपके लिए सबसे ज़्यादा महत्वपूर्ण और रुचि वाला है।
- (iv) *अनुक्रमणिका*— अनुक्रमणिका केवल गद्य विशेष को ढूँढ़ने में ही महत्वपूर्ण नहीं होती, इस पर सरसरी दृष्टि डालने से आपको इस बात का भी पूरा अंदाज़ा हो जाता है कि उसमें किन-किन विषयों का समावेश है और किसे कितना महत्व दिया गया है।
- (v) *रेखाचित्र, चित्र, ग्राफ़ और अन्य दृश्य सामग्री*— दृश्य सूचना शाब्दिक सूचना के मुकाबले बेहतर ग्रहण की जाती है और याद रखी जाती है और अक्सर पाठ के एक बड़े हिस्से का सार उपलब्ध करा देती है।
- (vi) *डस्ट-जैकेट, फ़्लैप तथा पीछे का कवर*— इनसे पुस्तक का एक वृहत चित्र बना पाने में सहायता मिलती है।
- (vii) *प्राक्कथन*— लगभग हर पुस्तक के मामले में एकदम आखिर में लिखा जाने वाला यह प्राक्कथन छोटा भी हो तो पुस्तक का सार उपलब्ध कराता है। यह पुस्तक लिखे जाने के उद्देश्य और उस विषय पर लेखक के दृष्टिकोण के बारे में महत्वपूर्ण सूचना प्रदान करता है।

पूर्वोक्त बातों को देखने में आपको शायद एक या दो मिनट का समय लगेगा, परंतु उससे कहीं ज़्यादा समय आप बचा सकेंगे। आपको यह पता चलने लगेगा कि पुस्तक का कितना अंश आपके काम का है और आप अपना समय अप्रासंगिक अंशों, दोहराए गए अंशों और पूर्वज्ञात जानकारी से संबद्ध अंशों को पढ़ने में बरबाद नहीं करेंगे। उदाहरण के लिए, यदि हैंग-ग्लाइडिंग (Hang-Gliding) आपका पुराना शौक है और आप एक पुस्तक उठाकर देखते हैं, जिसका नाम है— '*A guide to Hang-Gliding*' तो काफ़ी संभव है कि उसे एक मिनट उलट-पलटकर ही आप जान जाएँ कि उसमें आपके लिए कुछ नया नहीं है।

इस प्रकार आपने एक मिनट में एक किताब प्रभावी रूप से पढ़ी। इस पर और समय व्यतीत करने की आवश्यकता नहीं है।

5. पुनरावलोकन— निम्नलिखित बातों पर ध्यान देते हुए पुस्तक के पृष्ठ उलटें-पलटें और उसे बारीकी से जानें—

- (i) अध्यायों के शुरू और अंत के हिस्से;
- (ii) उपभागों से संबद्ध शीर्षक;
- (iii) लेखक द्वारा प्रस्तुत सारांश;
- (iv) और भी कोई चीज जो ध्यान आकर्षित करे, जैसे— मोटा प्रिंट (Bold), टेढ़े लिखे गए शब्द (Italics) आदि।

6. तीव्र-गति प्रशिक्षण का अभ्यास— सूक्ष्म अध्ययन से पहले पाँच मिनट तीव्र-गति से पढ़ने का अभ्यास अच्छा माना जाता है। यह केवल पढ़ने की 'सामान्य' गति को ही तेज नहीं करता, बल्कि मस्तिष्क के दाएँ भाग के इस्तेमाल में भी तेज़ी लाता है। तीव्र-गति प्रशिक्षण के दौरान आप अनजाने में ही पाठ का एक बड़ा हिस्सा जान चुके होंगे। यहाँ पाँच मिनट अधिक समय देकर आप बाद का एक घंटा बचा सकेंगे।

7. गहराई से अध्ययन— इस मोड़ पर आप वृहत-अवलोकन (Overview) और पूर्वावलोकन (Preview) के दौरान छूटी हुई बारीकियों पर ध्यान दें। फिर से पुस्तक को एक पूरी इकाई मानें। शुरुआत से ही पाठ्यसामग्री से जूझने से ज्यादा प्रभावी तरीका दसियों बार जल्दी-जल्दी पढ़कर समझ बना लेना है। मनोवैज्ञानिक इसे 'लैग इफ़ैक्ट' (lag effect) कहते हैं। देखा गया है कि एक ही बैठक में पाठ कई बार दोहरा लेने पर उसे याद रखना आसान होता है और दोहराई गई प्रस्तुतियाँ अगर कुछ अंतराल के बाद हों तो बराबर याद रखी जा सकती हैं।¹⁵ साथ ही कठिन अनुच्छेद भी आगे वाले भागों के आधार पर सही समझ में आने लगते हैं। दूसरे यह भी हो सकता है कि मस्तिष्क अनजाने में उस तर्क पर काम करता चले और बाद में सहज रूप से उसकी समझ पा ले। यहाँ लचीलापन अपनाना अत्यंत आवश्यक होगा। अलग-अलग पुस्तकों के मामले में अलग-अलग पद्धति अपनानी पड़ती है।

8. चिह्नित और रेखांकित करना— अधिकांश लोगों की झिझक के बावजूद पुस्तक को रेखांकित करने के अनेक फ़ायदे हैं। बाद में मुख्य बातें लिखने के लिए यदि पुस्तक आपकी अपनी नहीं है तो 'सॉफ़्ट' लैड (Soft Lead) वाली पेंसिल इस्तेमाल करें, ताकि बाद में उसे रबड़ से मिटा सकें, और बाद में किसी को पता नहीं चलेगा। किताब आपकी अपनी है

तो अलग-अलग रंगों में पाठ रेखांकित करने में न झिझकें, इससे याद रखना आसान होता है और भिन्न-भिन्न विषयों और प्रसंगों को अलग करने में सहायता मिलती है।

पाया गया है कि महत्वपूर्ण शब्दों को रेखांकित करने या अन्य किसी तरीके से अधिक ध्यानाकर्षक बनाने से विद्यार्थियों के प्रदर्शन में वृद्धि होती है और सामान्य पठन की तुलना में उनकी अल्पकालिक और दीर्घकालिक समझ बेहतर होती है।¹⁶ पढ़ते समय अंशों को नियमपूर्वक रेखांकित करते चलने वाले विद्यार्थी ऐसा न करने वाले विद्यार्थियों के मुकाबले, पुनःस्मरण में कई ज़्यादा अंक प्राप्त करते हैं।¹⁷

9. छोड़-छोड़कर पढ़ने को तैयार रहें

इन भागों को छोड़ते चलें जो—

- (i) अप्रासंगिक हों;
- (ii) पहले से ज्ञात हों;
- (iii) उसी बात को विस्तार देते हों;
- (iv) दोहराते हों;
- (v) पुराने पड़ चुके हों;
- (vi) उदाहरणों की अधिकता लगते हों।

झूठे तर्कों से भी बचकर चलें। *Straight and Crooked Thinking*¹⁸ नामक पुस्तक में रॉबर्ट थॉलैस ने ऐसी 38 असत्य युक्तियाँ बताई हैं, जिनसे बचना चाहिए। इनमें से कुछ प्रमुख युक्तियाँ हैं—

- (i) पाठक को पक्ष में लाने हेतु भावात्मक शब्दों का इस्तेमाल;
- (ii) किसी तर्क को स्थापित करने के लिए विख्यात लोगों के शब्द उद्धरित करना;
- (iii) विरोधियों के तर्कों के बजाय स्वयं उन्हें ही नीचा दिखाना;
- (iv) विशेष से सामान्य पर जाना
- (v) अव्याख्यायित स्रोत;
- (vi) साम्यानुमान द्वारा साबित करना;
- (vii) आँकड़ों का दुरुपयोग।

10. नियमित अंतरालों पर अल्पावकाश लें— हर तीस या चालीस मिनट के बाद पाँच मिनट का अवकाश पाठ्यसामग्री को धारण करने की क्षमता बढ़ाता है। अच्छे पठन

के दौरान भी यह बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। जो हमें अच्छी तरह से समझ आया है, ज़रूरी नहीं कि उसे उतनी ही अच्छी तरह से हम याद रख सकें। छोटे-छोटे अल्पविरामों के बाद पिछले हिस्सों पर नज़र डालनी चाहिए। यह हमें उस सामग्री को ज़्यादा समय तक याद रखने में सहायक सिद्ध होता है। अवकाशों के दौरान आराम करें। विशेषकर हमारी आँखों को इसकी बहुत आवश्यकता होती है। अपनी आँखों को हथेलियों से दबाकर थोड़ी देर के लिए ढककर रखना चाहिए। ऐसा करने से हमारी आँखों को आराम मिलता है और वे फिर से ताज़ा महसूस करती हैं।¹⁹

11. माइंड मैप बनाएँ— माइंड मैप (Mind Map) ग्राह्यता और ज्ञान के एकीकरण को बढ़ा देते हैं। इन्हें बनाना नोट बनाने के परंपरागत तरीकों से काफ़ी तीव्र और आसान है। इन्हें याद रखना भी काफ़ी आसान और मज़ेदार है। किताब को पूरा पढ़ लेने के बाद पाँच मिनट का अवकाश लें; अब किताब को एक बार देखते हुए संपूर्ण व्यवस्थित नोट्स बनाएँ; जहाँ तक संभव हो उन संबंधित बिंदुओं को अपने पूर्वज्ञान से जोड़कर देखें। नोट्स बनाते समय रंग, कल्पना, अमूर्तता, आउट लाइन का प्रयोग कर उन्हें और स्मरणीय बनाएँ।

12. पुनरावलोकन— नियमित पुनरावलोकन हमारी स्मृति को सुदृढ़ करता है। व्यवस्थित माइंड मैप इस तरह का पहला पुनरावलोकन है और इसका अधिकतम उपयोग हमारे अतीत की स्मृति को प्रभावित करता है। यह सामग्री को एकीकृत करने और इसका सामान्य परिप्रेक्ष्य देने में सहायक होता है। इस पैटर्न को एक दिन, एक हफ़्ते, एक महीने और छह महीने के अंतराल पर दोहराकर पुनरावलोकन करना चाहिए। ऐसा करने से हमें लगभग सब कुछ याद रह सकता है।

इन ‘माइंड मैपों’ का उपयोग करना पुनरावलोकन का सबसे बढ़िया तरीका है। अध्ययन सत्र समाप्त होने पर यदि आपने माइंड मैप बनाना शुरू न किया हो तो दृश्यात्मक रूप से वृहत नोट्स बनाना बेहतर होता है।

माइंड मैप बनाना पुनरावलोकन की पहली प्रक्रिया कहा जा सकता है और जब यह बनकर तैयार हो जाते हैं, तब तक बहुत सारी बातें हमारी स्मृति में पहले से ही बैठ चुकी होती हैं। आगे के पुनरावलोकनों में संरचनाओं (Patterns) को मानसिक रूप से दोहराते हुए यह जाँच लेना काफ़ी होता है कि हमें अभी भी सब याद है या नहीं। अस्पष्टता की स्थिति में हम संरचनाओं की पुनः सहायता ले सकते हैं।

पुनरावलोकनों को एकीकृत करने के लिए, माइंड मैप को फ़ाइल में रखना चाहिए। हर मैप पर अगले पुनरावलोकन की तारीख लिखकर उसे क्रमबद्ध रखना चाहिए। प्रतिदिन फ़ाइल के ऊपरी सिरे को देखें कि कहीं पुनरावलोकन के लिए कुछ है। एक बार पुनरावलोकन होने के बाद उस पर अगले पुनरावलोकन की तारीख लिख उसे क्रमानुसार रख देना चाहिए। इस तरह, समय आने पर पैटर्न अपने आप ऊपर आ जाएगा।

अगर इन संरचनाओं को विषयवार फ़ाइल में लगाया गया है तो उन सारी फ़ाइलों को नियमित रूप से देखिए कि कहीं कोई संरचना पुनरावलोकन के लिए बाकी तो नहीं रह गई है।

अध्ययन की सर्वोत्तम परिस्थितियाँ

तापमान

अधिकांश केंद्रीय ताप संयंत्र (Central Heating System) कमरे का तापमान 68 से 70 डिग्री फ़ारेनहाइट के बीच रखते हैं। यह संभवतः शरीर के लिए आरामदायक स्थिति है, जिसमें एक कमीज़ या सूती कपड़े में काम किया जा सकता है, लेकिन यह तापमान मस्तिष्क के लिए थोड़ा अधिक है। हमारा मस्तिष्क 65 डिग्री फ़ारेनहाइट (18°C) के तापमान पर सबसे बेहतर काम कर सकता है, यदि आप इससे अधिक तापमान में कार्य करने के अभ्यस्त हों तो आप कुछ और कपड़े पहन सकते हैं, पर यह मानसिक स्पष्टता बढ़ने के संदर्भ में लाभकारी होगा।

प्रकाश

मनुष्य की आँखें आश्चर्यजनक रूप से अनुकूलन करने में सक्षम हैं। ये अपने आपको करोड़ों परतों की तीव्रता में बदलाव के साथ ढाल लेती हैं। एक बार जब आँखें अनुकूलित हो जाती हैं, तब वे चमकते सूरज की रोशनी में या धीमी मद्धिम मोमबत्ती के प्रकाश में भी पढ़ सकती हैं। आँखों पर ज़्यादा तनाव पड़ने से बचने के लिए, दिन की तेज़ रोशनी से छायादार स्थान या रात में बल्ब की रोशनी में पढ़ने का सुझाव दिया जाता है।

दिन का प्राकृतिक प्रकाश कृत्रिम प्रकाश से ज़्यादा बेहतर है। इसमें दृश्यात्मक स्पेक्ट्रम का विस्तार होता है, जिससे पढ़ना आरामदायक बनता है। कृत्रिम प्रकाश में असंतुलित स्पेक्ट्रम होता है और फ़्लोरोसेंट प्रकाश के कुछ प्रकार तो एक तरंगदैर्घ्य तक सीमित होते हैं।

दिन की रोशनी का एक और लाभ यह है कि वह विसृत प्रदीपन उपलब्ध कराती है। अगर हम सूरज की सीधी रोशनी में काम कर रहे हों तब प्रकाश चारों तरफ से आता है और पृष्ठ पर कोई परछाई नहीं बनती। अगर हो सके तो खिड़की बाईं तरफ होनी चाहिए (दाएँ हाथ से काम करने वालों के लिए), जिससे काम करते हुए हाथ की परछाई कागज पर न पड़े। खिड़की के ठीक सामने बैठना उचित नहीं है, क्योंकि हर बार खिड़की से बाहर देखने पर आँखों को तीव्रता से प्रकाश की बदलती सघनता से समायोजन करना पड़ता है। जिससे आँखों पर तनाव बढ़ता है।

इसी प्रकार कृत्रिम प्रकाश में भी जितना संभव हो सके विसृत (Diffuse) प्रकाश में पढ़ना चाहिए। कृत्रिम प्रकाश में जहाँ तक संभव हो सीधी रोशनी में पढ़ने के बजाय, दीवार या छत से परावर्तित विसृत प्रकाश में पढ़ना चाहिए। ऐसा करने से हमें एक समरूप प्रकाश मिलता है और मेज़ पर रखी किसी चमकदार वस्तु के प्रतिबिंब से बचा जा सकता है। यदि स्पाटलाइट्स (Spotlights) का प्रयोग किया जा रहा है तो उन्हें समान्य रूप से उपलब्ध प्रकाश के साथ किया जाना चाहिए। एक स्पाटलाइट का प्रयोग हमें पृष्ठ पर ध्यान केंद्रित करने में सहायक तो होता है, पर वह आँखों के लिए अच्छा नहीं होता। यह मेज़ पर असमान प्रकाश को उत्पन्न करती है, जिससे हर बार दूर देखने पर प्रकाश की बदलती सघनता में उजाले से अँधेरे की तरफ समायोजित होना पड़ता है।

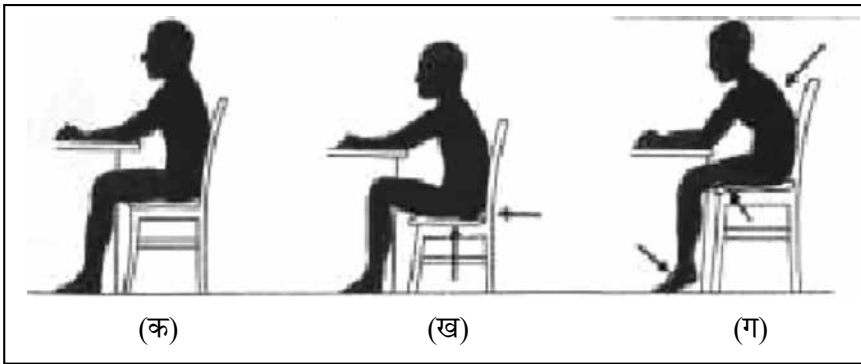
बैठने का तरीका

यदि आप अभ्यस्त नहीं हैं तो बिल्कुल सीधी पीठ के साथ बैठना पीठ दर्द का कारण बन सकता है। कुर्सी की ऊँचाई इतनी होनी चाहिए कि आपकी आँखें लंबवत हों और घुटने से नीचे के पैर उससे और पैर सीधे हों, फर्श पर टिक सकें।

अगर कुर्सी की ऊँचाई ज्यादा होगी तो कुर्सी का किनारा पैर पर दबाव डालेगा, जिससे रक्त का संचार बाधित होगा। अगर कुर्सी ज्यादा नीची होगी तो जाँघें उठ जाएँगी और शरीर के वजन से जाँघों के ऊपर दबाव पड़ेगा, जिससे थकान होगी। इसका मतलब यह नहीं है कि कुर्सीयाँ हमारे हिसाब से बनाई जाएँ। केवल गद्दी या 'फुटेरेस्ट' (एक ऐसा छोटा स्टूल जिस पर पैर रखकर उन्हें आराम दिया जा सकता है।) का प्रयोग पर्याप्त होता है।

मेज़ की ऊँचाई पर भी ध्यान देना चाहिए। अगर वह बहुत नीची होगी तो कंधे झुक जाएँगे, जिससे पीठ में दर्द और तनाव होगा। अगर वह बहुत ऊँची होगी तब आपके बाजू उठ जाएँगे, जिसके कारण कंधे में दर्द होगा।

इस तरह, बृहत्तर अर्थों में पठन केवल शब्दों की पहचान और उन्हें एक साथ रखकर वाक्य बनाना नहीं है। इसे दक्षतापूर्ण बनाने की भी ज़रूरत है। हमें ज़रूरत पड़ने पर तेज़ गति से पढ़ना, बेहतर समझ बनाकर, उसे याद रखकर आवश्यकतानुरूप दीर्घकाल में उसका उपयोग करना आना चाहिए। यदि हम पठन पर व्यतीत किए गए समय का अधिकतम उपयोग करना चाहते हैं तो हमें पठन की क्रिया के साथ-साथ इस बात पर भी ध्यान देना होगा कि हम कब और कहाँ पढ़ रहे हैं।



आकृति 7.6 — बैठने के तरीके — (क) सही (ख) गलत (ग) गलत (प्रतिबल बिंदुओं को तीरों द्वारा दर्शाया गया है।)

पाठानुसार टिप्पणी

1. टोनी बुजान. 1974. यूज योर हेड. बीबीसी पब्लिकेशन्स, लंदन. पृष्ठ 25. इन अमेरिका, द बुक इज इन्टाइटल्ड यूज बोथ साइड्स ऑफ़ योर ब्रेन (न्यूयॉर्क-ई. पी. डटन, 1977).
2. एडमंड. हे. 1908. द साइंस पेडागॉजी ऑफ़ रीडिंग रिप्रिन्ट एडि., कैम्ब्रिज, मास-एमआईटी प्रेस, 1968.
3. ई.ए. टेलर. द स्पैन्स-पर्सपेक्शन एप्रिहेन्सन. एंड रिकॉग्निशन, अमेरिकन जर्नल ऑफ़ आप्थालमोलॉजी. वॉल्यूम 44, पृष्ठ 501-507.
4. जी. जेफोन, जे.एल. ब्रैडशॉ एंड जी. वैलेस. इन्टर हेमिस्फेरिक इफेक्ट्स ऑन रिएक्शन टाइम टू वर्बल एंड नॉन वर्बल विजुअल स्टिमुली. जर्नल ऑफ़ एक्सपेरिमेंटल साइकॉलॉजी वॉल्यूम 87, पृष्ठ 415-422.
5. मार्टिन अल्बर्ट. सेरेब्रल डोमिनेन्स एंड रीडिंग हैबिट्स. नेचर, पृष्ठ 256-403.
6. जी.ए. मिलर. डिस्सीजन यूनिट्स इन द पर्सपेक्शन ऑफ़ स्पीच. इन्स्टीट्यूट ऑफ़ रेडियो इंजीनियरिंग ट्रांसमिशन आन इन्फार्मेशन थ्योरी. वॉल्यूम 8, पृष्ठ 81-83.

7. ई.ई. स्मिथ एंड के टी स्पोयेर दि पर्सप्शन ऑफ़ प्रिन्टेड इंग्लिश- ए थ्योरिटिकल पर्सपेक्टिव इन ह्यूमन इनफोर्मेशन प्रोससिंग. ईडी एन एच कैन्टोवित्ज (हिलस्डेल एन जे.-लॉरेंस एरिबॉम असोसिएशन 1974). पृष्ठ 235.
8. जे.एम. कैटल. *टाइम टेकन अप बाय सेरेब्रल ऑपरेशन*. माइंड 11, पृष्ठ 220-242.
9. हे. साइन्स एंड पेडागॉजी ऑफ़ रीडिंग. पृष्ठ 74.
10. Ibid
11. जॉन जे. गियर. *एन आई मूवमेन्ट मेजर ऑफ़ रीडिंग एफिशिएन्सी*. इन रीडिंग: प्रोसेस एंड पेडागॉजी, एडि. जी.बी. शिक एंड एम. एम. में मिलवॉकी, विस्क.-नेशनल रीडिंग कांफ्रेंस, 1970, पृष्ठ 168-171.
12. टोनी बुजान. *इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका एनुअल कॉन्फ्रेंस*, विथना, 1977.
13. शिमट. बी. 1969. *चेन्जिंग पैटर्न्स ऑफ़ आई मूवमेंट एमंग स्टूडेंट्स इन रीडिंग क्लासेज एंड कंपोजिशन-लिटरेचर क्लासेज*, इन *द साइकॉलॉजी ऑफ़ रीडिंग बिहेवियर* एडि. जी.बी. शिक एंड एम.एम. मे (मिलवॉकी, विस्कॉन्सिन, नेशनल रीडिंग कॉन्फ्रेंस) पृष्ठ 38-41.
14. फ्लोरेन्स, सी. स्केल. *टू गिफ्टेड रीडर्स—अ प्रिलिमिनरी स्टडी इन साइकोलॉजी ऑफ़ रीडिंग बिहेवियर*, एडि. शिक एंड मे. पृष्ठ 282-289.
15. एल. आर. पीटरसन. 'शार्ट टर्म वर्बल मेमरी एंड लर्निंग'. *साइकोलाजिकल रिव्यू*, वॉल्यूम 73, पृष्ठ 193-207.
16. डी.जे. विलमोर. 1966. *ए कंपॅरिजन ऑफ़ फ़ोर मैथड्स. ऑफ़ स्टडिंग अ कॉलेज टेक्स्टबुक* (पीएचडी डिजर्टेशन, यूनिवर्सिटी ऑफ़ मिनसोटा.)
17. ई. के. एडम्स. *अंडरलाइनिंग: द ग्राफ़िकल ऐड टू कॉलेज रीडिंग*. इन *रीडिंग—प्रोसेस एंड पेडागॉजी*, एडि. शिक एंड मे. पृष्ठ 12-22.
18. रॉबर्ट, थॉलेस. 1974. *स्ट्रेट एंड क्रुक्ड थिंकिंग*. पैन बुक्स, लंदन.
19. डब्ल्यू. एच. बेट्स. 1940. *बेटर आईसाइट विदाउट ग्लासेस* (होल्ट, राइनहार्ट एंड विंस्टन) न्यूयार्क.

8. पढ़ना किसे कहते हैं?

—रिचर्ड सी. एंडरसन^(क)

एलफ्रीडा एच. हीबर्ट^(ख)

जूडिथ ए. स्कॉट^(ग)

ए.जी.विल्किंसन^(घ)

लगभग पिछले बीस सालों में पढ़ने की प्रक्रिया को लेकर हमारी समझ काफ़ी पुख्ता हुई है। पढ़ने की वास्तविक प्रकृति कैसी है— इस पर विद्वानों में अब काफ़ी सहमति है। पढ़ना लिखित सामग्री से अर्थ-निर्माण की प्रक्रिया है। यह एक अत्यंत जटिल कौशल है, जिसमें अनेक प्रकार की क्षमताओं का निरंतर संवाद होता रहता है।

पढ़ने की तुलना ऑर्केस्ट्रा की एक मधुर सिंफ़नी के साथ की जा सकती है, जिसमें कई वाद्ययंत्र एक साथ बजते हैं। इस तुलना से तीन बातें स्पष्ट होती हैं। पहली, एक सिंफ़नी की ही तरह पढ़ना भी एक समग्र प्रक्रिया है, यानी हम पढ़ने की प्रक्रिया को छोटे-छोटे कौशलों में बाँट तो सकते हैं पर किसी भी एक कौशल में हुनर हासिल करने से पढ़ना नहीं आ जाता। आप यदि वर्णमाला जानते हैं और शब्दों को सही पहचान पाते हैं तो केवल इनसे ही आप सही मायने समझ नहीं सकते। पढ़ना तभी संभव होगा जब पढ़ने से जुड़े सारे कौशल एक-दूसरे से संवाद करते हुए एक साथ काम करें, जैसे— सिंफ़नी में वाद्ययंत्र (आप ही बताइए कि यदि संगीत सुनते समय तानपुरा, सितार या तबला बेसुरा हो जाए तो आपको कैसा लगेगा?)।

दूसरी बात, जैसे संगीत के लिए अभ्यास आवश्यक है, वैसे ही पढ़ने के लिए भी अभ्यास आवश्यक है। जैसे संगीत सीखने में पूरी उम्र लग जाती है, पढ़ना सीखने में ठीक उसी तरह भी पूरी उम्र लग जाती है। तीसरी बात, एक सिंफ़नी की ही तरह किसी भी पाठ्यसामग्री के कई अर्थ हो सकते हैं। किसी कहानी-कविता या संवाद का कोई क्या अर्थ ग्रहण करेगा यह पढ़ने वाले की पृष्ठभूमि, पढ़ने के उद्देश्य व उस संदर्भ से निर्धारित होता है, जिसमें वह सामग्री पढ़ी जा रही है।

(क) डायरेक्टर, सेंटर फ़ॉर दि स्टडी ऑफ़ रीडिंग एंड प्रोफ़ेसर ऑफ़ एजुकेशन एंड साइक्लॉजी, यूनिवर्सिटी ऑफ़ इलेनॉय्स

(ख) कंटली एंड एंडजन्ट प्रोफ़ेसर एवं दि यूनिवर्सिटी ऑफ़ कैलिफ़ोर्निया, बर्कले

(ग) प्रिंसिपल इन्वेस्टिगेटर ऑफ़ दि वी आई एन ई प्रोजेक्ट सांता क्रूज एसोसिएट प्रोफ़ेसर, ऑफ़ डॉक्टरल प्रोग्राम्स-एजुकेशन डिपार्टमेंट यूनिवर्सिटी ऑफ़ कैलिफ़ोर्निया, सांता क्रूज

(घ) कंटली ओहिओ स्टेट यूनिवर्सिटी एसोसिएट प्रोफ़ेसर, लेंग्वेज लिटरेसी एंड कल्चर, एसोसिएट प्रोफ़ेसर, स्कूल ऑफ़ टीचिंग एंड लर्निंग

आखिर पढ़ने की प्रक्रिया क्या होती है? एक आम अवधारणा है कि पढ़ने की प्रक्रिया में शब्दों का उच्चारण अर्थ की ओर ले जाता है। शब्दों के अर्थों से मिलकर उपवाक्य व वाक्यों के अर्थ बनते हैं और वाक्यों के अर्थों को जोड़कर पूरे संवाद का अर्थ समझ में आ जाता है। इस अवधारणा के अंतर्गत यह माना जाता है कि बच्चे सबसे पहले अक्षर को पहचानकर शब्दों व वाक्यों को पहचानते हैं और इस तरह 'ईंट पर ईंट' रखकर अर्थ तक पहुँचते हैं, परंतु अब शोध ने सिद्ध कर दिया है कि शायद यह बात केवल आंशिक रूप से ही ठीक है।

अक्षरों व शब्दों की जानकारी के साथ-साथ पढ़ने के लिए यह भी आवश्यक है कि किसी भी पाठ के साथ संबंधित लोगों, स्थानों व वस्तुओं के बारे में भी ज्ञान सँजोया जाए। यही नहीं पाठ्यसामग्री की रचना व गठन के बारे में भी समझ बनाना आवश्यक है। एक पाठ्यसामग्री कोई अर्थ के बर्तन जैसी नहीं होती। वास्तव में, उसमें आंशिक रूप से कुछ अर्थ व जानकारी होती है जिसका प्रयोग पाठक इसलिए करता है कि वह अपने पूर्व-ज्ञान से जोड़कर उस सामग्री के वास्तविक अर्थ तक पहुँच सके।

पढ़ना उस प्रक्रिया का नाम है जिसमें पाठ्यसामग्री से मिलने वाली जानकारी व पाठक के पूर्व-ज्ञान में निरंतर एक संवाद चलता रहता है। इस संवाद को हम एक उदाहरण की मदद से और बेहतर समझ सकते हैं—

जब मेरी रेस्टोरेंट पहुँची तो दरवाजे पर खड़ी महिला ने उसका अभिनंदन किया और उसका नाम अपनी लिस्ट पर जाँचा। कुछ ही मिनटों में मेरी को उसकी मेज़ तक पहुँचाया गया और उसे उस दिन का मीनू दिखाया गया। खाना परोसने वाला उखड़ा-उखड़ा-सा था, यहाँ तक कि असभ्य भी। बाद में, मेरी ने महिला को पैसे दिए और चल दी।'

पाठक को पहली पंक्ति में ही अहसास हो जाएगा कि उसका 'रेस्टोरेंट' के बारे में सारा पूर्व-ज्ञान यहाँ पर प्रासंगिक होगा। यानी, 'रेस्टोरेंट' पढ़ते ही उससे जुड़ी वे सारी यादें व अनुभव और उनके आपसी संबंध उभर आते हैं जो 'रेस्टोरेंट' से संबंधित हैं। फिर पढ़ना काफ़ी सरल हो जाता है। अपने पूर्व-ज्ञान पर आधारित हमारी कुछ अपेक्षाएँ बन जाती हैं। दरवाजे पर खड़ी महिला निश्चित ही परिचारिका होगी, मेहमानों का स्वागत करने वाली। खाने से पहले मेरी को एक मेज़ पर बैठना ही है। खाना परोसने वाला कोई 'वेटर' होगा और पैराग्राफ़ के अंत में जाने वाली महिला 'मेरी' ही होगी। इन सब अनुमानों पर पहुँचने के लिए यह आवश्यक है कि हम पाठ्यसामग्री में दी गई जानकारी व अपने पूर्वज्ञान का प्रयोग करें।

प्रवीण पाठक अपने पूर्वज्ञान व पाठ्यसामग्री में निहित जानकारी का सामंजस्य कुशलता से करते हैं, लेकिन अपरिपक्व पाठक या तो अधिकतर अक्षरों व शब्दों में ही उलझकर रह जाते हैं या फिर अपने पूर्व-ज्ञान में ही उलझे रहते हैं।²

कुछ बच्चे तो बहुत ही उदासीन मन से श्रम करते हुए हिज्जे जोड़-जोड़कर पढ़ने का प्रयास करते हैं (जैसे— ‘म्’ में ‘ए’ की मात्रा ‘मे’, ‘र्’ में ‘ई’ की मात्रा ‘री’ ...मेरी, आदि)। वे इतनी गहराई से शब्दों के ‘सही’ उच्चारण में खो जाते हैं कि अर्थ के विभिन्न पक्षों का तो उन्हें कोई ध्यान ही नहीं रहता। ये बच्चे पढ़ते वक्त बहुत ही अजीबो-गरीब त्रुटियाँ करते हैं, जैसे— *दरवाजे पर खड़ी परिया ने उसका अभिनंदन किया और उसका नाम अपनी स्लेट पर जाँचा*।³ कई बार ये बच्चे अपने पूर्व-ज्ञान का प्रयोग पाठ्यसामग्री को पढ़ने के लिए नहीं कर पाते।

दूसरे अपरिपक्व पाठक अपने पूर्वज्ञान पर ही अधिक निर्भर रहते हैं। ये बच्चे तसवीरों, शीर्षकों, कल्पनाओं एवं पाठ्यसामग्री में छुपी छुट-पुट जानकारी के आधार पर ही एक ऐसी कहानी बना देते हैं जो ठीक ही लगने लगती है।⁴ उदाहरण के लिए— *फिर न मेरी... एक पीट्जे की दुकान पर पहुँची। वह दरवाजे पर गई और उसने अपनी सहेली का अभिनंदन किया। फिर वह अपनी कुर्सी पर बैठ गई, और उसने बड़े मजे से एक पीट्जा खाया।* इन बच्चों में वह क्षमता ही विकसित नहीं हो पाती, जिससे शब्द व वाक्य पहचाने जा सकें और पूरे पाठ का अर्थ समझा जा सके।

पिछले दशक में हुए शोध के आधार पर पढ़ने की प्रक्रिया के बारे में पाँच निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं—

पहला निष्कर्ष

‘पढ़ना’ एक रचनात्मक गतिविधि है। कोई भी पाठ्यसामग्री अपनी पूरी बात स्वयं नहीं समझा देती, यानी पूरी बात उसी में निहित नहीं रहती है। किसी भी पाठ्यसामग्री को समझने के लिए पाठक पाठ्यसामग्री के विषय के बारे में अपने पूर्वज्ञान का उपयोग करते हैं। पाठक इस पूर्वज्ञान का उपयोग पाठ्यसामग्री में निहित संदेश की अपूर्तियों को पूरा करने व उसमें दी गई नयी जानकारियों को संजोने में करते हैं, यानी पाठक स्वयं अर्थ का ‘निर्माण’ करते हैं। रेस्टोरेंट वाले उदाहरण में पाठक यह स्वयं समझ लेता है कि मेज़ पर बैठने वाली महिला ‘मेरी’ ही है, उसने होटल के मीनू से अपने खाने को चुना होगा और किसी वेटर ने उसे खाना लाकर दिया होगा— ये सब बातें पाठ्यसामग्री में कही नहीं गई हैं। इन सब जानकारियों का निर्माण पाठक स्वयं करते हैं।

पूर्वज्ञान में अंतर होने के कारण पाठकों के ‘अर्थ-निर्माण’ में काफी विविधता रहती है।⁵ कुछ लोगों में इतना पूर्वज्ञान होता ही नहीं कि वे पाठ्यसामग्री को समझ सकें या वे अपने

पूर्वज्ञान का उचित उपयोग ही नहीं करते हैं। अक्सर बात समझने में विविधता इसलिए पैदा होती है, क्योंकि विषय के बारे में लेखक व पाठक की अवधारणाएँ अलग-अलग होती हैं।

यह संभव है कि कुछ बच्चों को विषय के बारे में कोई भी समझ ना हो, कुछ थोड़ा बहुत जानते हों और कुछ बहुत कुछ जानते हों। आधुनिक शोध से पता चलता है कि ज्ञान के बारे में इस तरह की विविधता के कारण किसी भी पाठ्यसामग्री को समझने में बच्चों में काफ़ी अंतर आ जाता है। उदाहरण के लिए, एक शोध में दूसरी कक्षा के बच्चों को, जिनकी पढ़ने की क्षमता बराबर थी, मकड़ियों के बारे में एक पाठ पढ़ाने से पहले मकड़ियों पर उनका पूर्वज्ञान जाँचने के लिए एक टेस्ट लिया गया।⁶ बाद में उनसे मकड़ियों पर दी गई पाठ्यसामग्री के बारे में प्रश्न पूछे गए। जो बच्चे मकड़ियों के बारे में जानते थे उनके परिणाम प्रश्नों के उत्तर देने में कहीं अधिक अच्छे थे, खासकर उन प्रश्नों में जिनमें तार्किक क्षमता की आवश्यकता थी।

शोध से पता लगता है कि बच्चे कई बार अपने पूर्वज्ञान का उपयोग नहीं कर पाते, खासकर स्कूली शिक्षा की परिस्थितियों में।⁷ उन्हें कुछ उचित जानकारी हो सकती है पर वे पाठ्यसामग्री को समझने के लिए उसका प्रयोग नहीं कर पाते। इस तरह की सफलताएँ उन परिस्थितियों में होती हैं, जहाँ बच्चों से यह उम्मीद की जाती है कि वे अपने पूर्वज्ञान का इस्तेमाल नयी-नयी परिस्थितियों में काम लाएँ। एक बच्चे और एक वयस्क के समझने में एक छोटा-सा अंतर भी देखने पर ऐसा लग सकता है कि बच्चे को पाठ्यसामग्री बिल्कुल समझ नहीं आई।

दूसरा निष्कर्ष

‘पढ़ना’ सही मायने में धाराप्रवाह होना चाहिए। धाराप्रवाह रूप से पढ़ने का आधार है— शब्दों की पहचान। अंग्रेज़ी एक वर्णमाला आधारित भाषा है, इसलिए शब्दों व हिज्जों में एक लगभग नियमित संबंध रहता है। हर पढ़ना सीखने वाले को उस ‘कोड’ को आत्मसात करना पड़ता है, जिससे हिज्जों, शब्दों व अर्थों में संबंध स्थापित हो सके। आधुनिक शोध ने यह सिद्ध कर दिया है कि इससे कोई विशेष अंतर नहीं पड़ता कि आप बच्चों को पढ़ना सिखाने के लिए आरंभ में कौन-से तरीके इस्तेमाल करते हैं। समझकर पढ़ने के कौशल में वही बच्चे आगे निकलते हैं, जो प्रथम कक्षा में शब्दों को सही व तीव्रता से पहचानने लगते हैं।⁸

किसी शब्द को 'डिकोड' करना, यानी उसके उच्चारण व अर्थ को पहचानना, हिज्जों को पहचानने से काफ़ी अलग बात है। 19वीं सदी से हमें मालूम है कि छोटे-छोटे जाने-पहचाने शब्द उतनी ही तीव्र-गति से पढ़े जा सकते हैं, जितने कि वर्णमाला के अक्षर। कुछ हालात में तो शब्द तब भी पहचाने जाते हैं, जबकि हिज्जों पर आपका कोई ध्यान ही न हो।⁹ ये बातें संभव ही नहीं यदि शब्द पहचानने के लिए हिज्जों में विश्लेषण करना एक आवश्यक शर्त हो। हाल ही में यह भी सिद्ध करके दिखा दिया गया है कि सार्थक संदर्भ शब्द-पहचानने की प्रक्रिया में बहुत मदद करते हैं।¹⁰ उदाहरण के लिए, 'नर्स' शब्द आसानी से पहचाना जा सकता है यदि 'डॉक्टर' शब्द उसके आस-पास हो। इन सब बातों का, इस आम मान्यता कि 'शब्द पहचानने का अर्थ है— 'हिज्जे-हिज्जे कर पढ़ना', से कोई तालमेल नहीं बैठता है।

पढ़ने के बारे में हमें आज जो भी बातें मालूम हैं, वे आधुनिक पढ़ने के मॉडल पर पूरी तरह से खरी उतरती हैं।¹¹ इस मॉडल के अनुसार किसी भी शब्द की एक संभव व्याख्या दिमाग में उसी वक्त बननी शुरू हो जाती है, जैसे ही हमारी नज़र उस पर पड़ती है और उसके बारे में कुछ सूचना हमारे दिमाग तक पहुँचती है। हिज्जों में बँधी शेष जानकारी से यह व्याख्या और पुष्ट होती है। जब संदर्भ व हिज्जों से पर्याप्त जानकारी हासिल हो जाती है, तो एक संभावित व्याख्या एक निश्चित पहचान बन जाती है। यह सब अत्यंत तीव्र-गति से होता है, औसतन एक कुशल पाठक के लिए, 250 मिली सेकंड में।¹²

पाठकों में तीव्र-गति से शब्दों को 'डिकोड' करने की क्षमता होना आवश्यक है। तभी वे इस प्रक्रिया का किसी भी पाठ्यसामग्री के अर्थ-निर्माण की प्रक्रिया के साथ तालमेल बिठा सकते हैं। इसका एक प्रमाण यह है कि कुशल पाठक किसी भी ऐसे मनगढ़ंत शब्दों के, जिसके हिज्जे ठीक-ठाक लगें, बहुत तीव्र-गति से उच्चारण कर पाते हैं, जैसे कि अंग्रेज़ी में 'Tob' या 'Jate'।¹³ जिन लोगों की पढ़ने की क्षमता लगभग 11-12 साल के बच्चे की होती है, वे इस तरह के मनगढ़ंत शब्दों को पढ़ने में कोई गलती नहीं करते हैं। कुशल व साधारण पाठकों को इस स्थिति में जो बात अलग करती है वह है, तीव्र-गति न कि शुद्धता। इससे यह बात समझ आती है कि साधारण पाठकों ने हिज्जों व उच्चारण का पैटर्न पकड़ लिया है, परंतु कुशल पाठकों में यह कौशल पैटर्न से कहीं आगे एक स्वचालित प्रक्रिया तक पहुँच चुका है।

ध्यान देने योग्य बात यह है कि कुशल पाठक अपरिचित शब्दों को उन नियमों के अनुसार नहीं पहचानते, जिनसे हिज्जों व उच्चारण का संबंध नियमित होता है। उनकी

पहचान वास्तव में अपरिचित शब्द की पहले से परिचित शब्दों के साथ अनुरूपता पर आधारित होती है।¹⁴ उदाहरण के लिए 'Tab' का उच्चारण 'Jab' के उच्चारण पर और उन शब्दों के ज्ञान पर जो अंग्रेजी में 't' से आरंभ होते हैं, पर आधारित हो सकता है। एक अन्य प्रमाण जो अनुरूपता पर आधारित डिकोडिंग के नियम पर आधारित है वह है — 'Mave' जैसे अपरिचित/मनगढ़त शब्दों का उच्चारण। 'Mave' कभी तो 'Have' और कभी 'Wave' की तरह बोला जाता है, उन पाठकों के द्वारा जो यह शब्द पहली बार देखते हैं। कारण — 'Mave' में 'a' का उच्चारण छोटा हो सकता है, जैसा कि 'have' में दीर्घ हो सकता है, 'ऐ', जैसा कि 'Wave' में। ध्यान देने योग्य बात यह है कि पाठक को लघु या दीर्घ के उच्चारण की विशेष आवश्यकता नहीं, उसे उस शब्द-भंडार की आवश्यकता है, जिससे अनुरूपता की युक्ति का प्रयोग हो सके।

यह आवश्यक है कि 'डिकोडिंग' की कुशलता इस हद तक विकसित हो जाए कि वह स्वचालित हो जाए। उस पर चेतन स्तर पर ध्यान देने की कोई आवश्यकता न रहे। पाठक का ध्यान पाठ्यसामग्री के अर्थ पर केंद्रित होना चाहिए न कि यह समझने पर कि टुकड़े-टुकड़े करने पर एक-एक शब्द के क्या मायने होने चाहिए। साधारण पाठक अक्सर इस कारण से पाठ्यसामग्री पर ध्यान केंद्रित नहीं कर पाते, क्योंकि वे निम्न स्तर की डिकोडिंग में उलझते रहते हैं। उनका अधिक ध्यान एक-एक शब्द के सही उच्चारण में लगा रहता है।¹⁵ कुशल पाठक पाठ्यसामग्री के सतही लक्षणों पर बहुत कम ध्यान दे पाते हैं।¹⁶

उदाहरण के लिए, ऊपर दिए गए रेस्टोरेंट वाले पैरा की पहली पंक्ति को कोई बच्चा कुछ इस तरह पढ़ सकता है—

जब मेरी... मेरी - र - रेस्... र् - रेस्ट... जब मेरी रेस्टो... आदि।

'रेस्टोरेंट' एक कठिन शब्द है। इस तरह से पढ़ने के लिए बच्चे को काफ़ी प्रयास करना पड़ेगा। जब तक बच्चा इस तरह कुछ पढ़ने में सफल होगा तब तक पहले का पढ़ा हुआ उसकी याद में धुँधला हो चुका होगा। वह कभी भी एक समग्र अर्थ नहीं बना पाएगा।

जो आँकड़े हमें उपलब्ध हैं उनसे मालूम होता है कि एक 9-10 वर्ष का औसत कुशल पाठक एक अपरिचित कहानी को लगभग 100 शब्द प्रति मिनट की रफ़्तार से पढ़ सकता है, पर एक आम पाठक उसी कहानी को लगभग 50-60 शब्द प्रति मिनट की रफ़्तार से पढ़ता है।¹⁷ कुछ विद्वानों के अनुसार यह रफ़्तार, 'इतनी धीमी है कि आसान सामग्री को भी पढ़कर समझने में बाधा बन जाती है और समझने की नयी क्षमताएँ विकसित होने के लिए तो कोई जगह छोड़ती ही नहीं हैं।'¹⁸

तीसरा निष्कर्ष

‘पढ़ना’ मुख्य रूप से युक्तिगत होना चाहिए। कुशल पाठकों में सदा एक लचीलापन रहता है। किसी भी पाठ्यसामग्री को वे इस दृष्टिकोण से पढ़ते हैं कि वह कितनी जटिल है, उसकी विषयवस्तु से वे कितना परिचित हैं एवं उनके पढ़ने का अपना उद्देश्य क्या है? कई शोधों से यह पता लगता है कि अपरिपक्व पाठकों में कम-से-कम दो वो युक्तियाँ नहीं होतीं जो कुशल पाठकों के पास होती हैं— एक तो वे पाठ्यसामग्री से संबंधित अपने पूर्वज्ञान का आकलन नहीं कर पाते और दूसरे, अपने समझने की प्रक्रिया को नियंत्रित नहीं कर पाते, जिससे वे उन युक्तियों का प्रयोग नहीं कर पाते जो समझने की प्रक्रिया के असफल होने पर काम में लाई जाती हैं।¹⁹

कुशल पाठक जानते हैं कि पढ़ने के अलग-अलग उद्देश्य होते हैं और इन उद्देश्यों को बदलना पड़ता है। उदाहरण के लिए, वे समझते हैं कि मजे लेने के लिए पढ़ते वक्त शायद कोई गहरी समझ की आवश्यकता नहीं है, पर परीक्षा के लिए तो खूब समझकर ही पढ़ना होगा। एक शोध में तीसरी व छठी कक्षा के बच्चों को दो कहानियाँ पढ़ने के लिए कहा गया— एक केवल मजे लेने के लिए और दूसरी परीक्षा के लिए।²⁰ कुशल पाठकों ने अपने पढ़ने के तरीकों में उचित तबदीलियाँ कीं, अपरिपक्व बच्चों ने नहीं। परिणामतः इन बच्चों को दोनों कहानियों में से कोई भी ठीक से समझ नहीं आई, न ही याद रही।

अपरिपक्व पाठक अक्सर पढ़ने के तरीके को नियंत्रित नहीं कर पाते, क्योंकि उन्हें पढ़ने का उद्देश्य ठीक से समझ नहीं आता है। नियंत्रण का एक पक्ष यह है कि यह समझ पाना कि कब पढ़ने में कोई असफलता हुई है। इस बात की जाँच करने के लिए शोधकर्ताओं ने पाठकों को पाठ्यसामग्री में ऐसी बातों को पहचानने के लिए कहा है आगे जो उस पाठ्यसामग्री से मेल न खाती हों। नीचे हम उदाहरण के लिए, दो अनुच्छेद सुसंगत और असंगत के देखते हैं—

इस जहाज पर जो लोग भी काम कर रहे हैं, उन सबका आपस में खूब मेल-जोल है। जिन लोगों के पास बहुत पैसा है और जिनके पास बहुत कम, वे सभी आपस में दोस्त हैं। अफ़सर मुझे बराबरी का दर्जा देते हैं। हम सब अक्सर साथ-साथ खाना खाते हैं। मुझे तो लगता है कि हम सब एक ही खुशहाल परिवार के सदस्य हैं।

अब इसी पैराग्राफ़ का दूसरा रूप देखिए—

इस जहाज़ पर जो लोग भी काम कर रहे हैं, उन सबका आपस में खूब मेल-जोल है। जिन लोगों के पास बहुत पैसा है और जिनके पास बहुत कम, वे सभी आपस में दोस्त हैं। अफ़सर सदा मेरा निरादर करते हैं। हम सब अक्सर साथ-साथ खाना खाते हैं। मुझे तो लगता है कि हम सब एक ही खुशहाल परिवार के सदस्य हैं।²¹

कुशल पाठक दूसरे पैराग्राफ़ में आई अखरने वाली बात को सहज ही पकड़ लेंगे। दूसरी तरफ़ छोटे या अपरिपक्व पाठक कहेंगे कि दूसरा पैराग्राफ़ भी ठीक-ठाक है।²²

नियंत्रित पढ़ने की प्रक्रिया का अन्य पक्ष है कि एक कुशल पाठक को जैसे ही यह अहसास होता है कि उसे कोई बात समझ में नहीं आई तो वह कोई-ना-कोई ऐसा कदम उठा लेता है या कोई ऐसी युक्ति खोज लेता है, जिससे वो बात उनकी समझ में आ जाए। कुशल पाठकों को पता होता है कि कठिनाइयों का सामना कैसे करना होता है। कई विकल्प उपलब्ध हैं— एक तरीका तो यह है कि समस्या को कुछ देर के लिए टाल दिया जाए, इस उम्मीद के साथ कि थोड़ी देर बाद उसका अर्थ स्वयं स्पष्ट हो जाएगा। एक अन्य विकल्प है कि एक ही हिस्से को बार-बार पढ़ना; आगे पढ़ने की प्रतीक्षा करना या वाह्य स्रोतों से मदद लेना। एक शोधकार्य में शोधकर्ताओं ने दूसरी और छठी कक्षाओं से पूछा कि जब उन्हें कोई लिखी हुई बात समझ नहीं आती है, तब वे किन युक्तियों का प्रयोग करते हैं।²³ उम्र में बड़े कुशल पाठकों ने बताया कि यदि वे किसी शब्द का अर्थ नहीं जानते तो किसी अन्य व्यक्ति से पूछ लेते हैं या किसी शब्दकोश की सहायता ले लेते हैं। अपरिपक्व पाठक अपनी युक्तियों के बारे में कोई विशेष बात नहीं बता सके। वास्तव में यह बात बच्चों के अवलोकनों से और भी पुख्ता हुई है। एक अन्य शोध में चौथी कक्षा के बच्चों को ऐसी कहानी पढ़ने को दी गई, जिसमें कुछ कठिन शब्द थे।²⁴ जैसी कि उम्मीद थी, कुशल पाठकों ने प्रश्न पूछे, नोट्स लिए तथा शब्दकोश का प्रयोग किया। अपरिपक्व पाठकों ने इन चीज़ों की बहुत कम मदद ली।

यह बात हम बार-बार देखते हैं कि कुशल पाठकों के पास पढ़ने की युक्तियों का एक भंडार होता है। इसका अर्थ यह हुआ कि कुशल पाठक अपनी पढ़ने की प्रक्रिया का नियंत्रण करते हैं और समझ के रास्ते में आने वाली रुकावटों का कोई-न-कोई हल निकालते हैं।

चौथा निष्कर्ष

पढ़ने के लिए प्रेरणा की आवश्यकता होती है। प्रत्येक अध्यापक जानता है कि प्रेरणा, यानी पढ़ने की गहरी इच्छा पढ़ना सीखने की कुंजी है। अधिकतर बच्चों को पढ़ना सीखने के लिए कई साल लगेंगे, लेकिन इस दौरान हमारी यह भरसक कोशिश होनी चाहिए कि बच्चों की यह उम्मीद बनी रहे कि वे एक कुशल पाठक बनेंगे।

पढ़ना अपने आप में एक आनंददायक बात है। उन बच्चों के लिए तो निश्चित ही जो कुशल पाठक हैं, काफ़ी हद तक उन बच्चों के लिए भी जो औसत या औसत से भी नीचे की श्रेणी में हैं। कहते भी हैं कि ये बच्चे तो 'किताबों के मोह में खोए हुए हैं।' पढ़ना सिखाने की प्रक्रिया का यह उद्देश्य तो होना चाहिए कि अधिक-से-अधिक बच्चे कुशल पाठक बन जाएँ, पर साथ-साथ हमारा उद्देश्य यह भी होना चाहिए कि उन बच्चों की संख्या बढ़े जो केवल मजे लेने के लिए नयी-नयी किताबें पढ़ते हैं। इस प्रक्रिया का एक आवश्यक हिस्सा यह है कि बच्चों को जिन किताबों में रुचि है, वो किताबें उन्हें आसानी से मिलें।

बच्चों को पढ़ना सिखाने की प्रक्रिया अक्सर बहुत उबाऊ होती है। इस प्रक्रिया के कई हिस्से बहुत नीरस होते हैं। पढ़ने के नाम पर दी गई अधिकतर गतिविधियाँ अरुचिकर होती हैं, इसलिए जब एक शोध में यह पता लगा कि जब बच्चों को अपनी कक्षा से एक कक्षा के आगे की किताबें पढ़ने के लिए कहा गया तो उन्होंने बताया कि उन्हें पढ़ने में तो मज़ा आ रहा है, लेकिन 'पढ़ने' के नाम पर स्कूल में होने वाली गतिविधियों में कोई रुचि नहीं, तो यह कोई हैरानी की बात नहीं।²⁵

वे अध्यापक जो बच्चों की प्रेरणा को एक उच्च स्तर पर बनाए रखते हैं, वे बहुत तेज़ गति से विविध पाठ पढ़ाते हैं। गतिविधियाँ एक उत्साह के साथ आरंभ की जाती हैं और यह समझाया जाता है कि उनको करने से क्यों बच्चे बेहतर पाठक बनेंगे। जिन अध्यापकों की कक्षाओं में प्रेरित बच्चे होते हैं उनकी कक्षाओं में खूब काम होता है, लेकिन उनमें बहुत स्नेह और विश्वास होता है। इस तरह के अध्यापकों के द्वारा पढ़ाए गए बच्चे पढ़ने के मूल्यांकन में औसत से कहीं अधिक अंक लाते हैं।²⁶

असफलता कोई मज़ाक नहीं! अपरिपक्व पाठकों का पढ़ने के प्रति नकारात्मक हो जाना स्वाभाविक है। पर यह कहना आसान नहीं कि पढ़ने में असफलता नकारात्मक रुख के कारण है या ठीक इसका उलटा। शायद सच्चाई इन दोनों छोरों के बीच में कहीं है।

अपरिपक्व पाठक इधर-उधर देखते रहते हैं, पढ़ने की तरफ़ ध्यान नहीं देते और कई कक्षा की प्रक्रिया में जान-बूझकर बाधाएँ डालते हैं, अपना काम नहीं करते। जब भी कोई

कठिन गतिविधि उनके सामने आती है तो जल्दी ही हार मान लेते हैं। उन्हें पढ़कर बोलने के लिए कहा जाता है या कोई परीक्षा देनी होती है तो वे बहुत चिंतित हो जाते हैं। संक्षेप में यही कहा जा सकता है कि ये बच्चे स्वयं को असहाय पाते हैं और उन्हें लगता है कि वे कुछ भी बेहतर नहीं कर सकते। इस असहायपन के कारणों को हम अभी तक ठीक से समझ नहीं पाए हैं²⁷ परंतु शायद अध्यापकों के व्यवहार का इससे कोई-न-कोई रिश्ता जरूर है। यह स्वाभाविक है कि कुछ अध्यापकों को लगे कि पढ़ने की परीक्षा में फेल होने पर दया दिखाना बहुत अच्छी बात है, लेकिन इस बात में यह संदेश भी छुपा हुआ हो सकता है कि इन बच्चों में कुछ भी बेहतर करने की क्षमता नहीं और ये अपने जीवन के निर्माण में कोई हस्तक्षेप नहीं कर सकते। इसके विपरीत अगर अध्यापक कुछ असंतुष्टि दिखाएँ तो हो सकता है कि बच्चों को लगे कि यदि वे मेहनत करेंगे तो उनकी पढ़ने में प्रवीणता बेहतर होगी। लोग अपने परिश्रम को नियंत्रित कर सकते हैं, यदि नियंत्रण हो तो असहाय भी प्रवीण हो सकते हैं²⁸

एक प्रभावशाली अध्यापक अपनी बातचीत व अपने काम करने के तरीकों से यह दिखा देता है कि हर बच्चा पढ़ना सीख सकता है, यदि वह ध्यान दे और मेहनत करे। इन अध्यापकों की कक्षाओं में बच्चों को अपने परिणाम साफ़ नज़र आते हैं। शोध से यह बात सिद्ध हो गई है कि ऐसे अध्यापक बच्चों को पढ़ने के लिए ऐसी सामग्री देते हैं जिसे पढ़ने में उन्हें सफलता का अहसास होता है।²⁹ परंतु प्रभावशाली अध्यापक बिना सोचे-समझे प्रशंसा करने नहीं बैठ जाते हैं, वही बच्चा वास्तव में प्रशंसा का पात्र बनता है, जो कोई ऐसा काम कर दिखाए, जो उसके लिए सचमुच मुश्किल हो। प्रशंसा करने में यह साफ़ ज़ाहिर रहता है कि बच्चे ने किस विशेष समस्या को सुलझाया है और किस प्रकार बच्चे की सफलता उसके कौशल और प्रयास से जुड़ी है। इसी से पता चलता है कि भविष्य में भी इसी तरह की सफलताएँ संभव हैं।³⁰

गोया यह बात सच है कि निरंतर बनी हुई प्रेरणा पढ़ना सीखने के लिए आवश्यक है, फिर भी हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि प्रेरणा पढ़ने में असफलता का एक मात्र कारण नहीं है। अनुभव से यह पता लगता है कि अच्छे-से-अच्छे हालात में भी कुछ प्रतिशत बच्चे तो ठीक से पढ़ना नहीं सीख पाएँगे। उन्हें काफ़ी मुश्किलों का सामना करना पड़ेगा। इन मुश्किलों की हम यहाँ पर विस्तार से चर्चा नहीं कर सकेंगे। हाँ, इसमें कोई शक नहीं कि जिन बातों की चर्चा हमने यहाँ की है उनसे उन मुश्किलों को हल करने में कुछ मदद अवश्य मिल सकती है।

पाँचवाँ निष्कर्ष

‘पढ़ना’ एक ऐसा कौशल है, जिसका निरंतर विकास होता रहता है। संगीत की ही तरह पढ़ना भी कोई ऐसी कला नहीं जिस पर एक बार में ही महारत हासिल कर ली जाए, अपितु यह ऐसा कौशल है जो अभ्यास के साथ निरंतर निखरता है। यह प्रक्रिया उसी वक्त शुरू हो जाती है जब भी कोई व्यक्ति-विशेष किसी पढ़ने-लिखने वाली संस्कृति व पहली पाठ्यसामग्री के समकक्ष होता है।³¹

पहला नियम जिसका सदैव पालन करना चाहिए वह यह है कि पढ़ने को एक समग्र प्रक्रिया से शुरू किया जाए। पढ़ना इसलिए चाहिए कि पाठ्यसामग्री में निहित अर्थ व संदेश को पकड़ना है। स्पष्ट है कि पढ़ना सीखने की शुरुआत करने वाले बच्चे के लिए इसमें काफ़ी समस्या आएगी। यह कैसे संभव है कि पढ़ना सीखने से पहले ही बच्चा पढ़ने लग जाए?

इसके लिए कई नयी-नयी युक्तियाँ प्रयोग में लाई जा सकती हैं। एक स्वाभाविक युक्ति यह है कि बच्चों को वे कहानियाँ सुनाई जाएँ, जिनसे वे पहले से परिचित हैं और जो उन्हें लगभग याद भी हैं। एक अन्य युक्ति है कि नयी कहानियों की शब्दावली सीमित हो। अक्षर व ध्वनि के संबंध की ओर ध्यान दिलाने से भी लाभ हो सकता है।

अनेक अन्य जटिल कौशलों की ही तरह पढ़ना सिखाने की प्रक्रिया में उन हिस्सों/पक्षों के विवरण, विमर्श, कोचिंग के अभ्यास पर ज़ोर दिया जाता है जो पढ़ने के आवश्यक अंग माने जाते हैं, लेकिन इन सब प्रक्रियाओं का मूल्यांकन इसी बात से हो सकता है कि समझकर पढ़ने में बच्चे की क्षमता कितनी बढ़ी है, अतः एक सुरक्षित पढ़ना सिखाने के कार्यक्रम में टुकड़ों पर प्रवीणता हासिल करना अपने आप में एक उद्देश्य नहीं हो सकता है। यह केवल उद्देश्य प्राप्त करने का एक रास्ता ही हो सकता है। समग्र रूप से समझकर पढ़ने व उस प्रक्रिया के टुकड़ों पर संतुलित ज़ोर देना चाहिए।

संक्षेप में

1. **पढ़ना एक रचनात्मक गतिविधि है**— एक कुशल पाठक बनने के लिए आवश्यक है कि रोज़मर्रा के ज्ञान व विषयवस्तु विशेष के ज्ञान पर आधारित पाठ्यसामग्री से एक तार्किक संवाद स्थापित हो सके।
2. **पढ़ना सही मायने में धाराप्रवाह होना चाहिए**— एक कुशल पाठक होने का तात्पर्य यह है कि आपका पढ़ने के सभी कौशलों पर पूरा अधिकार है। वे इस तरह स्वचालित हैं कि आप अपना पूरा ध्यान अर्थ समझने पर लगा सकते हैं।

3. **पढ़ना मुख्य रूप से युक्तिगत होना चाहिए**— एक कुशल पाठक बनने के लिए यह आवश्यक है कि आपका पढ़ने के उद्देश्य, पाठ्यसामग्री की प्रकृति और अपने समझने की प्रक्रिया के पढ़ने के साथ जो भी रिश्ते बनें उन पर पूरा नियंत्रण होना चाहिए।
4. **पढ़ने के लिए प्रेरणा की आवश्यकता होती है**— एक कुशल पाठक होने का मतलब यह है कि आप लंबे समय तक ध्यान केंद्रित रख सकते हैं और आप यह मानते हैं कि पाठ्यसामग्री रुचिकर व ज्ञानदायक हो सकती है।
5. **पढ़ना एक ऐसा कौशल है। जिसका निरंतर विकास होता रहता है**— एक कुशल पाठक होने का मतलब है कि आप निरंतर अभ्यास करते हैं और आपके कौशल में निरंतर विकास व सुधार होता रहता है।

पाठानुसार टिप्पणी

1. एडाटेड फ्रॉम स्कैलहर्ट, डी.एल. 1982. *द सिग्नीफिकेन्स ऑफ नॉलेज— अ सिंथेसिस ऑफ रिसर्च रिलेटेड टू स्कीमा थ्योरी*. इन डब्ल्यू. ओट्टो एंड एस. व्हाइट (एडि.), *रीडिंग एक्सपोजिटरी मटीरियल*. पृष्ठ 13–48. अकादमी प्रेस, न्यूयॉर्क. पृष्ठ 28.
2. पियर्सन, पी.डी. एंड स्पैरो. आर.जे. 1980. *टुवार्ड अ थ्योरी ऑफ रीडिंग कॉम्प्रिहेन्सन इन्सट्रक्शन*. *टॉपिक्स इन लैंग्वेज डिसऑर्डर*. वॉल्यूम 1. पृष्ठ 71–88.
3. ओरल रीडिंग एरर्स- शोइंग एन ओवरेलिएन्स ऑन ग्राफोफोनिमिक क्यूस आर डिस्क्राइब्ड इन— हुड जे. एंड केंडाल, जे.आर. 1975. *क्वालिटेटिव एनालिसिस ऑफ ओरल रीडिंग एरर्स ऑफ रिफ्लेक्टिव एंड इंपल्स सेकंड ग्रेडर्स— फॉलोअप स्टडी*. *जर्नल ऑफ रीडिंग बिहेवियर*. वॉल्यूम 7, पृष्ठ 269–281.
वेवर, आर.एम. 1970. *अ लिंग्विस्टिक एनालिसिस ऑफ फर्स्ट-ग्रेड रीडिंग*. *एरर्स, रीडिंग रिसर्च क्वार्टर्ली*. वॉल्यूम 5, पृष्ठ 427–451.
4. ओरल रीडिंग एरर्स शोइंग एन ओवरेलिएन्स ऑन कॉन्टेक्चुअल क्यूस आर डिस्क्राइब्ड इन— बाइमीलर. ए. 1970. *द डेवलपमेंट ऑफ द यूज ऑफ ग्राफिक एंड कॉन्टेक्चुअल इन्फॉर्मेशन ऐज चिल्ड्रन लर्न टू रीड*. *रीडिंग रिसर्च क्वार्टर्ली*. वॉल्यूम 6, पृष्ठ 75–96.
5. स्टीफेंसन, एम.एस., जोग-देव, सी. एंड एंडरसन, आर.सी. 1979. *अ क्रॉस— कल्चरल परस्पेक्टिव ऑन रीडिंग कॉम्प्रिहेन्सन*. *रीडिंग रिसर्च क्वार्टरली*. वॉल्यूम 15, पृष्ठ 10–29.
6. पियर्सन, पी.डी. हैन्सन, जे. एंड गॉर्डन, सी. 1979. *द इफैक्ट ऑफ बैकग्राउंड नॉलेज ऑन यंग चिल्ड्रन्स कॉम्प्रिहेन्सन ऑफ एक्सप्लिसिट एंड इंप्लिसिट इन्फॉर्मेशन*. *जर्नल ऑफ रीडिंग बिहेवियर*. वॉल्यूम 11, पृष्ठ. 201–209.

7. ओविंम्स, आर.ए., पीटरसन, जी.ए., ब्रैसफोर्ड, जे.डी., मॉरिस, सी.डी. और स्टेइन, बी.एस. 1980. *स्पॉन्टेनियस मॉनिट्रिंग एंड रेगुलेशन ऑफ़ लर्निंग—अ कम्पैरिजन ऑफ़ सक्सेसफुल एंड लेस सक्सेसफुल. फिफ्थ ग्रेड्स. जर्नल ऑफ़ एजुकेशनल साइकोलॉजी. वॉल्यूम 72, पृष्ठ 250–256.*
 पेरिस. एस.जी. एंड लिंडेयर, बी.के. 1976. द रोल ऑफ़ इन्फेरेन्स इन चिल्ड्रन कॉम्प्रिहेन्सन एंड मेमरी फॉर सन्टेन्सेज. *कॉग्निटिव साइकोलॉजी. वॉल्यूम 8, पृष्ठ 217–227.*
 फॉर इंफ़ीकेशन ऑफ़ चिल्ड्रन फेल्योर टू ड्रॉ ऑन प्रायर नॉलेज इन द स्कूल सेटिंग, देखें—
 बेक, आई.एल. 1985. *फाइव प्रॉब्लम्स विद् चिल्ड्रन्स कॉम्प्रिहेन्शन इन द प्राइमरी ग्रेड्स.*
 इनजे. ऑसबोर्न, पी.टी. विल्सन, और आर.सी. एंडरसन (एडि.), *रीडिंग एजुकेशन—*
फॉन्डेशन फॉर अ लिटरेट अमेरिका (पृष्ठ 239–253). लेक्सिंग्टन बुक्स. लेक्सिंग्टन, एमए.
 विल्सन, पीटी, और एंडरसन, आर.सी. 1985. *रीडिंग कॉम्प्रिहेन्शन एंड स्कूल लर्निंग.* इन जे.
 ऑसबोर्न में पी.टी. विल्सन और आर.सी. एंडरसन (एडि.) *रीडिंग एजुकेशन—*
फॉन्डेशन फॉर अ लिटरेट अमेरिका (पृष्ठ 319–328). लेक्सिंग्टन बुक्स. लेक्सिंग्टन, एमए.
8. लीजगोल्ड, ए., रेस्निक, एल.बी. एंड हैमंड. के. 1985. *लर्निंग टू रीड—अ लॉगीट्यूडनल*
स्टडी ऑफ़ वर्ड स्किल डेवलपमेन्ट इन टू करिक्कुला. इन टी.जी. वाल्टर एंड जी.ई. मैकिनन
 (एडि.). *रीडिंग रिसर्च—एडवान्सेस इन थ्योरी एंड प्रैक्टिस.* वॉल्यूम 4, पृष्ठ 107–138.
 एकेडमिक प्रेस, न्यूयार्क.
9. केटल, जे.एम. 1886. *द टाइम इट टेक्स टू सी एंड नेम ऑब्जेक्ट्स. माइंड 11,*
पृष्ठ 63–65.
10. मेयर, डी.ई. एंड स्कवैन्वेल्ट, आर.डब्ल्यू. 1971. *फैसिलिटेशन इन रिकाग्नाइजिंग पेयर्स*
ऑफ़ वर्ड्स—एविडेन्स ऑफ़ अ डिपेन्डेन्स बिटविन रिट्रिवल ऑपरेशन. जर्नल ऑफ़
एक्सपेरिमेन्टल साइकोलॉजी. वॉल्यूम 90, पृष्ठ 227–234. दिस स्टडी शोज फैसिलिटेशन
 इफेक्ट्स विद वर्ड्स प्रिजेन्टेड इन आइसोलेशन. देयर इज एविडेन्स टू सजेस दैट
 कॉन्टेक्चुअल कंसट्रेंट्स आलसो फैसिलिटेट प्रोसेसिंग डयूरिंग रीडिंग ऑफ़ कनेक्टेड
 टेक्स्ट. देखे—जोला, डी. 1984. *रिडन्डेसी एंड वर्ड पर्सप्शन डयूरिंग रीडिंग. पर्सप्शन एंड*
साइकोफिजिक्स. वॉल्यूम 36, पृष्ठ 277–284.
11. मैकक्लीलैंड, जे. एल. एंड रुमेलहार्ट, डी.ई. 1981. *एन इन्ट्रेक्टिव एक्टीवेशन मॉडल ऑफ़*
कॉन्टेक्स्ट इफेक्ट्स इन लेटर पर्सप्शन—पार्ट 1. एन अकाउंट ऑफ़ बेसिक फाइंडिंग्स.
साइकोलॉजिकल रिव्यू. वॉल्यूम 88, पृष्ठ 375–407.
 रुमेलहार्ट, डी.ई. एंड मैकक्लीलैंड, जे. एल. 1982. *एन इन्ट्रेक्टिव एक्टीवेशन मॉडल*
ऑफ़ कॉन्टेक्स्ट इफेक्ट्स इन लेटर पर्सप्शन—पार्ट 2. द कॉन्टेक्चुअल इन्हेन्समेन्ट इफेक्ट

- एंड सम टेस्ट्स एंड एक्स्टेंशन ऑफ़ द मॉडल'. *साइकॉलॉजिकल रिव्यू* वॉल्यूम 89. पृष्ठ 60-94.
12. गॉग, पी.बी., 1972. *वन सेकंड ऑफ़ रीडिंग*. इन जे.एफ. कैवेनॉग एंड आई.जी मातिंगली (एडि.) *लैंग्वेज बाई इयर एंड बाई आई*. पृष्ठ 331-358. एमआईटी प्रेस, कैंब्रिज, एमए. जस्ट, एम.ए. एंड कारपेन्टर, पी.ए. 1980. *अ थ्योरी ऑफ़ रीडिंग—फ़्राम आई फिक्सेशन टू कॉम्प्रिहेन्सन*. *साइकॉलॉजिकल रिव्यू* वॉल्यूम 87, पृष्ठ 329-354.
 13. स्टैनोविक, के.ई. 1980. *टुवार्ड एन इन्ट्रैक्टिव कंपन्सेटरी मॉडल ऑफ़ इंडीविजुअल डिफ़्रेन्स इन द डेवलपमेन्ट ऑफ़ रीडिंग फ़्लूएन्सी*. *रीडिंग रिसर्च क्वार्टर्ली*. वॉल्यूम 16, पृष्ठ 32-71.
 14. ग्लुशको, आर. जे. 1979. *द आर्गनाइजेशन एंड एक्टिवेशन ऑफ़ आर्थोग्राफ़िक नॉलेज इन रीडिंग अलाउड*. *जर्नल ऑफ़ एक्पेरिमेन्टल साइकॉलॉजी—ह्यूमन पर्सेप्शन एंड पर्फ़र्मेंस*. वॉल्यूम 16, पृष्ठ 674-691.
मैकक्लीलैंड एंड रुमेलर्ट. 1981. ओपी. सीआईटी.
रुमेलहर्ट एंड मैकक्लीलैंड 1982. ओपी. सीआईटी.
 15. पर्फ़ेड्री, जी.ए., लीजगोल्ड, ए.एम. 1977. *डिस्कॉर्स कॉम्प्रिहेन्सन एंड सोर्स ऑफ़ इंडीविजुअल डिफ़्रेन्सेज*. इन एम.ए. जस्ट एंड पी.ए. कारपेन्टर (एडि.) *कॉग्निटिव प्रोसेसेस इन कॉम्प्रिहेन्सन*. पृष्ठ 141-183. हिल्सडेल, न्यूजर्सी, अर्लबाम.
 16. एंडरसन, आर.सी. एंड कुलेवी आर. डब्ल्यू. 1972. *लर्निंग कॉन्सेप्ट्स फ़्राम डेफ़िनिशन. अमेरिकन एजुकेशन रिसर्च जर्नल*. वॉल्यूम 9, पृष्ठ 385-390.
———. गोल्डबर्ग, एस.आर. एंड हिडल, जे. एल. 1971. *मर्निंगफुल प्रोसेसिंग ऑफ़ सेन्टेंसेज*. *जर्नल ऑफ़ एजुकेशनल साइकॉलॉजी*. वॉल्यूम 62, पृष्ठ 395-399.
 17. हाफ़मैन, जे.वी. ओ'नील, एस.एफ. केसलर, एल.ए. क्लीमेन्ट, आर.ओ. सेजल, के.डब्ल्यू एंड नेश, एम. एफ. 1984. *गाइडेड ओरल रीडिंग एंड मिस्क्यू फोकस्ड वर्बल फीडबैक इन सेकंड-ग्रेड क्लासरूम्स*. *रीडिंग रिसर्च क्वार्टली*. वॉल्यूम 19, पृष्ठ 367-384.
 18. लीजगोल्ड. रेस्निक एंड हेमॉन्ड. 1985. ओपी. सीआईटी.
 19. बेकर, एल. एंड ब्राउन ए. एल. 1984. *मेटाकॉग्निटिव स्किल्स एंड रीडिंग*. इन पी.डी. पियर्सन (एडि.) *हैंडबुक ऑफ़ रीडिंग रिसर्च*. पृष्ठ 353-394. लॉन्गमैन, न्यूयॉर्क.
 20. फ़ॉरेस्ट डी.एल. एंड वेल्स, टी.जी. मार्च 1979. *कॉग्निटिव एंड मेटाकॉग्निटिव आस्पेक्ट्स ऑफ़ रीडिंग*. *पेपर प्रेजेन्टेड एट द बीनियल मीटिंग ऑफ़ द सोसाइटी फ़ॉर रिसर्च इन चाइल्ड डेवलपमेंट*, सेन फ्रेन्सिस्को. सी.ए.
 21. फ़्राम ग्रेब, एम., मान, एस. 1984. *टेक्नीक फ़ॉर द असेसमेन्ट एंड ट्रेनिंग ऑफ़ कॉम्प्रिहेन्सन*

- मॉनीट्रिंग स्किल्स. जर्नल ऑफ़ रीडिंग बिहैवियर. वॉल्यूम 16, पृष्ठ 131-144.
22. LBID.
 23. मेयर्स, एम. एंड पेरिस, एस. जी. 1978. चिल्ड्रन्स मेटाकाग्निटिव नॉलेज अबाउट रीडिंग. जर्नल ऑफ़ एजुकेशनल साइकॉलॉजी. वॉल्यूम 70, पृष्ठ 680-690.
 24. पेरिस, एस.जी. एंड मेयर्स, एम. 1981. कॉम्प्रिहेन्सन मॉनिट्रिंग, मेमरी एंड स्टडी स्ट्रेटजीस ऑफ़ गुड एंड पुअर रीडर्स. जर्नल ऑफ़ रीडिंग बिहैवियर. वॉल्यूम 13, पृष्ठ 5-22.
 25. डर्किन, डी. 1982. अ स्टडी ऑफ़ पुअर ब्लैक चिल्ड्रन हू आर सक्सेसफुल रीडर्स (रीडिंग एडि. रिप्रि. नं. 33). सेंटर फॉर द स्टडी ऑफ़ रीडिंग, यूनिवर्सिटी ऑफ़ इलिनोइस, अर्बाना.
 26. वालबर्ग, एच. जे. हेयर, बी.सी. एंड पुलियम, सी. ए. 1981. सोशल साइकॉलॉजिकल पर्सपेक्शन एंड रीडिंग कॉम्प्रिहेन्सन. इन जे. टी. गथरी (एडि.). कॉम्प्रिहेन्सन एंड टीचिंग—रिसर्च रिव्यूस. पृष्ठ 140-159. इन्टरनेशनल रीडिंग असोसिएशन, नेवार्क, डीई.
 27. डवेक, सी.एस. 1975. द रोल ऑफ़ एक्स्पेक्शन एंड अट्रीब्यूशन्स इन द एलिविएशन ऑफ़ लर्नड हेल्पलेसनेस. जर्नल ऑफ़ पर्सनैलिटी एंड सोशल साइकॉलॉजी. वॉल्यूम 31. पृष्ठ 674-685.
 28. विनर, बी. 1983. सम थॉट्स अबाउट फीलिंग्स'. इन एस. जी. पेरिस, जी. एम. ऑल्सन एंड एच. डब्ल्यू. स्टीवेन्सन (एडि.) लर्निंग एंड मोटिवेशन इन द क्लासरूम. पृष्ठ 165-178. अर्लबाम, हिल्सडेल न्यूजर्सी.
 29. हॉफ़मैन, एट एल. 1984. ओपी. सीआईटी.
रोसेन्शीन, बी. एंड. स्टीवेन्स, आर. 1984. क्लासरूम इन्सट्रक्शन इन रीडिंग. इन पी.डी. पियर्सन (एडि.). हैंडबुक ऑफ़ रीडिंग रिसर्च. पृष्ठ 745-798. लॉन्गमैन न्यूयॉर्क.
 30. ब्राँफी, जे.ई. 1983. फॉस्टरिंग स्टूडेन्ट्स लर्निंग एंड मोटिवेशन इन द एलिमेन्ट्री स्कूल क्लासरूम. इन एस.जी. पेरिस, जी.एम. ऑल्सन एंड एच. डब्ल्यू. स्टीवेन्सन (एडि.). लर्निंग एंड मोटिवेशन इन द क्लासरूम. पृष्ठ 283-305. अर्लबाम, हिल्सडेल, न्यूजर्सी.
 31. केल, जे. एस. 1983. स्टेजस ऑफ़ रीडिंग डेवलपमेन्ट. मैकग्राहिल न्यूयॉर्क.

9. पठन— संकेतों का सामंजस्य

—सोनिका कौशिक*

पढ़ने की दक्षता शायद स्कूल में सिखाई जाने वाली दक्षताओं से सबसे महत्वपूर्ण है। स्कूली पाठ्यचर्या के तहत इसका प्रयोग भाषा-शिक्षण तक ही सीमित नहीं है, बल्कि पाठ्यचर्या के कई क्षेत्रों में होता है। इसीलिए पढ़ने, यानी पठन में सफलता के निहितार्थ अन्य विषयों के लिए भी है। एक महत्वपूर्ण दक्षता होने के बावजूद यह खासतौर से प्राथमिक कक्षाओं के लिए चिंता का एक विषय बनी हुई है। देखने में आ रहा है कि बच्चों को सिखाई जाने वाली पठन की दक्षताएँ लंबे दौर तक बनी नहीं रहतीं और टिकाऊ न होने के कारण अर्थपूर्ण पठन में भी तब्दील नहीं हो पातीं।

पठन की प्रक्रिया पर होने वाला समकालीन अनुसंधान इसकी परिकल्पना अर्थ-निर्माण की प्रक्रिया के रूप में करता है। भिन्न-भिन्न विषय-क्षेत्रों के अलग-अलग अनुसंधान अर्थ के महत्व पर बल देने की बात पर एकमत दिखाई देते हैं (टील एवं सलज्बी, 1986)। मगर स्कूलों में व्यावहारिकता में प्रयोग होने वाला भाषा का शिक्षाशास्त्र अक्सर अर्थ-निर्माण के पहलू की अनदेखी करता है और भाषा के यांत्रिक पहलू को अधिक महत्व देता है। कुमार, 2009; के अनुसार, भारत के प्राइमरी स्कूलों में बच्चों द्वारा शब्दों को अक्षरों और वाक्यों को शब्दों में तोड़कर पढ़ना एक आम बात है (पृ. 79)। सिन्हा 2000; का कहना है कि पठन की कल्पना एक ऐसे अभ्यास के रूप में करना, जिसके तहत लिखित भाषा का एक मौखिक पर्याय या समानार्थी तलाशा जाना है, अर्थ-निर्माण के लिए एक बाधा है जो अर्थबोध को भी बाधित करता है।

यह लेख कक्षा 3 के एक बेहतर और एक कमजोर पाठक के पठन को जाँचता है। यहाँ इस बात का भी विश्लेषण किया गया है कि वे किन अलग-अलग तरीकों से पाठ को विकसित करते हैं और वे किस प्रकार पढ़ने के दौरान आने वाली चुनौतियों का सामना करते हैं।

भाषा-संकेतों की व्यवस्था

गुडमैन (Goodman, 1996) भाषा की चार संकेत-व्यवस्थाओं के सामंजस्यपूर्ण ढंग से काम करने के महत्व पर बल देते हैं। ये व्यवस्थाएँ हैं—

1. अर्थविज्ञान

*सोनिका कौशिक— सीनियर कंसलटेंट, आईसीएसएसआर (ICSSR) एनसीईआरटी, नयी दिल्ली

2. वाक्यविज्ञान
3. लिपि-विज्ञान (ग्राफोफ़ोनिक्स)
4. व्यावहारिक अर्थ-क्रिया विज्ञान (प्रेग्मैटिक्स)।

अर्थपूर्ण या सफल पठन के लिए आवश्यक है कि ये चारों व्यवस्थाएँ एक-दूसरे के साथ ताल-मेल में चलें। अर्थ-विज्ञान, भाषा में अर्थ से संबद्ध होता है और वाक्य-विज्ञान, किसी भी भाषा में वाक्य की संरचना या शब्द व्यवस्था से। उदाहरण के लिए, हिंदी में क्रिया हमेशा कर्म के बाद आती है, जब कि अंग्रेज़ी में कर्म से पहले। लिपि-विज्ञान, भाषा में प्रतीक-चिह्न और ध्वनि के बीच रिश्ते से संबद्ध है। उदाहरण के लिए, हिंदी में ध्वनि 'क' का संबंध केवल एक प्रतीक-चिह्न या अक्षर से है। व्यावहारिक अर्थ-क्रिया विज्ञान, किन्हीं विशेष संदर्भों में भाषा के विशेष प्रयोग के बारे में है।

पाठक द्वारा केवल एक या दो ही संकेत-व्यवस्थाओं पर अत्यधिक बल देना या एक या अधिक व्यवस्थाओं को पूरी तरह दरकिनार कर दिया जाना, पठन और उसके अर्थ को गंभीर तौर पर प्रभावित कर सकता है। पठन में अर्थ की केंद्रीयता को नकारा नहीं जा सकता या यह कहें कि उसके साथ समझौता नहीं किया जा सकता है।

संकेतों का विश्लेषण भी पठन के विश्लेषण की एक तकनीक है, जिसे अंग्रेज़ी में 'मिस्क्यू एनेलिसिस' कहते हैं। इस की मदद से हम देख सकते हैं कि पाठक इन संकेत-व्यवस्थाओं का प्रयोग किस तरह करता है, यह देखना फिर चाहे बस 'एक झलक' बराबर ही क्यों न हो! इस तकनीक को विकसित करने वाले व्यक्ति थे (केनेथ गुड्मैन रोहड्स और शैन्क्लिन, 1993)। गुड्मैन ने 'मिस्क्यू' शब्द का प्रयोग उन चूकों के लिए किया है, जिन्हें आमतौर पर पठन में की जाने वाली गलतियाँ मान लिया जाता है। इस शब्द को प्रयोग में लाने का मकसद था कि शब्द 'एरर' (यानी गलती) की नकारात्मक अर्थ-छवि से बचा जा सके। इस तकनीक के तहत बच्चों द्वारा पढ़ते समय की जाने वाली 'गलतियों' को सहानुभूति की नज़र से देखा जाता है और इस बात की जाँच की जाती है कि पाठक पाठ की विषयवस्तु से क्यों और कैसे 'भटक' गया। दिलचस्प बात यह है कि विश्लेषणात्मक प्रक्रिया से यह पता चलता है कि हर तरह के पाठक पढ़ते समय इस प्रकार की कमियाँ छोड़ते हैं।

लेख के आगे वाले खंड में ज्ञात होगा कि चारों व्यवस्थाएँ कितने जटिल तरीकों से एक साथ काम करते हुए अर्थ-निर्माण करती हैं। भाषा के इस बहुव्यवस्थायिक ढाँचे का इस्तेमाल करते हुए दो बच्चों के पठन को जाँचा गया है। 'अच्छा' और 'बुरा' पाठक— इस शब्दावली का प्रयोग आमतौर पर अनुसंधान से जुड़े साहित्य में किया जाता है, लेकिन

हमारा उद्देश्य बच्चों को वर्गीकृत करने का नहीं है, बल्कि उन गुणात्मक भिन्नताओं को सामने लाने का है जो उनके पठन के दौरान हमारे सामने आती हैं।

चूकें — पठन की प्रकृति

कक्षा 3 के दो बच्चों को पढ़कर सुनाने के लिए एक कहानी 'देहाती की गाय' (शंकर, 1999) दी गई। इनमें से एक बच्चा पठन में अच्छा था और दूसरा बहुत अच्छा नहीं था (या यूँ कहें कि उसे पढ़ने के लिए संघर्ष करना पड़ रहा था)। उनके पठन को रिकॉर्ड कर लिया गया और बाद में चूकों की प्रकृति या मूल पाठ से भटकाव का अध्ययन करने के लिए विश्लेषण किया गया। विश्लेषण से उनके द्वारा की गई चूकों और परिणामस्वरूप उनके पठन में गुणात्मक स्तर की भिन्नताओं के बारे में जानकारी मिली। यहाँ बच्चों द्वारा पढ़े गए पाठ के एक हिस्से की चर्चा की जाएगी।

पाठ 'क' को ध्यान में रखें जो उस पाठक के पठन का उदाहरण है, जो अच्छा पाठक नहीं था। वह पहले ही वाक्य में तीन चूकें करता है। पहली चूक है— शब्द 'गाँव' को 'गा' और 'व' में बाँटना, जहाँ अनुस्वार को पूरी तरह अनदेखा कर दिया गया। यह बच्चा शब्द के दोनों हिस्सों को मिलाए बिना आगे बढ़ गया। फिर इसी वाक्य में वह 'गाय' शब्द को 'गया' पढ़ता है और 'थी' को 'था' (यानी लिंग या प्रयोग सही नहीं था)। स्थानीय स्तर के हिसाब से तो 'था' के साथ मेल खाता लगता है। 'गया' और 'था' उन शब्दों, यानी 'गाय' और 'थी', से मिलते-जुलते से दिखाई देते हैं, इसलिए जहाँ तक शब्द-विशेष का संबंध है, इन 'चूकों' को दरकिनार किया जा सकता है, लेकिन बच्चे द्वारा पढ़े गए संपूर्ण वाक्य की बनावट को जाँचा जाए तो उसके परिणाम में मिलने वाला अर्थ बहुत संतोषजनक नहीं लगता।

दूसरा वाक्य चूकों से भरा है, लेकिन वे ऐसी हैं कि स्वयं ही ठीक की जा सकती हैं। पाठक दूसरे शब्द, 'प्रतिदिन' को छोड़ देता है, शब्द 'पाँच' को 'पान' और 'च' में विभाजित कर देता है और फिर दोनों को जोड़कर 'पाँच' ध्वनित करता है और इस बार अनुस्वार को भी शामिल करता है। इसी तरह शब्द 'किलो' में भी विभाजन और मिलान किया जाता है। 'दूध' पढ़ने के बाद पाठक 'देती' की बजाय 'दिया' पढ़ता है, इस चूक को ठीक करता है और फिर 'थी' की बजाय 'है' पढ़ता है। शब्द 'प्रतिदिन' के छोड़ दिए जाने और 'थी' की बजाय 'है' के प्रयोग से वाक्य पूरा अर्थ देता है, हालाँकि दूसरे वाक्य का काल बदल गया है और वह पहले वाक्य के कालानुकूल नहीं है। 'है' वाली चूक

समझ में नहीं आती, क्योंकि दिखाई दे रहा है कि विषयवस्तु हमें उस तक नहीं ले जाती। वाक्य 3 में 'बेच' को 'पहुन' और 'चा' पढ़ा गया, जिन्हें जोड़ा जाए तो बनेगा 'पहुँचा'। यह सब तब तक सार्थक लगता है, जब तक कि हम 'उस' तक नहीं पहुँचते, 'जिसे' उसे पढ़ा जाता है, और फिर शब्द 'पैसे' के साथ ही वाक्य-संरचना ढहने लगती है। वाक्य— 3 के अंत में 'रहना' के बहुवचन रूप 'रहते थे' का प्रयोग किया गया। यह एकवचन कर्ता 'दहोती' और 'उसे' के साथ परस्पर मेल नहीं खाता है। वाक्य— 4 में शब्द 'गाँव' फिर आता है और अब बच्चा उसे पहले से अलग तरह से पढ़ता है। अब अनुस्वार उच्चरित किया जाता है और दीर्घ स्वर 'आ' छोड़ दिया जाता है। वह आगे बढ़ता है और जब शब्द 'विवाह' आता है तो उसका पढ़ना डगमगाने लगता है। वह दो बार इस शब्द को पढ़ने की कोशिश करता है, पहले तो उसके टुकड़े करके और फिर दोनों हिस्सों को मिलाकर या पूरा शब्द पढ़ने की कोशिश करके। दोनों ही स्थितियों में शब्द बनता ही नहीं है। एक बार फिर वह 'हो' की बजाय 'है' बोलता है तो काल बदल देता है और 'रहा' को ध्वनित करने और मिलाने के असफल प्रयास करता है तथा अंत में 'था' की बजाय 'थ' बोलता है। वाक्य— 5 में भी वह इसी तरह बोलता है। दिलचस्प बात तो यह है कि वह शुरू के कुछ वाक्यों में आसानी से पढ़े गए शब्दों को अब बोलने में लड़खड़ाता है— 'देहाती' और 'दूध' ऐसे ही दो शब्द हैं। पाठ 'क' के वाक्य— 5 में वह 'विवाह' शब्द को पढ़ने के तीन असफल प्रयास करता है।

इस बच्चे के पठन के विश्लेषण से स्पष्ट दिखाई देता है कि पठन की आमतौर पर अपनाई गई उसकी रणनीति शब्द के हिस्सों को ध्वनित करने और फिर उन्हें आपस में मिलाने की रहती है और अधिकतर होता यह है कि इस रणनीति का अनुकरण करते हुए वह पाठ के सही शब्द तक नहीं पहुँच पाता, लेकिन हार माने बिना वह या तो उस गैर-शब्द पर ही रह जाता है या शब्द का कोई ऐसा रूप पढ़ता है जो हिंदी में स्वीकार्य तो है मगर वाक्य-संरचना के हिसाब से अनुपयुक्त है। वाक्य— 5 में 'सकेग' और 'उहे' और पाठ 'क' के वाक्य— 4 में 'वीह' इसी प्रकार के गैर-शब्दों के उदाहरण हैं। बच्चा अक्षरों और मात्राओं से अवगत है और वह इस ज्ञान का प्रयोग पढ़ने के लिए करता है, मगर विलगता (Isolation) में। यह अजीब लगता है कि वह इस ज्ञान का प्रयोग कहीं तो प्रभावशाली तरीके से करता है और कहीं इसका प्रयोग नहीं कर पाता है। इससे अंदाज़ा लगाया जा सकता है कि केवल लिपि-विज्ञान (ग्राफोफोनिक्स) का उपयोग आपको

पठन में बहुत दूर तक नहीं ले जा सकता है। इस मामले में बच्चा अपने हिंदी भाषा की वाक्य-संरचना के ज्ञान को अपने वर्णमाला के ज्ञान की सहायता के लिए सक्रिय तौर पर आगे नहीं ला रहा है। इससे भी अधिक महत्वपूर्ण है कि वह शायद यह नहीं जानता कि पढ़ना अर्थ के लिए होता है, इसीलिए यह पाठ के वैश्विक, व्यापक अर्थ को बचाए रखने का कोई प्रयास नहीं करता।

स्पष्ट है कि वह कुछ स्थानों पर सुसंगत वाक्यांश निर्मित करता है, लेकिन अन्य स्थानों पर अर्थ को पूरी तरह त्याग देता है और अंधाधुंध, अव्यवस्थित तरीके से शब्दों को ध्वनित करता है। वह पिछले वाक्यों में निर्मित अर्थ को आगे ले जाने या उसकी बुनियाद को पुख्ता करने के बारे में चिंतित नहीं है। हाँ, यह बात भी है कि आमतौर पर अधिकतर वृत्तांत भूतकाल में होते हैं और मुमकिन है कि अक्सर प्रयोग में आने वाली इस विधा की जानकारी के कारण यह बच्चा एक वाक्य से दूसरे में काल न बदलने के लिए प्रवृत्त रहा हो।

उसी पाठ के उसी खंड को एक बेहतर पाठक द्वारा पढ़ा गया तो तीन चूकें हुईं। बेहतर पाठक के लिए पठन-नमूना पाठ 'ख' के वाक्य— 2 में बच्चा 'दूध' के बाद शब्द 'एक' जोड़ देता है, लेकिन फिर वापस जाता है और 'दूध' से आगे का हिस्सा पढ़ता है, मगर इस बार बिना 'एक' शब्द के। पहले वाले पाठक की ही तरह वह भी वाक्य— 4 में 'विवाह' शब्द पर आकर लड़खड़ाता है, शायद इसलिए कि वह उतना अधिक प्रयोग में नहीं आता जितना कि उसका पर्यायवाची 'शादी'। वह दो बार कोशिश करता है, पहली बार 'वान' बोलते हुए, जो शब्द में किसी भी तौर पर नहीं है, फिर 'विहा' बोलता है, जिससे वह शब्द का थोड़ा-सा छोर पकड़ता है और अंततः वह शब्द को ठीक पढ़ लेता है। वाक्य— 5 में शब्द 'सकेगा' को पढ़ने में अनिश्चितता दिखाई देती है। स्पष्ट है कि यह बच्चा अपने पठन की निगरानी कर रहा है उस पर नज़र रखे हुए है और परिवर्तित तथा अनुचित वाक्य-रचना के प्रति सजग है। वह 'एक' शब्द को जोड़ तो देता है, मगर फिर तुरंत वाक्य को दोहराते हुए उसे ठीक करता है। उसका ध्यान एक ही समय पर कहानी की वाक्य-संरचना तथा निर्मित हो रहे अर्थ, दोनों पर है और वह शब्द के अक्षरों पर ध्यान देने की चुनिंदा रणनीति का प्रयोग करता है।

दोनों बच्चों द्वारा किए गए पठन के विश्लेषण में 'विवाह' शब्द दिलचस्प साबित होता है। कमज़ोर पाठक उसे पढ़ने के अधिक प्रयास करता है और ध्वनि के हिसाब से उसे उच्चरित करने के अधिक नज़दीक है। वह 'वी व ह' कहने तक तो आ जाता है, मगर

दुनिया के बारे में अपने ज्ञान को प्रयोग में नहीं लाता और उसका ध्यान लगातार शब्द को विभाजित करने और फिर मिलाने पर ही रहता है। पिछले वाक्यों का पठन उसे किसी भी तरह मदद नहीं करता, क्योंकि उसके पठन से कोई सुसंगत अर्थ नहीं निकलता है, इसलिए उसका पठन निरंतर ढहता चला जाता है। दूसरा बच्चा लगातार अपने पठन के अर्थ में नज़र रखता है और पथ में हटते हुए या चूक करते हुए भी अर्थ को बनाए रखता है।

निष्कर्ष

‘चूकों’ का विश्लेषण हमें यह समझने के लिए प्रेरित करता है कि बच्चे अपनी पठन-क्षमताओं के बारे में हमें क्या बता रहे हैं और किस तरह की सहायता की उन्हें ज़रूरत है। पठन की अवधारणा, यदि केवल इस रूप में हो कि इसके तहत शब्दों को मात्र ध्वनि देना है या यह लिखे हुए को उच्चारित करने का अभ्यास मात्र है तो शिक्षक के तौर पर बच्चों के पठन में सहायता की हमारी भूमिका सीमित रहती है। अधिकतर यही देखने में आता है कि जो बच्चे पठन के लिए संघर्ष करते हैं, उन्हें केवल वर्ण और मात्राएँ अच्छे से सीखने के लिए कहा जाता है (कौशिक, 2004), लेकिन यह सुझाव असल में पठन-प्रक्रिया की जटिलता को अनदेखा करता है। वह बच्चे को यह भी संप्रेषित करने में असफल रहता है कि उसे भाषा-संबंधी अपने संपूर्ण ज्ञान— उसकी वाक्य-संरचना, शब्दार्थ, वर्ण-ध्वनि संबंध को सक्रियता से एकीकृत करना होगा और इसका केंद्रीय लक्ष्य होगा— अर्थ-निर्माण के लिए पठन। हमें बच्चों द्वारा पठन के दौरान की गई गलतियाँ ठीक करने की अपनी भूमिका को फिर से परिभाषित करने की आवश्यकता है (ओवोकी तथा वाई गुड्मैन, 2002)।

मूल पाठ— देहाती की गाय

- | | |
|---------|--|
| वाक्य 1 | एक गाँव वाले के पास एक गाय थी। |
| वाक्य 2 | वह प्रतिदिन पाँच किलो दूध देती थी। |
| वाक्य 3 | देहाती दूध बेचकर उस पैसे से मजे से रहता था। |
| वाक्य 4 | गाँव के पास ही कहीं विवाह हो रहा था। |
| वाक्य 5 | लोग उस देहाती के पास यह पता लगाने आए कि वह विवाह के समय उन्हें कितना दूध दे सकेगा। |

पाठ 'क'—कमज़ोर पाठक का पठन नमूना

- वाक्य 1 एक गाव वाले के पास एक गया था ।
 वाक्य 2 वह पाँच पाँच की लो किलो दूध दिया देती है ।
 वाक्य 3 देहाती दूध पहुँचा कर उसे पै से पैसे से म जे मजे से रह ते हैं रहते थे।
 वाक्य 4 गं व गंव के पास ही कही वी व ह वीह है रह रह था।
 वाक्य 5 लोग उसे देह देहती के पास यह प ता ल ग ने लगने आया कि वह वह वी वीव ह वीवह से उ है उहे की त ने कितने डूर दे स के ग सकेगा।

पाठ 'ख'—बेहतर पाठक का पठन नमूना

- वाक्य 1 एक गाँव वाले के पास, एक गाय थी।
 वाक्य 2 वह प्रतिदिन पाँच किलो दूध देती है।
 वाक्य 3 देहाती दूध बेचकर उस पैसे से मजे से रहता था।
 वाक्य 4 गाँव के पास ही कहीं वान विहा विवाह हो रहा था।
 वाक्य 5 लोग उस देहाती के पास यह पता लगाने आये कि वह विवाह के समय उन्हें कितना दूध दे सके गा।

संदर्भ

- ऑकी, जी एंड गुडमैन, वाई. 2002. किडवाचिंग—डॉक्यूमेंटिंग चिल्ड्रेन्स लिट्रेसी डेवलपमेंट. हाइनमन, पोर्ट्समाउथ, एनएच.
 कुमार. के. 2009. व्हाट्स इज वर्थ टीचिंग?. ओरिएन्ट ब्लैक स्वान न्यू डेल्ही.
 कौशिक, एस. 2004. टीचर्स अजम्पशन्स अबाउट अलर्ली रीडिंग. अनपब्लिशड एमएड. डिजिटेशन यूनिवर्सिटी ऑफ़ डेल्ही. डेल्ही.
 गुडमैन, के. 1996. ऑन रीडिंग. हाइनमन, पोर्ट्समाउथ, एनएच.
 टील, डब्ल्यू एंड सलज्बी, ई. 1986. इमर्जेंट लिट्रेसी ऐज अ पर्सपेक्टिव फ़ॉर एग्जामिनिंग हाउ यंग चिल्ड्रन बिकम राइटर्स एंड रीडर्स. इन डब्ल्यू टील एंड ई. सलज्बी. इमर्जेंट लिट्रेसी—राइटिंग एंड रीडिंग. पृष्ठ vii-xxv नार्वुड एनजे. एबलेक्स.
 रोड्स. एल. के. एंड शैकलिन, एन. 1993. विंडोस इन्टू लिट्रेसी—एसेसिंग लर्नर्स के-8. हाइनमन, पोर्ट्समाउथ, एनएच.
 सिन्हा, एस. 2000. एक्वायरिंग लिट्रेसी इन इन्डियन स्कूलस. सेमिनार. वॉल्यूम 493, पृष्ठ 38-42.
 शंकर. 1999. देहाती की गाय इन मूर्खों का स्वर्ग. पृष्ठ 4-5 चिल्ड्रन बुक ट्रस्ट, न्यू डेल्ही.

टिप्पणी

बरखा

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् के प्रारंभिक साक्षरता कार्यक्रम के अंतर्गत बरखा क्रमिक पुस्तकमाला तैयार की गई है। बरखा में चालीस कहानियाँ हैं, जो पाँच कथावस्तुओं और चार स्तरों में विभाजित हैं। बच्चों में पढ़ना-सीखने की नैसर्गिक क्षमताओं को ध्यान में रखते हुए इस पुस्तकमाला का आधारभूत विचार है कि यदि बच्चे शुरू से ही समझ और मजे के साथ पढ़ें तो वे बहुत जल्दी पढ़ना सीख जाएँगे और सफल पाठक बन पाएँगे। क्रमिक पुस्तकमाला एक शिक्षाशास्त्रीय संसाधन है, जिससे पहली और दूसरी कक्षा के बच्चों को पढ़ना सीखने में मदद मिलेगी और उनमें ज्यादा से ज्यादा पढ़ने की लालसा जागेगी।





पढ़ना है समझना

स्कूली पाठ्यक्रम सूचनाओं और रटंत पाठों से इतने भरे होते हैं कि सिर्फ पढ़ने के लिए पढ़ने का आनंद कहीं दूर छूट ही जाता है। पढ़ने की संस्कृति के विकास के क्रम में वैयक्तिक पठन को प्रोत्साहित किए जाने की आवश्यकता है, और शिक्षकों को इस संस्कृति का हिस्सा बनकर स्वयं उदाहरण पेश करना चाहिए। इसके लिए स्कूल और सामुदायिक स्तर पर पुस्तकालयों को बढ़ावा देने की ज़रूरत है। यह मान्यता कि कथा-उपन्यास पढ़ना समय नष्ट करना है, पठन को हतोत्साहित करने का बड़ा कारण है। सभी स्कूली विषयों और स्कूल के सभी स्तरों पर पूरक पठन सामग्री का विकास और उनकी आपूर्ति की तत्काल आवश्यकता है।

- राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005

13174

विद्यया ऽ मृतमश्नुते



एन सी ई आर टी
NCERT

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

ISBN 978-93-5292-081-5